प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

आंगन गलियां चौबारे

प्रकाशक प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दिल्ली ११०००६
संस्करण प्रथम, १९८२
रामकुमार भ्रमर
मूल्य चालीस रुपये
मुद्रक श्याम प्रिंटस, दिल्ली ११००३२

CHAUBARE *(novel) by* Ramkumar Bhramar Rs 40 00

उपन्यास के मुख्य-पात्र अजित की आयु के चौबीस वर्षों मे विभाजित 'आगन, गलिया, चौबारे' का यह तीसरा खड 'चौबारे' उस दौर की कहानी है, जब राजनीतिक परिवतन ने पिछली व्यवस्था, परम्परा, मूल्यो और सामाजिक-ढाचे को लगभग तोड दिया है। नयी व्यवस्था का कोई चेहरा निश्चित नही हो सका। इस टूटन का दौर ही यह खड है।

—रामकुमार भ्रमर
५३/१४ रामजस रोड.

उपन्यास के मुख्य पात्र अजित की आयु के चौबीस वर्षों में विभाजित 'आंगन, गलियां, चौबारे' का यह तीसरा खंड 'चौबारे' उस दौर की कहानी है, जब राजनीतिक परिवर्तन ने पिछली व्यवस्था, परम्परा, मूल्यों और सामाजिक-ढांचे को लगभग तोड़ दिया है। नयी व्यवस्था का कोई चेहरा निश्चित नहीं हो सका। इस टूटन का दौर ही यह खंड है।

—रामकुमार भ्रमर
५३/१४ रामजस रोड,
करोलबाग, नयी दिल्ली ५

एक

" ये जो आदमी है ना—अजीब है । जीने की कोशिश करते करते जब असहाय होकर मरने तक आ पहुचता है और मोह के लिए कुछ भी नहीं बचता तो फिर मरने से ही मोह करने लगता है । "

यही तो बोली थी जया मौसी ।

हिल चुके दिमाग के बावजूद अजित सहसा स्थिरमति होकर उनकी ओर देखता रह गया था । अपने ही भीतर उसने एक गुनगुना उत्तर महसूस किया था—"हा, शायद ठीक ही है "

कितने लोगो के साथ यहा कुछ, बिलकुल इसी तरह घटते नही देखा है उसने ? मोह का कभी न टूटने वाला चेहरा । केशर मा, रेशमा, सुरगो, जमनाप्रसाद, सुनहरी, लकवे का मारा सिरीपालसिंह और टोपनदास मिन्नी और जया मौसी भी ।

सबके सब, अपनी अपनी तरह, इसी एक शब्द ससार मे भटकते टूटते और जुडते समझते रह ह कि जीवन जी रहे है उस दिन जब मिन्नी का खत आया था—एक अजनबी लडका चिट लेकर अजित के सामने आ खडा हुआ था, तब भी तो यही मोह था—

मिन्नी ने लिखा था—' अजित, जरूरी काम है । इसके साथ आ सकेगा क्या ? '

और अजित को लगा था कि जाना चाहिए । क्या मोह ही पैदा नही हुआ था उसके मन मे ? तब तक मिन्नी परायी हो चुकी थी । कानो की पत्नी। महीना बीत गये थे इस सच को । अजित सिर्फ यहा वहा देखता रहता था उसे । न उनमे बात होती थी, न एक दूसरे के विगत को जिलाना ही चाहते थे फिर भी वह पत्र और उस पत्र को लेकर अजित के भीतर एक घुमडता हुआ बादल । मिन्नी से मिले, उसके पास जाए ?

क्या ? मिन्नी थी कौन उसकी ? अगर कभी कुछ था भी तो बन्ना के घर जा पहुचने के बाद क्या शेष था ? कुछ भी तो नही।

तब मिन्नी ने अजित को ही क्यो बुलाया ? या अजित ही क्यो या आया उसे ? कोई उलझन आ पड़ी होगी या कोई बड़ी विपत्ति पर इस सबमे अजित ही क्यो याद आया ?

वही एक उत्तर—मोह।

यह मोह कोई और चेहरा लेकर इस खत के बाद भी पैदा हो जायगा किसी और के लिए किसी और तरह किसी और चेहरे मे ।'

कभी कभी लगता है कि मिन्नी थी ही मोहग्रस्ता। कब कब किसी न किसी मोह मे नही जकडी रही थी वह ? कभी बी० ए० कर जाने के मोह मे गर्वित और सक्सेना की शिकार हुई और कभी पिता की जीवन रक्षा के लिए किसी और की। या गृहस्थ बनने की कोशिश मे अपनी ही पर अब ? वह चिट्ठी को टकटकी बाधे देखता रहा था उसे लानेवाले छोकरे को भी। सोचा था—अब कौन-सा नया मोह जागा मिन्नी के भीतर ?'

यह सोचा ही नही था कि मिन्नी को लेकर इतना सोचना भी किसी मोहवश है अजित के भीतर ?

फिर यही एक घटना तो नहीं थी। न ही कहानी का पूर्ण मिन्नी से मिलकर भी लगा था कि यू ही बुला लिया उसने। बोली थी, ' कई दिनो से तू बहुत याद आ रहा था। सोचा था कि तुझे बुलवा लूगी। कुछ वक्त अपने लिए, अपनी तरह जी कर काट दूगी ।'

पर सच था कुछ और। सच था—एक बार उस खोये हुए का पुन जुटाना, जो पिछले मोहो के फेर मे मिन्नी से विलग हो गया था

पर वे सब बाद की बातें।

मिन्नी की कहानी सुनाते सुनाते जया मौसी की बात पर जया मौसी को ही कुरेदने का मन हो आया था दिवाकर शर्मा को दिल का दौरा पडने के बाद क्या हुआ था—यह अजित का जानना है ग्वालियर जैसे कस्बनुमा शहर से निकलकर बम्बई के लुभावन ससार मे दिवाकर एक तीसरा पात्र था सुरेश और जया मौसी के बीच। बेहद ताकत-

वर और बेहद कमजोर। यहा तक सब कुछ जान चुका है अजित। आगे ?

आगे भी बहुत कुछ होगा इतना कि शायद, पिछला कुछ भी उतना नही है। वह सब जानना होगा। ये जो जी० बी० रोड का जिस्म-फरोश कोठा है—यहा है जया मौसी। पर कैसे ? बम्बई से दिल्ली की यात्रा तक एक लम्बी कहानी उस कहानी का भी मोह !

'चालीस पार करके उम्र का यह दौर भी क्या कम मोहग्रस्त है ? लगता है पिछले सबसे कही ज्यादा मोहग्रस्त।

जया मौसी और मिनी के साथ साथ विगत मे जितनी छुटपुट कहानियां, घटनाएं या पात्र बिखरे हुए हैं उन सबके लिए मोह महसूस करता है अजित। वह सब बटोर रखना भी एक मोह। उस सबको कागज पर उतारना दूसरा मोह ! और क्या यह सच नही कि इस सारे मोह का एक निष्कर्ष—मोह कहानी लिखना भी है। कहानी लिखकर रायल्टी पा जाना भी पाते रहना भी ?

इसी मोह ने कोठे का निरतर यात्री बना दिया है अजित का। हो सकता है कि किसी दिन पत्नी पूछ बैठे, 'तुमने इतना कुछ किया है जीवन मे, ढेर-ढेर घटनाओ और कहानियो से गुथा है तुम्हारा जीवन ? तब यह नयी कहानी किसलिए शुरू कर दी है ? कहानी की यह खोज कही तुम्हे ही न डुबो बैठे ? यही एक डर।

उसके अपने मोह हैं। ये मोह किसी दिन चुप को आवाज दे सकते हैं अजित जानता है।

फिर भी इस बस्ती मे आना नही रोक पाता। जया मौसी जो है यहा। इस कोठे पर रहकर भी मोहग्रस्ता। अपनी बहन की बेटी की वह कहानी जानने के लिए व्यग्र, जो उसके गृहस्थ-जीवन मे घटी ! कैसी विडम्बना ! समाज गृहस्थ जीवन के पूरे एक ससार समुदाय से तिरस्कृत बहिष्कृत होकर भी जया मौसी के भीतर उस सबके लिए न सिर्फ मोह जिदा है बल्कि वहा भी मिनी को लेकर वही दर्द महसूस कर रही हैं जो समाज मे रहकर करती !

क्या है यह ? क्यो ?

सुना पढ़ा है कि स्वार्थवश ही मोह जनमता है। यह स्वार्थ का भी सत्य मोह का भी।

पर मिन्नी को लेकर जानने की इच्छा? इसमें कैसा स्वार्थ होगा जया मौसी को? जिस कारण मोह जनमा है।

शायद दुख। दुख बटोरने का स्वार्थ। खुद ही तो कहती थीं, ' ये जो आदमी है ना—अजीब ही है। मोह के लिए कुछ नहीं बचता तो फिर मरने में ही मोह करने लगता है? "

इसी मोह में पड़कर तो कहानी से कहानी का सौदा किया था जया मौसी ने? अपनी कहानी के बम्बई से दिल्ली के जी० बी० रोड तक आ पहुंचने की बात छिपा रखी थी। तुली नाम की उस बच्ची की कहानी भी छिपी हुई थी जिसके नाम के साथ स्कूल रजिस्टर में मां की जगह जया मौसी दर्ज हैं और पिता की जगह दिवाकर शर्मा? सो कैसे?

पर कहानी को बिना दाम दिये कहानी पायी नहीं जा सकती थी!

मोह सत्य के जाल को स्वीकारते हुए बड़ी आत्मीयता से पूछने लगी थीं — हां, फिर और मिन्नी के विवाह का फाड तो कहानी का एक पूरा हुआ ना? आगे?" और आगे सब कुछ कह सुनाने के लिए बाध्य हो गया था अजित। या यों कि बरसों बाद ही सही वह सब सुनाने का दर्द जुटाना भी एक मोह था—उसका अपना मोह।

कहा था, मौसी! उस दिन मैं सहसा विश्वास ही नहीं कर पाया था! फाड पाकर थोड़ी देर के लिए हकबका गया था। "

हकबका जानेवाली बात थी!

मिन्नी—वही मिन्नी जो कभी कहा करती थी "कौन करेगा मुझसे शादी? सब तो जानते हैं कि मैं घाटपाण्डे के यहां जा चुकी हूं?" यही तक क्या? वह तो जैसे सारी टीस दबाकर उस हद तक भी बोल गयी थी कहीं रंडिया भी शादी किया करती है? "

अजित बौखलाकर चुप हो रहा था। कितने कितने अवसर नहीं

आये थे ऐसे चुप के ? सबने अपनी-अपनी तरह, अपने ढग से गणित के हिसाब लगाये। कभी सामनेवाले को चुप कर दिया और कभी खुद चुप हो गये।

बटनिया, रेशमा, सुनहरी, मोठे बुआ कितने तो हैं ? सब इस महागाथा के मच नट ।

खुद अजित भी और ये सारी महागाथा इन्ही संवेना सजोये चलती है। इसलिए मिनी की कहानी पहले।

बहुत दिना तक मिनी अनिणय मे झूलती रहती थी। अजित को लगता था कि विवेक जरूर उसका साथ देगा । एक वह दिन कैनों को अपने दिमाग से बरसात मे लगी मकडे की जाली की तरह एक झटके म ही उछाल फेंकेगी। पर भावुकता साबित हुई थी अजित की। एक दिन रात नौ बजे के बाद मोठे बुआ छोटे बुआ उस जगाने आ पहुचे थे इतनी रात कभी नही पुकारते, पर उस दिन बडा शोर मचाया था दाना न अरे पडीत। अभी से सो गया क्या ?"

उपन्यास एक ओर रखकर अजित गैलरी म आ पहुचा था, 'क्या बात है ?" कुछ परेशान था

"जरा नीचे आ !" मोठे ने कहा था।

' पर बात क्या है ?" अजित उतावला।

नीचे आयगा तभी तो कहेंगे कि इधर से ग्रामाफोन की तरह बजने लगें ?"

अजित नीचे जा पहुचा था।

छोटे बुआ ने कहा था—' तेरे लिए ये कारड है। " फिर उसने हाथ के तीन निमत्रण पत्रो मे स एक अजित की ओर बढा दिया था। तीना बिजली के पोल के नीचे आ पहुचे थे। अजब से कौतूहल मे भरकर अजित ने कार्ड निकाला था लिफाफे मे ! चौंक गया था। करनामल वेड्स मीनाक्षी ।

जल्दी जल्दी मैटर पढ गया था। फाड था, पार्टी था। शादी तो सुबह हो चुकी। गहरा धक्का लगा था अजित को। उदास हो गया। अपन को सभालकर पूछ लिया था, "ये तुम लोगो को किसने दिया ?"

"सब बतलायेंगे पर चलन था है क्या ? हम लोक बिदर ही जा रह हैं।" मोठे बुआ ने कहा था। अजित ने देखा। मोठे बुआ ने साफ-सुथरा पेंट और धारीदार आडिया लकीरोवाली बनियाइन पहन रखी है। गेले म रूमाल। एकदम गुण्डे की वेशभूषा ! छोटे साधारण सी पेंट और सफेद बुशशट पहने हुए है। शालीन।

अजित तय नही कर पा रहा था। पर मन एकसाथ ही गुस्से, चिढ और दुख से भर उठा है।

'चल ' छोटे बोला था, 'अब बेचारी अपन महल्ले स ता गयी। किसकी विदायी ही कर आयें। '

'तून खाना तो नही खाया ना ?" माठे का प्रश्न।

"नही। पर यार, मेरा मन नहीं होता !' अजित न ऊबते हुए कहा था।

जोर से हसा था माठे बुआ। मोटा पट उसस कही ज्यादा जार से हिला। ऐस जस भगान मे पानी झकझोर डाला हा किसी न। खदबदाते शब्दो मे बोल पडा था, "क्यो क्या माशूक का गम हो रहा है तेर का ? पन चिन्ता मत कर पडीत ! तुझ पर हमेशा ही छोकरियो क छत्ते रहग ! तेरा शुक्कर जारदार है। "

अच्छा नही लगा था अजीत का। पर जवाब नही दिया।

छोटे न दबाव दिया था, चल यार, किसने मेरे को कारड देते वखत तेर लिए भौत भौत बोल दिया था। चल। बुरा मानगी बेचारी ! आखीर अपून लाक किसके साथ के है।'

हा हा चल। " माठे न हाका दिया।

अजित ने कहा था तुम रुको। आता हू '

इसमे खाने का लिखा है।" छोटे ने बतला दिया था "अम्मा को बाल देना—देर से आयेंगे अपून लोक !"

अजित ऊपर पहुचा। बटनिया सीढिया के पास ही घबरायी खडी

थी। मोठे इतनी रात को बुलाये तो किसी न किसी तरह का घोटाला होगा। उसका नाम एक अज्ञात खतरे की तरह है लोगों के दिलोदिमाग में। पूछा, "क्या बात है ? किस लिए आये हैं ?"

"एक पार्टी में जाना है। शादी कर ली है मिन्नी ने" जल्दी-जल्दी कमीज बनियाइन उतारते हुए अजित बुदबुदाया था।

वह भौचक्की-सी खड़ी थी।

अजित ने कहा था—"केशर मां को बतला देना। खाना उधर ही खाऊंगा।"

'पर कित्ती देर लगेगी तुझे ?' "चिंतित भाव से बटनिया ने सवाल किया था। अजित ने एकदम चिढ़कर देखा था उसे—"कितनी भी देर लगे तुझे क्या पड़ी है। पूंछ की तरह मेरे पीछे लगी रहती है एकदम। क्या कर रहा हूं, क्या कर रहा हूं, कहां जा रहा हूं फालतू में। इत्ती क्यों चिपकती है ?"

बटनिया की आंखें छलछला आयी थीं। कुछ न कहकर होंठ भींचती लौट गयी।

अजित जल्दी जल्दी कपड़े बदलकर नीचे उतर आया था। तीनों चले तो गैलरी पर केशर मां चिल्लायी थी, 'कौन-कौन जा रहे हो ?"

"मैं हूं अम्मा !" छोटे बोला था, "दादा है, अजित है। वहां बहुत-से लोग होंगे !"

"अच्छा-अच्छा !" केशर मां आश्वस्त हुई थी, "छोटे है। ठीक है।"

वे जल्दी-जल्दी गली पार कर गये थे।

मोठे बुआ ने कहा था—"यार अजित। ये तेरी बुढ़िया मेरे को ऐसे समझती है कि मैं यमदूत हूं। जिसको साथ ले जाऊंगा, वो सीधा सुरग चला जायेगा।" वह हंस पड़ा था।

अजित ने जवाब दिया 'नहीं ! उन्हें मालूम है कि तेरे साथ जो जायगा वह स्वर्ग नहीं, सीधा नरक जायेगा !"

"अच्छा-अच्छा ! नरक ही ठीक।" मोठे हंसता गया।

छोटे ने गंभीरता से कहा था, " जो भी हो पंडीत। मिन्नी थी

अच्छी लौंडिया। किसको सब साथवाला ने तग किया, पर किसन सबका बुलाया। "

अजित जवाब नही देता। सिफ सोच रहा है कनो का लेकर आखिर कैसा जादू किया उस सिधी न। अब भी विश्वास नही होता। मिनी जैसी चोट खायी लडकी फिर से चोट खा गयी ? पर जरूरी तो नही है कि चाट ही खाय ?

वही दिन था जब मिनी से भट हुई थी लम्बी घण्टे भर के साथ की भेंट। फिर अर्से तक नही हुई। सिफ उडत उडते देखता था उस। या फिर उसे लेकर उडती उडती बातें सुनता।

कुछ दिना गहना से लदी फदी दीखती थी। कनो ने ग्वालियर टाकीज के पास एक घर ले लिया था किराये से। तभी ले लिया था, जब शादी हुई। पार्टी भी उसी घर म दी थी। अजित ने वह घर सिफ दा बार देखा। पार्टी म और एक बार तब, जब मिनी की चिट लेकर एक अज नबी लडका उस बुलान आया था। चिट पर लिखा था—

' अजित जरूरी काम है। इसके साथ आ सकेगा क्या ?

—मिनी"

अजित स्तब्ध हो गया था उस दिन। मिनी को ऐसी क्या जरूरत पड गयी उसकी ? जब तक अजित काम की तलाश म धक्के खाता घूम रहा था। पैस पैस के लिए तग।

यह चिट पान के बाद बहुत अर्सा नही गुजरा था। यही कोई साल-सवा साल। चिट पान स पहले कोई सात आठ माह से मिनी बाजार म नही दिखी थी। एक बार मोठे बुआ ने बतलाया था— 'तुझे मालूम है पडीत। उस बचारी मिनी का वह हरामजादा भौत तग करता है। "

' कैस ?" अजित ने चौंककर पूछा था।

' कहते हैं उसके घर पै ले जाकर लोगो को दारूबाजी करवाता है।

लोक गन्दे गन्दे मजाक भी करते ह बिससे । " मोठे बुआ न सहानुभूति के साथ कहा था, सहसा उस सहानुभूति पर अपना वास्तव्य लाद दिया था, "वैसे बिस स्साली को भी क्या फरक पडता हायेगा ! बिसके लिए येईच् जिन्दगी । "

हमेशा की तरह बहुत गभीरता से नही लिया था माठे बुआ का । वह हवाई वातें सुनता था, ज्यादा पर लगाकर सुनाता था । अजित न बात दरकिनार कर दी थी । असल मे लगता था कि मोठे बुआ का जो वग है, उसमें हर चीज का उनकी अपनी फूटी आख से ही देखा जाता है । कनो करता ह ठेकेदारी पढ लिख भी गया है । चार लोगो को बुलाता होगा, खिला पिलाकर काम निकालता होगा । ये भुनगे अपन दिमागी भिन भिन से भिनभिना रहे ह ।

पर जाने क्यो, उस दिन वह एक लाइन की चिट्ठी पाकर लगा था कि कोई गडवड है । जिस अजित को एक तरह से मिन्नी भूल ही चुकी थी, वह अनायास कैसे याद हो आया ? क्या ?

उस एक सवा साल म ही बहुत कुछ बदल चुका था । गली, पात्र, घटनायें, कहानिया गणित ! कितने ही मीजान सही हुए ये, कितने ही गलत । ऐसे गलत कि एकदम बिखरकर रह गये थे ।

खुद अजित को ही लगता था कि उसका अपना गणित गडबडा रहा है । लेखक होना, एक ओर हा गया है—भूख महत्त्वपूण हो उठी है । काम-काम । केशर मा घर पर आन जानवाला स आये दिन कहती थी "इस अजित को कही ठिकाने लगा दो । " एक वार बहन बहनोई आये तो उन्होंने कहा था, 'देख कमला । अगर तू चाहती है कि तेरा मायका बना रहे ता इस मरे को सम्हाल । " फिर वहनोई की ओर मुडकर बोली थी, "लाला, तुम्हे अगर अपनी ससुराल बनाय रखनी है ता इसे किसी काम दद से लगाओ । वरना समयना कि एक घर मिट गया !

अजित दुखी होता, चिढता, अपमानित भी महसूस करता, पर बहस नही करता । वह भी हर चेहरे की ओर इसी आशा से देखता कि हो सकता है, वह चेहरा उसकी सहायता करे । सिफ डेढ सौ रुपये माहवार का काम दिलवा दे फिर अजित अपने गणित का सारा विखराव सम्हाल लेगा !

छोटे बुआ सिंचाई विभाग में क्लर्क हो गया था। बहुत कम मिलता। कलम बनर्जी कालिज छोड़ चुका था। लोग सहानुभूति करते। फस्ट क्लास कैरियर का साइंस स्टूडेंट कविता साहित्य के फेर में कालिज छोड़कर 'रेल डिब्बे' में समाजवाद या साहित्य पर भाषण करता रहता। यहां-वहां भटक कर अजित भी पहुंच जाता। कुछ वक्त काट लेता। रात लौटकर चुपचाप बिस्तर पर लेट रहना

टोपनदास की आंखों से ज्यादा कीचड़ बहता। भागवती दौड़-दौड़कर घर सम्हालती। टोपनदास अक्सर बीमार पड़ा रहता। भागवती रोज सुबह शाम दोनों देवरों से कौड़ी-कौड़ी हिसाब वसूल किया करती। गली-मुहल्ले के घरों में सम्बन्ध बनाया करती। गोबर दान में मुहल्ले के घरों में राजनीति करती। एक दिन के गोबर का रेट चार रुपये से बढ़ाकर छह रुपये कर दिया था। उसका कसा बदन ज्यों का त्यों था। मोठे कहता, "ज्यादा नसीली हो गयी स्साली!"

रश्मा के घर में बैजापुरकर विदा हो चुके थे। पर मुहल्ले से नहीं। शंकरराव बीमार रहता था। अनसूयाबाई रोज पीपल की पूजा करती। रश्मा बीच में तीर्थ कर आयी थी। कभी कभी बीमार भी रहती। बहन-बहनोई की सेवा के लिए बुला लिया था। मन्दिर में शिवजी अपूजित पड़े रहते। यदा कदा मुहल्ले का कोई आस्थावान पूजा कर जाता। बच्चे भीतर मन्दिर तक घुसकर अण्टे खेला करते

बहुत परिवर्तन कुल एक साल और सिर्फ परिवर्तन।

केशर मां ज्यादा बीमार रहने लगी थी बटनिया का ब्याह हो गया। रात अजित जब यहां वहां से ऊबा थका लौटा करता तब अनायास ही मन होता कि बटनिया दिखे आकर पूछे रोटी परोस दूं तेरे लिए?'

पर नहीं थी वह।

अजित आता। उखड़ा हुआ सा थोड़ी देर बैठ रहता, फिर खांसते-खांसते केशर मां की आवाज सुनायी पड़ती, आ गया क्या? '

अजित कहता, हां!"

'ठूंस आया कि ठूंसेगा?"

अजित दुखी हो जाता। जवाब नहीं देता। अभी जवाब देगा और

कहा-सुनी हो जायेगी। दस बातें सुनायेंगी। अपना और अजित का सोना हराम कर देंगी।

केशर मा बडबडाती, "अगर न खा आया हो तो चौके मे से उठा ले। आम का अचार ले लेना। पालक की भाजी रखी है।" आवाज धीमी हो जाती, "आज सवेरे सहोद्रा बना गयी थी। तू आया नही तो सब ज्यो की त्यो रक्खी है। "

अजित थोडी देर भुनभुनाया हुआ बैठा रहता फिर भूख जार मारती। उठता और खाना परोसने लगता।

बटनिया बहुत याद आती थी पल पल लगता था कि कुछ खो गया है। क्या? सहसा समझ नही आता। बिस्तरे पर लेटते ही उसका अभाव खलने लगता है कितनी कितनी बार हल्की सी झपकी के बाद जाग नही जाता था वह? लगता कि पास ही खडी है--पूछ रही है, "रोटी परोस दू तेरे लिए?"

बहुत धीमे पर कही अजानी जगह स हल्की टीस उठती थी अजित के भीतर। इस टीस मे धुए का सा एक गुबार होता बटनिया की याद का धुआ!

अजित की नीद टूट जाती।

उस हरदोई वाले लडके को लेकर अजित मन ही मन किस तरह और कितना कसमसाया था! शुरू-शुरू म जब वह बटनिया से बात करन आया तब अजित न पहली बार देखा था इसी आगन मे और फिर दूसरी बार तब जब सिर पर मौर रखे, झगा पहने हुए द्वाराचार के लिए आ खडा हुआ था।

सारा महल्ला एकत्र था। बटनिया से उम्र मे भी पाच सात साल बडा होगा। शक्ल सूरत तो मन म घिन लाती थी। अजित जबडे कस हुए एक ओर खडा था बटनिया ऊपर। आठ दिनो से हल्दी चढ रही थी बटनिया पर। रोज तेल मालिश होती, हल्दी का उबटन किया जाता। बटनिया का गुलाबी रग इन आठ दिना मे ही कुछ ज्यादा उजला होकर चमचमाने लगा था।

पर हरदोई वाले क चेहरे बदन पर हजार दिन हल्दी चढती मालिश

होती तो भी फर्क न पड़ता। कैसे पड़ सकता था? खूब काला जो था वह। केशर मां बोली थी, "लड़का सांवला भले हो, पर छवि है चेहरे पर। "

'खाक छवि। " सुनहरी ने कहा था, "भइया बाप लड़की के लिए घर बार देखते हैं, कुल समाज देखते हैं, पर यह नहीं देखते कि शक्ल-सूरत भी होनी चाहिए। बेचारी बटनिया तो है गौ। जिधर बांध दोगे या हलाल दोगे चली जायेगी पर लड़की के मन पर क्या बीतेगी!"

उस दिन अजित को बहुत, बहुत अच्छी लगी थी सुनहरी। कभी कभी झूठ में सिर से पैर तक रंगा रहा आदमी भी सच बोलता है। कैसा लगता है? चौंकाता ही नहीं है, पल भर के लिए सही, पर श्रद्धा बटोर लेता है।

और बटनिया पराया हो रही थी द्वाराचार की सारी रस्म निबाही जा रही हैं। अजित ने मोठे बुआ के कन्धे पर रखा अपना हाथ हौले से कस कस दिया था उसे पता ही नहीं। असल में अजित अपने-आपको भी तो उसी तरह कस रहा था बटनिया के मन बदन का अन्दर तक जाना-देखा है अजित ने अब उसी बटनिया को यह भद्दे चेहरे वाला आदमी बांहों में भरेगा। किस तरह कांपकर रह जायेगी? शायद मुंह छिपा कर एक पल के लिए सांस भी मूंद ले।

पन्डीत। ' वह चौंक गया था। देखा, मोठे बुआ कन्धे पर रखी उसकी कसी हथेली को ढीली कर रहा है। पूछता है, क्या हुआ तेरे को?'

नहीं। कुछ नहीं।" अजित ने हथेली हटा ली। आवाज भर्रायी हुई थी।

मोठे बुआ ने कहा था अरे, स्साले। रोता है?"

अजित ने उसे गुस्से से देखा जैसे कहा हो "मैं तुझे रोता दिख रहा हूं?

छोटे ने सहानुभूति से कहा था, 'रोनवाली बात है यार। सचमुच बहुत जुल्म हो रहा है छोकरी पै। "

अजित ने एक गहरी सांस ली।

'देखो तो इस स्साले सूअर का मुह लगता है कि अभीच घाडे स उतर के नाली मे मुह डाल देयेगा। दख, कैसा भाडा है ?

अजित सचमुच ही रुआंसा हो गया। बेबसी स अपन पर ही गुस्सा हाता हुआ। उस दिन बटनिया को ले गया हाता ता यह सब क्यो दखना पडता ? पर अजित करता क्या ? घर में रहकर तो डेढ सौ माहवार का काम मिल नही रहा है—बटनिया को साथ ले जाकर क्या भूखा मरता ! उसन अपने को ही थप्पड मारकर चुप कर दिया था।

पर इस दद का चुप कैस कर ?

और अजित का यह हाल है तो बटनिया पर क्या बीत रही हागी ?

चार दिन पहले से बटनिया ने अजित की आर देखना, बोलना बन्द-सा कर दिया था। अजित वाला कमरा ही बटनिया के लिए ले लिया था चन्दनसहाय न। वही गुमसुम बैठी रहती थी। मालिश उबटन के बाद व्यथ ही बन्द कमर मे खामोश या तो लेटी रहती या फिर दोना घुटना म सिर दिय ओघती रहती।

महल्ले में हमजोली लडकिया थी नही। या ता बहुत छोटी थी या बहुत बडी। विवाहिता बच्चा वाली। बटनिया के भाई बन्दो मे ऐसा कुछ नहीं था कि विवाह मे चार दिन पहले से आ जायें। सच तो यह था कि चन्दनसहाय न इतन सम्बन्ध ही नही रखे थे किसीसे। थे तो सतही थे। उतन ही सतही ढग से आने वाले थे। सब शादी के दिन आ रह थे। दूसरे दिन चले जायेंगे।

बटनिया दिन म एक दो बार औरतो के बीच होती। यही कोई घटे-दा घटे। बाकी वक्त अकेली।

अजित अनचाहे ही बार-बार उस कमरे की आर जा निकलता। जान-बूझकर। चाहता कि वह बात कर। बात करन के लिए कुछ भी न हो, तब भी इधर-उधर की बातें करे। पर वह चुप। दा दिन पहले पागलो की तरह भनक गयी थी वह। हैरत मे था अजित। बटनिया और गुस्सा ? अजित बाल चलाता इधर-उधर देखता, फिर थूक निगलकर कहता, "बटनिया! अब तू कभी कभी ही आया करगी—क्यो ?"

वह सिर को उसी तरह घुटनों में दिये रहती। अजित बैठा होता सन्दूक पर। सकपकाया हुआ सा। अपने भीतर बहुत सी बातें बटोर लाता था पर बटनिया के सामने आते ही सब कुछ भूल जाता। उलट सुलट बोलने लगता। ऐसा जिसका, अगली पिछली बात से कोई सम्बन्ध न हो।

'सुनते हैं कि हरदोई ग्वालियर जितना नहीं है, पर ठीक ही है।' अजित कहता।

बटनिया चुप। सिर उसी तरह घुटनों में।

तू मुझसे गुस्सा है? अजित सवाल करता। फिर बतुका।

बटनिया के सिकुड़े सिमटे जिस्म में एक सिरहन होती।

अजित उदास स्वर में कहता 'मैं जानता हू, तू गुस्सा है।"

'असल में बटनिया, ब्याह एक संजोग, होता है। " अजित एकदम बेतुकेपन से बात फिर शुरू कर देता। हथेलियां मसलता हुआ जैसे जल्दी जल्दी शब्द खोजकर बड़बड़ाता, केशर मां कहती हैं कि जिस लड़के लड़की का जहां लिखा होता है वही डोर बंधती है अपने चाहे क्या होता है?'

बटनिया ने हौले से गरदन उठायी थी—अजित को देखा। अरे, रो रही थी सिर छुपाये? अजित ने एकदम से कहा था, 'अरे, पगली। तू रो रही है?'

"नहीं, हंस रही हू—हा हा हा। " बटनिया एकदम जोर से, इतनी जोर से कि सीढ़ी पार आवाज चली जाये, खिलखिलाकर बोल पड़ी थी। अजित बुरी तरह डर गया, घबराकर उठा और बाहर तक देख आया—किसी ने सुना तो नहीं? फिर आश्वस्त होकर वापस आ बैठा। कहा था, 'पागल हो गयी है तू? मुझपर क्या झल्लाती है? मैं तो तुझसे अच्छी तरह बात करने आया हू और तू है कि "

'मैंने बुलाया था तुझे? ऐं? मैंने बुलाया था? बोल। ' वह उसी तरह रोती, गुस्सा होती चिल्लायी थी, "क्या मेरे पास आता है? तुझसे मेरा क्या मतलब? मैं तेरी कौन होती हू? क्यों चिपकता है मुझसे?'

अजित बुरी तरह घबरा गया। माथे पर पसीना चुहचुहा आया। यह

क्या हो गया इसे ? इतना गुस्सा हो सकती है—पहली बार देख रहा है अजित।

बटनिया ने कहा था,"अच्छा ! तू जा यहां से। चला जा। " वह रोते हुए फिर बोली थी। वही तडप, वही धिक्कार, वही तेज़ी।

अजित एकदम बिगड गया था, ' हां हां, जाता हू समझती क्या है ? मैं अच्छी तरह बात करने आया हू और वह है कि काटने दौड रही है ? "

"हा अ। मैं काटने दौड रही हू ! पागल हो गयी हू मैं ! जानवर। " अचानक उसने अपनी धोती को एक झटके म मुह मे लेकर फाड डाला था, "हा, काटने लगी हू मैं—ऐसे। तुझे भी काट खाऊगी !"

चिरर ! धोती फट गयी है। बटनिया विद्रूप हो गयी है। रोती है, गुस्से से सुख हो चुकी है

अजित के पैर कापने लगे है। ओह ! पागल हो रही ह बटनिया। कपडे फाडने लगी ? एकदम भाग खडा होता है बाहर। जी करता है चीखकर कई लोगो को बुलाय, "अरे-र ! देखो तो बटनिया को क्या हो गया ? " पर नही कहता। थूक का घूट निगलकर सिटपिटाया हुआ कमरे के बाहर वाले बरामदे मे खडा रहता है। भयभीत।

बटनिया रोने लगी है। हिचकिया ले ले कर

बडबडाती है, " तू मत आया कर। क्या आता है मेरा मास नोचने। मत आया कर !"

अजित का मन भी रोने को हो आया है पर रोता नही। मद रोते हैं क्या ? चला जाता है।

तीन दिन हो चुके है उसके बाद बटनिया के सामने जाने का साहस नही हुआ। पर साहस न होने से बटनिया भूली जाती है क्या ?

रोज रात, तब तक जागता रहता है, जब तक कि बटनिया को लेकर महल्ले की औरतें गाना गाती हैं, नाचती ह छत से चोरी छिप देखता है अजित। छोटा था, तब औरतो के बीच जा बैठा था। खूब खूब नाच देखता था पर अब चोरी छिपे देखना होता है इस तरह कि कोई देख न

ले। अजब सी गुदगुदाहट महसूस होती है कितनी कितनी उम्र की औरत नाचती हैं ? ऐसे-ऐसे मजाक करती ह कि बस।

अजित अक्सर देखता है कभी बटनिया उनके बीच होती है, कभी थककर अजित के कमरे म सो चुकी होती है

पर औरतें नाचती गाती रहती हैं। ढोलक लेकर सुरगो बैठती है केशर मा एक ओर। फरमायशें होती है नाम बोल जाते है

'अब मैनपुरीवाली नाचेगी! उठ, नाच जरा।"

और मैनपुरीवाली उठती है। थुलथुल स्तनो का आचल से ढककर औरतो के बीच की छोटी सी जगह पर घूम झूमकर थिरक थिरककर नाचती है विद्रूप-सा नाच। लगता है कि हिजडा नाच रहा है।

पर इसका भी एक मजा! फिर सुनहरी फिर खुद सुरगो, फिर बदनसिंह की घरवाली और फिर वैष्णवी

कुछ का देखकर अच्छा लगता है—कुछ को नही। हर शादी में कुछ इसी तरह रस लेता ह अजित। पर बटनिया के व्याह म रस नही लगता है कि रिस रहा है बार बार रस-महसूसन के बीच याद हो आता है कि यह सब बटनिया को विदा करने के लिए हो रहा है। कभी ठुमकते गीत होते है कभी बेहद उदास, ददभरे

और फिर बटनिया की विदा तिथि आयी। बारात ठहरी थी धर्मशाला मे। सुबह सबेर से ही दहेज का सामान लदकर चला गया था। बटनिया सजायी सवारी गयी थी। आगन से अजित को कई बार चन्दन-सहाय ने बुलाया था 'अरे अजित! क्या कर रहा है तू ? आजा भाई! कम से कम उसके साथ धरमशाला तक तो चला जा! "

अजित लेटा हुआ सब कुछ सुनता रहा था। नही! नही जायगा! जा नही सकेगा! जोर से कान मूद लिए थे उसने। आखे बन्द।

केशर मा न भी टहोका था, 'कैसा मुरदा बना पडा है रे! आज बेचारी अपने घर जा रही है कित्ता ख्याल रखती थी तेरा ? उसे घर-बाहर छोडने भी नही जायेगा ? उठ्—चल!"

नही मा! " करवट बदल गया था अजित, "मेरे सिर म जोरो का दद है।" कठिनाई से उसने रुलायी थामते हुए बहाना कर दिया था।

'तेरी मरजी ! पर बुरा लगता है। क्या सोचेगी बचारी ?" बड-बडाती हुई केशर मा आगन मे चली गयी थी।

नीचे आगन मे अजब सा सन्नाटा है स नाटे को चीरते कभी च दन-सहाय के चीखन और कभी महल्ले के लडका की आवाजे आती ह

"अरे, बारातवाला का कलेऊ[1] गया कि नही ?" चन्दनसहाय चीखता है।

"जा रहा है अभी जा रहा है। बस जरा रायता बन जाये। " बडदत्ता का गला बैठ गया है। सात आठ दिन से इतनी चीखी चिल्लायी है कि अब आवाज सप्तम पर शुरू करे तो द्वितीय मे निकलती है।

"तुम तो हद ही करती हो बटनिया की भाभी। वे बेचारे क्या कहेगे ?—" च दनसहाय बडबडाता है, ' अच्छा, देख लो, दहेज का कुछ रह तो नही गया ? अच्छी तरह देखभाल लो कमरा। "

मोठे बुआ गरज रहा है "छोटे। अबे ओ, महेस ? "

"काय दादा ?—" छोट का स्वर।

"तुम लाक को बोला था ना, य पलग स्साला तीन घट से इदर ही पडा है। इसको पहुचाओ। जल्दी !'

"पन दादा ह्या पलगाला दोन मानूस "

'हा, दादा। इसे ो आदमी नही उठा सकते !"

'अरे, तो विसको—क्या केते ह—शामलाल भइया को बुलाओ ! जल्दी !" मोठे की बडबडाहट।

बटनिया कहा है ? अजित फिर से करवट बदलता है। अजित के कमरे से तो रात मे ही उतरकर अपने घर जा पहुची ? पता नही कब ? अजित फिर करवट बदलता है।

"बिसको—अजित को बुलाओ। ओ स्साला काम के बखत किदर घुस गया ?" मोठे बुआ चिल्ला रहा है।

और छोट पुकारने लगा है, "अजित। प डीत ? प डीत ? "

अजित उठता है। फिर लेट जाता है। ज्यादा उदास।

१ नाश्ता

नीचे स औरता के ढालक गान की आवाजें आने लगी हैं

है बाग सूना रे कोयल बिन
मात पिता बिन मईका है सूना, है गलिया सूनी रे वीरन बिन,
है बाग सूना रे कायल बिन

'बना रायता ? " चन्दनसहाय की चीख।
"बस बन गया। चार भगोने है। आदमी बुलाओ !" बड़दत्तो का जवाब।
'अजित ? पन्डीत। अरे यार, काम के बखत किदर गोल हो गया ?" छोटे की चीखें
"पकड के लाओ स्साले को। " माठे की बड़बड़ाहट, "भोत कामचोर है ! छोटे, तू जा। "
अजित एक गहरी सास लेता है—अब जाना पड़ेगा। अब जाना पड़ेगा।

सास ससुर बिन ससुरार सूनी,
है होरी सूनी र देवर बिन
है बाग सूना रे कोयल बिन
देवरानी जिठानी बिन बैठक है सूनी,
है झगडा सूना र ननद बिन
है बाग सूनो रे कोयल बिन

"पन्डीत। अबे ओ !' जार स बाह पकडकर झकझोर दिया है छाटे बुआ न।
'क्या है ?" एकदम झल्ला पड़ा है अजित।
चल। बिदर बिन्न हा रही है अन तू "
'नही यार, मरा सिर दुख रहा है।"
'सिर दुखता है ? ' छाटे न अपनी छोटी छाटी आखें सिकोडी-

फैनायी है, "अबे कि दिल दुखता है ? पन, छोड बे ! जिन्दगी मे ये सब होताच है। उठ !" वह बाह पकडकर उसे बिठा देता है।

एक गहरी सास ली है अजित ने।

नीचे मे बोल तेज हो गये हैं

बिन साजन सब ससार सूनो,
है गोद सूनी र, ललन बिन
है बाग सूनो रे कोयल बिन,
है बाग

"चल यार ! ऐसा छोकरी के मापिक घरघुसरा रीय भी बनता है ?" छोटे बुआ उसे आगन मे ले आया है।

चन्दनसहाय कहता है, "अजित ! ये कलेऊ पहुचाओ बारात के लिए। छोटे को साथ ले जाओ।"

बटनिया भीतर होगी। अजित के भीतर एक कातूहल होता है, फिर उदासी का घना कोहरा छा जाता है मन पर।

महेश, बड्डू, छोटे वगैरा नाश्ते के बतन, पत्तलें उठान लगे है। तभी बटनिया के ससुराल पक्षवाले कुछ बुजुग आ पहुचते है। हरदोई वाले लडके का बाप, बडा भाई, बहनोई आदि अजित सामान और लडका के साथ जब धमशाला की ओर जा रहा है, तब छोटे बुआ सूचना देता है, "अब बटनिया गयी। ये लोग उसे ले के आयेंगे धमशाले म !"

अजित के भीतर सन्तोष। चलो, जाते-जाते एक बार देख लेगा उसे।

धमशाला म सबको नाश्ता परोसते रहे थे दोनो। उनका हर नखरा सहते, उठाते छोटे बुआ बडबडाया था, "देखो ता ससाली तकदीर। गधो को पूडिया खिलानी पड रही हैं। ये अपून लोक का कईसा समाज है यार ? एक तो लडकी ले जाते है, उस पर स्साले माथा पीटेंगे, कि खीर देने का, पूरी देने का। हरामी !"

अजित न अनसुना कर दिया है। एक ओर खड़ा, सहमी-सहमी निगाहो स पालकी मे आ पहुची बटनिया को उतरते देख रहा है।

साथ है—रामा। सहारा देकर बटनिया को धमधमाता से कमरे की ओर ले जा रही है। बटनिया ने लाल घाघरा पहन रखा है, सलमासितारा वाली चूनर धूप में बटनिया सितारा में टकी लगती है। अजित टकटकी निगाहों से देखे जाता है मन में झरझराकर बारिश होने लगी है घूंट का घूंट एक नहीं कई यादें व भी अनगिनत

तभी देखता है कि बटनिया के सुसराल पक्ष में कोई व्यक्ति छोटे बुआ का अन्दर ले गया है। रामा बाहर आकर किसीको ढूंढ रही है अजित पर नजर जाते ही घूंघट खींच उसके पास आती है, 'अजित भइया। लड़की बुला रही है तुम्हें ?'

मुझे—क्या ?'

'बेचारी मिलना चाहती होगी।' रामा भीगी आवाज में कहती है—चली जाती है। अजित कुछ सोचे तभी छोटे बुआ आ खड़ा होता है। बेहद गंभीर।

'अजित ?

हूं ?

वह बुलाती है।'

'किसको ?'

'तर को। ' छोटे बुआ का अपना गला भर्रा गया है, "भीतर रो रही है बचारी !'

कैसा दुविधाग्रस्त हो उठा है मन ? जाये। न जाये। जाकर देखले। कम से कम जाते हुए तो देख ले ?

न देखे। देखने से अजित का दुख होगा। ज्यादा होगा।

"जा यार !" छोटे उसे धकेल देता है। उसकी आखें छलछलायी हुई हैं।

अजित चल पड़ता है।

छोटा सा कमरा। कमरे में कुछ संदूक, कुछ डलिया, कुछ छोटा मोटा सामान। दरी पर बटनिया बैठी है। अजित घुसता है ठिठककर दूर ही खड़ा रहता है ऐसे, जैसे बटनिया वह पेंटिंग है जिसे दूर से प्रदर्शनी में सिर्फ देखना होगा यही दर्शकीय अधिकार ! अजित की आखें भर आयी

हैं। जल्दी-जल्दी होठों पर जीभ फिराने लगा है

बटनिया गर्दन नहीं उठाती। माथे पर बुन्दा। खूब मोटा। सनमा-सितारे की लाइन जड़ी चूनरी का पल्लू लाल-हरे दो बड़े मोतियोंवाली भारी नथ कलाइयां एवं घुटने पर सिमटी हुई। हाथों में सोने के कड़े। दो-दो चूड़ियां। पीले ऊन के बंधन कलावा मेहदी से सुर्ख हाथ

पैरों पर महावर

अजित किसी तालाब में गले गले तक पानी। डुब्ब। डुब्ब। डुब्ब। दम घुट रहा है जैसे।

जोर से नाक सुड़कता है। सर्दी तो थी नहीं, फिर यह नाक ?

बटनिया बोलती नहीं।

"क्या है ?" अजित का भारी स्वर।

" " वह सिर्फ देखती है। पगली की तरह। स्तब्ध !

अजित फिर पूछता है, ' बोल ना ?"

'हूं ? "

'किसलिए बुलाया था मुझे ?' अजित को गुस्सा आने लगा है।

' बस, देख रही है।

' अरे, बोल ना ?" वह गुर्रा पड़ा है।

वह एकदम से रो पड़ी है खूब खूब जोर से—हिचकियां भर भर-कर। अजित सिहर गया है। वह एकदम से मुड़ता है। लौट जाता है। रुकता नहीं। छोटे बुआ पीछे पीछे दौड़ा आया है, "कहां चला यार ? "

अजित जवाब नहीं देता। भागा सा चला जाता है चला ही जाता है

"अजित। पण्डीत। " कुछ दूर तक छोटे की पुकारें पीछा करती हैं, फिर डूब जाती हैं। अजित घर की तरफ दौड़ा ही चला जाता है। बदहवास। जैसे किसीने पीट डाला हो।

इसी तरह हमेशा, हर स्थिति से भागा ही है वह। कायर ! कितने कितने अंधेरे में अजित को उसके अपने आपने नहीं डसा है !

मिनी ? बटनिया ? काम ? पढाई लिखाई ? कितने-कितने

मार्चों पर ऐसे ही बदहवास नही भाग खडा हुआ था अजित ? हर बार अजित सिर्फ अपने लिए जिया। अपनी खातिर !

पर कौन नहीं जिया है अपने लिए ? बटनिया ? मिन्नी ? जया मौसी ? केशर मा ? सुनहरी ? सहोद्रा ? शामलाल ?

सब के सब !

सब अपने लिए जीते है। अपने हिसाब से। अपना गणित लगाये हुए। पर ज्यादातर गणित गलत। कभी आदमी खुदकर देता है गलत—कभी कोई अनजाना। इसके बावजूद हिसाब किताब करने की आदत नहीं छूटती।

उस दिन मिन्नी की चिट पाकर भी तो अजित इसी हिसाब किताब म उलझ गया था ? सोचा था—अब क्या हुआ ? सभी कुछ तो ठीक-ठाक चल रहा था ? फिर ये शब्द—

लिखा है

" जरूरी काम है। इसके साथ आ सकेगा क्या ? '

उस 'इस' को देखा था अजित ने। छोटा सा लडका। यही कोई बारह पन्द्रह साल का। अजित को लगा था कि बहुत पुराना, पहले का अजित खडा है। अजित—खुद सुरेश जोशी की जगह। ऐसे ही तो एक दिन जया मौसी की चिट्ठी लेकर पहुचा था सुरेश जोशी के पास ?

लडका चुप खडा हुआ था। अजित ने पूछा था 'क्या नाम है तेरा ?"

करनसींग !"

कहां रहता है ?"

' बिदर—य मास्टरनीबाई रहती हैं ना बिधर हीं। ' लडका जवाब देता है।

' क्या करता है ?

'ब्रेडवाला है ना, पेहूमल। मास्टरनीबाई वाले घर के पास ही ब्रेड की दुकान है। उसपर काम करता हू।"

अजित एक पल सोचता है। कहता है "ठीक। पाच मिनट रुकना। मैं चलता हू।'

लडका बैठ गया है। अजित जल्दी जल्दी कपडे बदलता है। जूते

पहनता है। पूछता जाता है, "मास्टरनीबाई के यहाँ और कौन-कौन था ?"

"कोई नहीं। इकल्ली थी। "

अजित का मन होता है, पूछ ले, 'कन्नो साई था क्या ?' पर नहीं पूछता। इस तरह पूछने स लडके को सन्देह होगा—क्या घोटाला है ? बेकार ही मि नी को उलझन मे नहीं डालना चाहता वह। फिर लडके के साथ चल पडता है। गली मे आकर कहता है, "तू चल बोल देना कि आ रहे ह।" फिर कोने पर आकर बीडी सुलगाता है।

लडका चला गया है। अजित कश लेता चलन लगता है। शामलाल सुरगो, वदनसिंह, मोठे बुआ, अनसूया कई लोग एकसाथ चले आ रहे है। अजित चौककर देखता है—ये सब एक साथ ?

अजित के पास पहुचते ही सब तो लौट जाते है, सिफ मोठे बुआ रुक जाता है। 'अरे पन्डीत ? तू सुबेरे से दिखाच् नही यार ! भोत गडबड हो गयी ?"

"क्या हुआ ?" घबराकर पूछता है।

"रेशमा भाभी आज सीढी से गिर पडी। "

"अरे ?"

'हा, बिसको अस्पताल पौचाकर आ रह है हम लोग। " मोठे सूचना देता है।

"ज्यादा चोट "

"पत्ता नई। शाम को पत्ता पडेंगा। बिसके वहन-बहनोई साथ हैं—विदर अस्पताल मे। गिरी सोई अस्पताल ले गये हम लोक।' मोठे बुआ खबर दे रहा है—"चाट तो भौत आयो हायेंगी, पन पूरा पत्ता फोटू वोटू खिंच जाने के वाद लगेंगा।"

"अर रे। " अजित सिफ इतना ही बोल सका है। मोठे बुआ चला गया है।

अजित एक पल थका-सा खडा रहता है, फिर चल पडता है। वेचारी। सारी जिन्दगी सिफ मरते-मरते और मरते रहन मे ही कट गयी। कभी सुना था कि किसी छोटी सी रियासत के राजा की खास—

नाइन की बेटी है। सुरगो ने एक बार फुसफुसाकर बतलाया था, 'य म
परीजादी, नाइन होकर भी नाइन नही है।"

ऐसा क्यो ?" अजित चकित हुआ था।

"इत्ती बात भी नही समझते लाला ?" सुरगो बुदबुदायी थी, फि
अपनी छातिया सहजते हुए धीम स कहा था, "पैदा नाइन स हुई है, पर
राजा साहब की औलाद है। तभी तो ऐसी चमचमाती दमदमाती है
नखर भी राजरानियो जैस। खसम को देखते ही उबकाई लेती थी।
आखिर नाइन की जाई ठहरी, तिस पर राजा की धोवन।

अजित को अच्छा नही लगा था 'भाभी तुम भी क्या क्या बकती
रहती हो।'

"बकती नही हू। सारा जमाना जानता है इस बात को।'

यह रहस्य कितना सच था—कितना झूठ—मालूम नही। पर इस
रहस्य क पीछे का रहस्य यह था कि सुरगो की कमाई को लेकर रेशमा ने
कुछ कह सुन दिया था। वही कुछ कहा था जो देखा या सब देख रहे
थे।

शामलाल धार स पैसा नहीं भेज पाया था कज बहुत हो गया।
सुरगो के घर उसके गाव का लडका आकर रहने लगा था। सुरगो कहती,
मैके से आया है। उसी गाव के एक ठाकुर हैं। मुझे बेटी की तरिया मानते
है, उन्होंकी लडकी का लडका है।

लडका पैसे वाला था। सुनते है कि भरी पूरी खेती थी। सुरगो के
घर दोनो वक्त सब्जी बनती कभी कभी लडका दही का कुल्हड लिये हुए
भी आता दीखता कभी मिठाई बडी बटी चुनमुन उससे अगरेजी सीखती
थी। चार चार घण्टे लगातार पढाया करता। जब पढायी चलती तब
सुरगो अपनी सारी बच्चियो को लेकर घर बाहर आ बैठती। जब भीतर
कोई जान लगता तो कहती 'भइया। चुनमुन पढ रही है। अब तुम
जानो सातव दरजे की पढाई है। छोटी मोटी बात तो है नही।
दखल नही होना चाहिए।"

बच्ची रो पडती तो सुरगा एक चाटा देकर कहती, "चिप्प। चिप्प
हो जा। देखती नही कि जिज्जी पढ रही है ? तखतसिंह भइया उसे पढा

रहा है।"

बस, इतनी-सी बात को लेकर महल्ले मे चक्चकाहट शुरू हो गयी थी। रेशमा ने सूचना पायी थी बदनसिंह की घरवाली से। बदनसिंह की घरवाली को खबर मिली थी, सुनहरी से। और सुनहरी का कहना था, "मैंने आख से देखा है। वह मरा तखता, चुनमुन को छाती से लगाये हुए था! अब तुम जानो बहना, चुनमुन की उमर कोई आचल से दूध पीने की तो है नही? और मरद कोई भैंस तो होते नही? "

यही बात और इस बात ने सबके रहस्य उजागर किये थे। एक दिन खुल्लमखुल्ला बात होनी थी।

कब होगी—तय नही!

पर सुरगो घोषित कर चुकी थी कि किसी दिन 'हरामजादी' रेशमा को यही गली म सबके सामने नगी न करदी तो कहना।

पर वह सब हो—इसके पहले ही रेशमा के बदन के भीतरी हिस्से नगे हो गये थे! इतने नगे कि मालूम नही पसलिया बाहर आ गयी हैं या भेजा।

यही कुछ सोचता हुआ दौलतगज की तरफ मुडा था अजित। देखा—तागा घुस रहा है गली म।

बुरी तरह चौंक गया। लगा था कि किसीने वसत से नहला दिया है। तागे मे थी बटनिया। वही महावर, मेहदी, चूनर, और नथ सिगार आगे बैठा था चन्दनसहाय। फिर ठिठक गया था अजित।

बटनिया ने उसे देखा नही था। अजित का मन हुआ था कि लौट पडे, लौटकर बटनिया से मिले—बातें करे पर अभी नही। मिन्नी की वह बुलाहट पता नही—क्या बात है? अजित जल्दी जल्दी चल पडा था।

दो

ये सारे रास्ते इतने जाने पहचाने हो चुके हैं कि अजित यांत्रिक ढंग से चलता चला जाता है। दायें बायें आड़े तिरछे—कहाँ, किस तरह मुड़ना है—इस सब पर सोच विचार की तकलीफ ही नहीं होती। बचना पड़ता है तो सिर्फ अवरोधों से। किसी बार धनाती आ रही बिना ब्रेक की सायकिल से या किसी बार कमजोर घोड़े के लड़खड़ाते परों पर खिंचते आ रहे तांगे की नेनस्तीव चाल से।

जीवन गणित भी कुछ यही। आदमी गत य के आंकड़े को दिमाग में बसाये कदम दर कदम जोड़ बाकी गुणा भाग करता चला जाता है पर किसी बार खुद गलती करता है किसी बार सामने का आंकड़ा ही उलट पुलट होकर जुड़ जाता है। नतीजा—कोई दुघटना। एक ऐसा परिणाम, जिसकी न उसे कल्पना थी, न परिणाम की।

इसके बावजूद गतव्य निश्चित करना आदमी का स्वभाव भी है—बाध्यता भी। परिणाम तो वह खुद प्रभावित करता या कोई अनिश्चित—पता नहीं। मगर परिणाम आवश्यक। बल्कि अनिवार्य।

पल पल के गणित। पल पल के छोटे छोटे परिणाम। इन सबको बटोरकर कबाड़ का जो ढेर बनता है—वही है आदमी का जीवन। पर यह लेखा कौन करता है? अगर कर पाता होता तो पत्थर कूटने से पत्थर जोड़ने की कला तक पहुँचता ही नहीं। इसके बावजूद परिणाम एक। सौ-सौ मंजिला इमारतें या तो बनने से पहले आदमी को डकार लेती हैं, या बनने के बाद। शाश्वत है केवल पत्थर। आकारयुक्त होकर भी आकारहीन। आकारहीन होकर भी आकारयुक्त। यह हुआ संसार।

और इन सबके बीच कहानी पल-पल का हिसाब—एक कहानी। और कहानियों पर कहानियों की तहें पीढ़ियों के बाद पीढ़ियों का सिल

सिला जीवन का कभी न सूखन वाला जलस्रोत।

सब जानते है—सब मिटना है। सब यह भी जानते हैं कि मिटने के बाद बनना है। वही सब, किसी और रूप मे, और तरह बनाया जाना है। वही पत्थर होगे, वही तत्त्व। वैसा ही कुछ बनगा भी। किसी और शक्ल-सूरत मे, पर बनेगा। इस अनित्य क्रम के अनित्य सत्य का यह रहस्य जानकर भी अजाना करते हम दौडे चले जाते हैं घुटना घुटनो चाल स प्रारभ हुआ मनुष्य, जीवन के चौबारे म आकर टुकुर-टुकुर आगन की ओर दखता है किसी पल तप्त भाव से, किसी पल अतृप्त भाव से।

यह तप्ति-अतृप्ति ही इस खेल का आनद।

यह सब भी अजाना नही, पर परिवार म ही ताश की बाजी खेलते समय आदमी जिस कदर स्वार्थी हाकर पत्ता से अपने आपको जोड लेता है, उसी तरह हम सब करते हैं पल पल के गणित और परिणामा से बिलग हाकर मोहभरा यह खेल जारी रखते हैं

कितन माहा को बटोरना, कितना स थक्कर टूट जाना और कितना की प्यास मे बदहवास दौडते जाना?

घुटने मिलन से घुटन टूट जाने तक यह दौड बन्द नही होती।

अजित दौडा सा चला गया था उस बुलावे पर नया मोह बटोरने या पुराना माह तोडन या सिफ मोह सजोने पर पल का सत्य जो था वह। पल का कोई परिणाम भी।

यह परिणाम मिन्नी होगी या मिन्नो से जुडा कन्नो? या फिर दोनो ही नही—कुछ और। वह, जो न मिन्नी होगी न कन्ना। होगा केवल—जड। किसी चेतन का काई तत्व सत्य!

दरवाजा बद था। नयी किवाड जोडी। खूबसूरत किवाड जोडिया का जो रिवाज चला है, वही। एक पल के लिए उस किवाड जोडी को ही देखता रह गया था अजित कभी ऐसी जाडी अपन घर म भी बनवाएगा। असल म उससे पहले घर बनाना हागा।

यात्रिक ढग से हाथ उठा और कालबैल पर अगुली दबी।

एक भर्रायी—बिलकुल टोपनदास के गले जैसी आवाज आयी थी बैल से और फिर मिन्नी बोली। अजित के भीतर पता नही, महीनो से

सूखे पड़े जल स्रोत मे अचानक बूँदें झर पड़ी थी आद्र मीठी और ठंडी।

द्वार खुला। वह सामने थी।

अजित उससे ज्यादा उसके खूबसूरत गाउन को देखता रह गया सिल्कन! चमचमाता गुलाबी गाउन!

'मैं—बस, तेरा ही इंतजार कर रही थी।" वह बुदबुदायी फिर दरवाजे से एक ओर हट गयी "आ!"

भीतर जा पहुचा अजित। मिन्नी न सिटकनी चढा दी। कुछ चौंका, अनजाने ही बोल गया था, 'कन्नो है?"

"नही। ' मिन्नी आगे बढ आयी। कीमती सोफे की ओर इशारा करती हुई बोली थी बैठ। " फिर एक पल थमकर सूचना दी थी, "पन्द्रह दिना क लिए कन्नो पटना गया है।'

पटना?"

'हा।"

किसलिए?' अजित को मालूम ही नही था—किसलिए कन्ना और उसस जुड़े सवाल इस व्यग्रता के साथ किये जा रहा है?

उसका तबादला हो गया है।"

अरे ऐ ऽ?" अजित को अच्छा लगा था, पर तुरत हा औपचारिक सा खेद व्यक्त करन लगा था, "यह ता तुझे बड़ी परेशानी हो गयी?"

'हा ऽ! ' उसने कहा, पर अजित कुछ चौंका। वह मुसकरा रही थी। कुछ उपेक्षा स बोली 'बहुत परेशानी हो गयी। कन्नो यहा था तो आठवें दसवें दिन कोई कीमती चीज खरीद दता था !"

अजित भौचक्का ' यानी तू उसके जाने को सिर्फ कीमती चीजो से तोल रही है?" सिटपिटाकर पूछ बैठा।

वह हसा, एक झटके से बालो को पीछे फेंका। और तभी अजित को ध्यान आया था—अरे मिन्नी ने ता बाल भी कटवा लिये हैं! हड़बड़ी मे बोल गया, और और ये बाबकट कब से हा गयी तू?"

"जब स कन्ना के साथ हुई? " हसते हुए वह बोली थी, ' सिर्फ बालो से ही नही, दिल, दिमाग जिस्म सभी तरह से बाबकट हो गयी

हू। दिस इज कॉल्ड—माडर्निटी यू नो ?"

फिर वह हसने लगी हसती ही चली गयी सहसा उठ पड़ी थी, "तू बैठ, मैं चाय लेकर आती हू।' किचन मे धस गयी।

भौचक्का सा अजित बैठ रहा। इधर-उधर नजरें घूमती रही। पैरो के नीचे शानदार कालीन। अजित ने टागें सिकोड ली थी। उसकी चप्पलें कितनी भद्दी लग रही थी इस कीमती कालीन पर? मन खराब हो गया

दरवाजो पर परदे। परदा का कपडा काफी कीमती है। वही रग, जो दीवारा का है। दीवारें साफ, धुली, चमकती हुई-सी। एक आर सोफा पडा है। काफी महगा होगा यह भी। कपडे का काम। ऐसी चीजें रखने के लिए साफ-सफाई भी बहुत जरूरी है। नौकर भी जरूर होगा। पर दिखा नही? इतनी देर तक तो घरा के नौकर गायब नही रहते। गुलदस्ते पैंटिगें और बेहद कीमती ऐश ट्रे।

अजित सहमा हुआ-सा देखता रहा कुछ अच्छा लगा, कुछ नही। ठीक है कि गोदाम म क्लर्क है और उससे भी आगे ठेके लेता रहता है पर यह सब बटोर पाना सभव है क्या? तिस पर यह तो एक अलग घर है। अलग चूल्हा। कन्नो दूसरे घर का खच भी ता सम्हालता होगा। कोई न कोई चक्कर चला रहा है।

पर लगा था कि चक्कर जो भी चला रखा हो—कन्नो न जमाया खूब है। क्या चकाचक जिन्दगी जी रहा है पटठा।

मिन्नी ने सचमुच जोरदार खूटा ढूढा! अजित ने कुछ सुख, कुछ दुख के साथ सोचा था। पता नही अजित का सच क्या है? अच्छा लग रहा है, या बुरा? यह खुद तय नही कर पा रहा। देर बाद कर सकेगा

अजित को अपने पर हसी आ गयी—कैसा पागल था वह। मिन्नी स बोला था कि वह शादी करेगा।

और मिन्नी ने हसकर कह दिया था ' नशे की बात भी सीरियसली ली जाती है भला? "

सचमुच नशे जैसी बात ही की थी उसने!

मिन्नी भला अजित को किस जगह रखकर अपने लिए साचती?

पढ़ाई ? रहन-सहन, इस वैभव का सयाजन ? अजित कुछ भी ता उसका वांछित नहीं दे सकता था ? मिन्नी न अच्छा ही किया। कोरी संवेदना और सहानुभूति के नशे की झोंक में बाती गयी अजित की बात बिसरा दी। साफ मन से तुरत ही वह डाला था, मैं तुमसे शादी नहीं करूंगी।

यह भी कह दिया था—"घबराये नहीं !" अजित को भीतर तक पढ लिया था उसने ?

शायद। शायद ही नहीं, निश्चित ! अजित सुबह के साथ ही तो महसूस करने लगा था कि एक तूफान में बहकर उस दिशा में ढुलक गया है जिस ओर उसे जाना ही नहीं। जाना भी चाहे तो असभव। मिन्नी की ही बात याद हो आयी थी। बोली थी, ' जो मुझसे शादी करेगा अजित, वह मुझे सामने पाते ही नहीं भूल सकेगा कि मैं मिन्नी हू वह तो कई परायी बाहों म किसी खिलौने की तरह खेली जाकर उस तक आयी हू। "

अजित भूल पाता ?

असभव।

और क्या अजित की जाति, समाज, वग हसियत कुछ भी ऐस थे जो मिन्नी को सह पाते ? वह भी नहीं। और अजित म विद्रोह होते हुए भी विद्रोह कर पाने का इतना साहस कहा रहा है ? कब ?

अजित अपने भीतर के कडवे घिनौने, खुद को ही अपमानित करने वाले सचो स परिचित है। इन सचो से आहत होता है, पसन्द नहीं कर पाता इसके बावजूद जीता उन्ही सचो म है। उन सचो म मिन्नी की गुजाइश नहीं। उस संवेदना, सहानुभूति के लिए जगह नहीं—जो मिन्नी या उस जैसी लड़कियों की हो सकती है।

अजित। ' वह टे लिए आ पहुची थी। कीमती चमचमाती स्टील ट्रे—स्टील के ही प्याले—अजीत जैस चकाचौंध से नहाया हुआ मिन्नी के उस असहज वैभव को देखन लगा था। जिन बुनियादों पर यह वैभव रखा है—झूठ, चारबाजारी नैतिक मूल्यो की हत्या भ्रष्टाचार और घिनौने समझौतो के खम्भो पर रखा वैभव-महल—वह अजित कभी

स्वीकार नही सकता। इसके बावजूद यह माहता है थोडी देर के लिए अपने भीतर जुटाये बौद्धिक और आदर्शों के सच को हिला डालता है।

उसन ट्रे सामन के टबल पर रखी। चाय बनाने लगी बडबडायी, 'कुछ सोच रहा है ?"

"नही। "

"तब इस तरह चुप ? इतना चुप तो रहता नही था कभी ?" उसने प्याला उसकी ओर बढ़ा दिया, बिस्कुटो का प्लेट भी।

अजित ने फिर स कमर पर नजरें दौडायी, एक गहरी सास ली, कहा, 'कुछ नही—या ही।"

वह मुस्करायी। आखें बहद रहस्यभरी हो उठी। धीरे से बोली, "जानती हू, तू क्या सोच रहा था ?"

'क्या ?" चाय सिप करते, लापरवाह स्वर म पूछ लिया था अजित ने।

"तू सोच रहा है शायद कि य कालीन, कमरा, सोफा और मेर ऊपर लदा हुआ मुर्दा सुख वहा से कैस आया होगा ? यही ना ?" उसने पूछा।

अजित चौंक गया। पर चुप।

'बहुत लुभाता है ? है ना ?"

अजित ने उसे गुर्राकर देखा।

"पर अगर कगाल होकर इस सबको जुटाया जाये तो नही लुभायेगा।" वह सहसा उदास हो गयी थी, "सच तो यह है कि ये सिर्फ दूसरो को लुभाने के लिए ही है अजित। इसका खुद से कोई सरोकार नही।"

अजित को लगा था कि सुबह-सुबह एक तनाव को मोल ले बैठा है उसके अपन तनाव, अपन दुख क्या कम हैं जो उधार के तनाव लेकर अपने को लहूलुहान करे ? बुरी तरह आहत हो उठा था। इधर कुछ दिनो से अपने तनावो के सामने दूसरो से तनावों को सवेदन-स्तर पर बटोरने म बहुत दुख होता है। कहा, "वह सब छोड। तेरा लिए फलसफेबाजी कोई नयी बात नही है मुझे सिर्फ यह बता कि बुलाया किसलिए ?"

"क्या, क्या आदमी सिर्फ मतलब के लिए ही बुलाया जा सकता है ? इसके अलावा जीवन में कुछ है ही नहीं क्या ?"

"तू बात मत उलझा मिन्नी " अजित न कराते हुए कहा था, "मैं इन दिनों खुद भी कम परेशान नहीं हूँ। काम ढूँढ रहा हूँ केशर मा की चीख चिल्लाहट अब नहीं सही जाती फिर वह गलत भी तो नहीं चिल्लाती? लगता है कि मैं ही झूठ म जीता रहा था। और अब जब सच की ओर बढा हूँ, तब लगता है, बहुत देर कर दी है "

मिन्नी उसे सहानुभूति से देखती रही थी

अजित ने जल्दी जल्दी प्याला खाली कर दिया था। पूछा, "हाँ,बोल? क्या काम था? खत तो इस तरह लिखा था जैसे तू बस आखिरी साँसें ही ले रही है?" वह हँसा था।

क्या सच? नहीं, सच यह था कि उसने हँसने की कोशिश की थी। अजब सी कोशिश! फिर खीझकर चुप हो रहा।

मिन्नी एक पल होंठ काटती, उसे टकटकी बाँधे हुए देखती रही, फिर कहा था, "काम? काम तो सिर्फ इतना ही था कि पहली बार लगता है मुक्त हुई हूँ बल्कि जिन्दा हूँ। कई दिनों से तू बहुत याद आ रहा था सोचा कि तुझे बुलवा लूँगी। कुछ वक्त अपने लिए अपनी तरह जीकर काट सकूँगी '

वह हक्काबक्का-सा देखता रहा था मिन्नी को। हमेशा कोटेशन्स में बोलती है। पता नहीं, कहाँ कहाँ से किस किसके दर्शन को पढ़ आती है और उसे सीधे सरल शब्दों में बोलने की कोशिश करती है। सामने-वालों को अक्सर इसी तरह चौंकाना, प्रभावित करना भी एक बढ़िया व्यावसायिक आर्ट है। कन्नो को भी तो इसी चक्कर में उलझाया था उसने। झल्लाहट आ गयी थी। कहा, "मुझे चक्कर में मत डाल। काम बता।

'तेरी सौगन्ध। ' वह बोली और सोफे पर इस तरह टिक गयी कि अजित ने अपने भीतर लड़खड़ाहट महसूस की। उसके सीनों का उभार और कमर का कुछ हिस्सा गाउन से बाहर झाँकने लगा था। ज्यादा ही चिढ़ गया। मिन्नी कह रही थी " तू शायद बोर हो रहा है।

'हाँ। ' अजित उठ पड़ा—नजरें उसके बदन से चुराता हुआ

"चाय और बनाऊ ?" उसने ट्रे सम्हाली।

"नही "

'बनाती हू " वह चली गयी।

अजित सोफा कुरसी पर अधलेटा हो गया गुनगुनाने का मन हुआ फिर याद आया—बटनिया। चन्दनसहाय उसे ले आया है। चेहरा ठीक तरह नही दिखा था तागे मे। पर कैसी लगने लगी होगी?

बैल बजी।

वह सहज होकर बैठ गया। किचिन की ओर निगाह घुमायी—शायद मिन्नी आयगी। पर मिन्नी की आवाज आयी थी—"देखना अजित, कौन है?"

अजित उठा। दरवाजा खोल दिया। सामने अधेड उम्र के एक सजे-धजे सूटधारी खडे है। अजित ने कही देखा है उन्ह, पर पर वे अजनबी निगाहो से अजित को देख रहे हैं। नीचे से ऊपर तक। अजित को अच्छा नही लगा, पर पूछ लिया, ' फरमाइए ?"

"मिसेज पजवानी ?" उन्होने कुछ रोबदार आवाज मे पूछा।

"जी हा। आपका शुभ नाम ?'

वह अजित की परवाह किये बिना कमरे मे घुस आये, "कहिए दीनानाथ आये हैं।"

अजित का मन हुआ था, चिढकर पूछे, "दीनबन्धु, कृपानिधान कहू तो चलेगा?' पर जोर स कहा था, "दीनानाथजी ह " फिर कुछ लापरवाही और धृष्टता के साथ उनके सामनेवाली कुर्सी मे हो जा धसा। वे सिगरट सुलगा रहे थे। अजित न भी रोब के साथ बीडी सुलगायी और नथुने फुलाये हुए उन्ह देखा, आखिर समझना चाहिए इन सज्जन को—अजित यू ही नही है। व कुछ गुर्राये हुए उसे देखते रह वेवस। चुप।

मिन्नी ने प्रवेश किया ' नमस्ते। कैसे हैं ?'

दीनानाथ एकदम खडे हो गये, 'ठीक हू जी। एकदम ठीक हू। आप?" उन्होने आवाज इस कदर रसमय कर ली थी जसे हलवाई के यहा दोना बिखर जाये चाशनी बह निकले

बैठिए। प्लीज, सिट डाउन।' मिन्नी अजित के पास आ बैठी।

एकदम इस तरह कि अजित सिकुड सा गया। अजब औरत है ! इसे परवाह ही नही कि दीनानाथ—अजनबी क्या सोचेगा उन्हे लेकर ?

वे अजित और मिन्नी के बीच कूल्हा का स्पर्श देख रहे थे अजित बुरी तरह सिमुडकर रह गया। पर जगह नही है सोफे मे कि सरक सके। घबराहट चेहरे पर उतर आयी। मिन्नी सहज भाव स पूछ रही थी ' कैसे कष्ट किया ?"

"बस, इधर से गुजर रहा था, सोचा कि आपके दर्शन करता चलू। " दीनानाथ ने अकारण ही सख्त नाराजी के साथ अजित को देखा।

' मेहरबानी आपकी ' मिन्नी बोली, फिर जैसे उसे कुछ याद हो आया "अरे, आपका परिचय कराऊ दीनानाथ जी। ये है अजित। अजित शर्मा ! मेरे बचपन के साथी है हम लोग साथ खेले, साथ पढे। "

दीनानाथजी हो हो करके हसे। कहा, लगोटिया यार ? "

मिन्नी ने तुरत जवाब दिया, ' जी, हमारी जेनरेशन तक लगोट का रिवाज शायद खत्म हो गया था आपका क्या खयाल है ?" फिर उसने इस तरह देखा था उन्हें कि अजित को लगा उनके मुह पर थूक रही है। अजित के भीतर खुशी की एक लहर कांपी।

हा हा हा ! जोर से हस पडे थे वह। "बढिया जोक ! नाइस।" फिर चुप हुए। गभीर भाव से अजित को हाथ जोडकर कहा था ' जी मैं यहा कार्पोरेशन म आफिस सुपरिटेंडेंट हू। वैसे मैंने एकाध बार आपको 'रेलडिब्बे' मे "

"जी हा जी हा ! " अजित को याद आया, 'पहचाना। आप एक दिन 'सुबह सवेरे' के आफिस मे भी आय थे ? " फिर अजित ने उन्हे एसे देखा कि वह याद कर लें। अजित को याद है। 'सुबह सवेरे' अखबार भले ही छोटा हो, पर इस भ्रष्टाचारी अधिकारी का खूब बखिया उधेडा था उसने। अजित के लिए लोकल अखबार घर-आगन हो गय हैं। आखिर वह भी तो शब्दो की माला मे अखबारो के साथ ही गुथा हुआ है ? सन्तुष्ट था कि दीनानाथ को याद आते ही समझ जायगा—अजित

यू ही नहीं है।

और याद भी आ गया था दीनानाथ को। कहने लगे, "अच्छा अच्छा, आप वहा अजित जी है ना जो कहानिया "

"जी हा वही!" मिन्नी बोली, फिर उसने कुछ खुश होकर अजित को देखा था। बेहद आत्मीयता के साथ। उसे अच्छा लगा होगा। अजित ने कुछ न होकर भी खासा रोब जमा रखा है।

'अरे र आप तो साहब बहुत ही अच्छा लिखते हैं। धन्य हो!" दीनानाथ सहसा इतने विनम्र हो उठे कि अजित प्रशंसा सुख में उनके लिए आयी चिढ सहसा भुला बैठा।

चाय लाती हू।" मिन्नी चली गयी थी।

दीनानाथजी ने कहा, "सुबह सवेरे' बढिया अखबार है साहब! बडा निर्भीक!'

"जी हा पर स्ट्रगल करना पड रहा है। अब आप ही देखिए, आपके अपने विभाग से उन्ह विज्ञापन बन्द हो गये थे। किस मुश्किल से मिले ? '

"जी हा यह तो है सच्चाई " दीनानाथ कुछ कहना चाहते थे, पर अजित ने सुना ही नही, कहे गया—

'तब मिले साहब जब कार्पोरेशनवालो का एक्सरे शुरू करना पडा! '

हे हें हे " वह सिटपिटाकर हसे। हसे या रोये?

अजित फैलकर बैठ गया। बीडी निकाली। दीनानाथजी ने कहा सिगरेट लीजिए अजित साहब? सिगरेट?"

'जी नहीं हम बिना कार्पोरेशन के हैं। बीडी ही ठीक।' अजित ने कहा। वे फिर हिनहिनाये कहा, सिगरेट तो घर की हैसियत पिला रही है साहब, वरना कार्पोरेशन तो मल मूत्र पिला दे! " फिर खुद ही हसे— हे ह हे !'

अजित नही हसा। गाली दी—चार स्साला! हर भ्रष्टाचार में इसका नाम ऊचाई पर आता है। सहसा विचार में रोक लगी—पर मिन्नी के घर? लगा कि कन्ना के चक्कर मे आता होगा! कार्पोरेशन से

ठेके वेके चलते होगे। जरूर यहा से इसका दाना-पानी बधा है

मन फिर से उसके प्रति चिढ म उलझ गया। मिन्नी चाय ले आयी थी।

प्याला लेकर दीनानाथजी न कहा था, "कन्नो बाबू कब तक आयेंगे ? कुछ कह गये हैं ?"

"जी नही पर उम्मीद है कि पन्द्रह बीस दिन म लौट आयेंगे। विदाउट प लीव मागी है। देखिए "

' पर ये डिपाटमट भी साहब क्या है। " दीनानाथ न कहा, 'जब से हिंदुस्तान आजाद हुआ, सरकारी सर्वेन्ट के ता जैसे फासी लग गयी ! अब बताइय, कहा ग्वालियर, कहा पटना बिलकुल अलग देश, अलग जगह, अलग दुनिया !"

अजित खीझ से भर उठा—आखिर य जलील लोग देश को समझते क्या है ? कहा, "ऐसा क्यो कहते है ? जो पटनावाले यहा आयेंगे वे ग्वालियर को नही कोसेगे क्या ? अब य कूपमडूकता छोडनी पडेगी साहब !"

वह ता है पर बडी परशानी होती है अजित साहब !"

"इससे ज्यादा परेशान तो वे हुए थे, जिन्होन मुल्क आजाद करवाया।" अजित न ज्यादा ही चिढकर कहा, 'जयप्रकाशनारायण को क्या पडी थी कि बिहार से उलटकर लाहौर की जेल मे सडते ! वे भी आपकी तरह सोच लेते कि क्या करना है। भाड म जाय देश ! उन्हे तो अपन गन्दल तालाब मे काम। " हे हें ह वह फिर खीझी हसी हसे। अजित ने देखा कि मिन्नी के चेहर पर मुस्कान थी। उससे कही ज्यादा सन्तोष। दीनानाथ उठ पडे थे 'अब आप लोग तो साहब, नयी पीढी के हैं। स्वतन्त्रचेता भी है विद्राही भी। आपसे हम बीते गये क्या बहस करेंगे ! ' फिर चल पड़े, "अच्छा, मिसेज पजवानी। अब मैं चलूगा !" कन्नो बाबू आयें तो कहियेगा कि मैं वैसे मेरा ता घर ही इधर है, आते जाते मिलता रहूगा '

"आप क्यो कष्ट करेंगे ? मैं खबर भिजवा दूगी।" मिन्नी ने जैसे उन्हे धकेला।

वह दरवाजे के पास जा रुके, माथे पर सलवटें डाली, "याद आया—कन्नो बाबू न एक फायल बना रखी होगी ?"

कौन सी ?

दीनानाथ ने अजित की ओर देखा। कहा, "आप नही पहचानेंगी। अगर आपका एतराज न हो तो शाम को आफिस स लौटते मे उसे देखता जाऊ—बहुत जरूरी है।"

मिन्नी इनकार नही कर सकी थी, "जी ठीक है।"

'अच्छा नमस्ते।' वह बाहर निकल गये। इस तरह जैसे भागे हो। मिन्नी न दरवाजा बन्द किया था 'बदमाश कहीं का!"

अजित चुप बैठा था।

बडबडाती मिन्नी आ बैठी थी। चेहर पर नफरत थी, उससे कही ज्यादा कडवाहट, नीच कहीं का। "

"क्या नीचता की इसने ?

सहसा मिन्नी गभीर हो गयी। फिर उदास। कमजोर आवाज मे बोली थी "पता नहीं नीचता इसकी है या शायद शायद हमारी ही।" फिर वह चुप हो रही। सहमा उठी पकौडिया लाऊ ? इस कम्बख्त के मारे "वह किचिन म चली गयी। जान क्या अजित को सब कुछ बोझिल सा लगने लगा था। कभी, आने के बाद कमरा, सजावट मिन्नी जो सब अच्छा लगा था—बेहद उबाऊ हो गया। तय किया—चल पडेगा।

पकौडिया खाते हुए यहा वहा की बातें होती रही थी। अजित ने सवाल किया था 'तुम उधर, घर की तरफ इन दिनो नही आयी ?"

"बीच म आयी थी फिर "वह कमी जैसे कुछ चुरा लिया अपने आपसे कहा 'टाइम नही मिला। कभी-कभी मम्मी पापा मिल जात है।'

अजित न जिक्र छाड दिया था। थाडी देर बाद कहा था, अच्छा, मिन्नी। अब चलूगा।"

'क्यो ?'

"एक काम है मुझे। रोडवेज दफ्तर है ना ? वहा जाशी साहब ने

आन को कह दिया था कण्डक्टरी की जगह मिल सकती है।" अजित न कहते कहते कुछ लज्जा महसूस की।

"अच्छा रहेगा बहुत अच्छा रहेगा।" मिन्नी ने सन्तोष और खुशी के साथ जवाब दिया था, "सुना है कि सारे पावस उन्हीके पास ह। "

"तू जानती है उन्हे?"

"हा, जानती हू। " उसने कहा, "एक बार कन्नो ने ही बतलाया था, कोई ठेका पास नही किया उन्होने। बडा नाराज था उनसे। कहने लगा—ऐसे बनता है जैसे वही आजादी सम्हालेगा। मैंने एक रिस्टवाच भेंट की थी तो चपरासी से बाहर निकलवा दिया " बतलाते बतलाते मिन्नी हस पडी। अजित को हैरत हुई—कन्नो इसका पति है। उसे जोशी साहब ने चपरासी से बाहर निकलवा दिया और ये खुश हो रही है। आश्चर्य से पूछ लिया था, "तू कन्नो के अपमान पर खुश हो रही है?"

"बेशक दुखी होती। ' वह अनायास गभीर हो गयी थी—' पर जब काम ही मानवाला नही किया था, तो दुख कैसा? "

अजित निरुत्तर। निरुत्तर ही नही स्तब्ध हो गया था। अजब लडकी है। एकदम दोहरी। नैतिक-अनैतिक के बीच यह विचित्र ऊहापोह अजित समझ नही पाता। चुपचाप चल पडा था।

बोली थी, ' कितने बजे फ्री होग उनसे?"

' यही कोई बारह एक।"

"तो लच यही करना ना—मेरे साथ?" वह जैसे निवेदन के स्वर मे बोली।

अजित रुक गया था। कुछ सोचा, कहा, "ठीक है। पर आऊगा तीन बजे तक।"

' मैं वट करूगी।"

वह दरवाजे पर खडी रही थी। अजित जल्दी-जल्दी चल पडा था। दिमाग मे मिन्नी के शब्द घूम रहे थे—' बेशक दुखी होती पर जब काम ही मान वाला नही किया, तो दुख कैसा?'

इस मिन्नी को कभी नही समझ पाया कभी धूप ता नी।

नहीं।

सिर्फ धूप छांह नहीं। बारिश भी। यह वर्ष—जो हर मौसम में जिये—बीत जाय। कुछ इसी तरह बीती है मिन्नी

पहना आया था कोई महीने भर बाद। पर उस महीने भर के बीच मिन्नी किसी नये मौसम में जाने के लिए अपने आपको तैयार करने लगी थी। कहा था— अजित! अब लगता है जैसे फिर से नयी जिन्दगी शुरू करूंगी! नये वसन्त के साथ!"

"क्या मतलब?" चौंककर पूछा था अजित ने। उस बीच अक्सर पहुंच जाया करता था। राडवज में नौकरी कर ली थी—मन्डक्टरी। हर हफ्ते आफ डे होता। —शुक्रवार। हर शुक्रवार सुबह या शाम का खाना मिन्नी के साथ होता। न जाने कहां-कहां की बातें बटोर लिया करते दोनों, वक्त बिताने। किसी पल माहौल में धूप का अहसास होता, किसी पल छांह का और किसी पल सिर्फ बारिश! पर मिन्नी के भीतर इस कदर बाढ़ उमड़ी होगी—कहां जानता था अजित? और यह तो बिलकुल ही नहीं कि एक दिन यह बाढ़ सारे कूल-कगार तोड़ती हुई सब कुछ तहस नहस करके खुश होगी? पर यह बाद की बात! बहुत बाद की कहानी।

तब तो सिर्फ मिन्नी ने वसन्त का जिक्र किया था। बहुत बाद में पाया था कि वर्ष का एक मौसम वसन्त भी तो होता है। शिशिरारंभ!

मगर यह भी बाद की बात। उस दिन तो ऊबकर चला था मिन्नी के यहां से। यह भी बोझा लग रहा था कि लंच पर जाना होगा लंच पर जाकर भी एकदम थोड़े उठ सकेगा? मिन्नी उठने नहीं देगी। बातें बटोर कर बिखराने लगेगी और अजित को ऊब के समुद्र में डूबे हुए फिर फिर उस सब में तैरना होगा। तैरते ही जाना होगा! कितनी कितनी बार दम नहीं घुटेगा उसका?

गली में घुसते ही अनायास सुबह याद हो आयी। तब जब चला था मिन्नी के यहां। रेशमा नाइन गिर पड़ी है। पता नहीं कितनी चोट लगी। कहां? किस तरह की चोटें?

शाम को मालूम होगा।

सुरगा के चबूतरे पर वही कुछ बहस हो रही है   रेशमा का गिरना। सुरगो कह रही थी—' रे-रे !   देखा नही जाता था उसकी तरफ। भेजा सडे कददू की नाई खुल गया   चू-चू !   बेचारी !"

"बचारी काहे की !" शामलाल बडबडाया था—"सारी जिन्दगी घरवाला होते हुए भी राड की तरह जी—ई ! आदमी जो जो पाप करता है, इसी लोक मे दड भोगने पडते हैं भाई ! सुरग नरक सब यही हैं। नाक निपोड़ ऐसा करती थी कि बस, एक पवित्तरता है—तो इसीमे। साच्छात् गगामाई ! राज कीरतन रोज पूजा, रोज भगती !   "

"साई तो !" सुरगो ने आधी बात इस तरह उछलकर थाम ली है जैसे कटी पतग पकडी जाय। बहद उत्साहित। बोली —' जब जीत भगवान पर थूका ता कहा गयी पवित्तरता ? राड ! पापिन ! उसे तो देखते ही म्हो सिकोडती थी—थूक देती ! अब इसीके करम, इसी पर थूक रहे ह !   "

'बिचारा शभू नाई !   ' वैष्णवी सीतलाबाई ने अनायास ही शभू को याद किया था—'उसके लिए रेशमा ब्याही   न ब्याही सब बरोबर ही रहा सारी जिन्दगी ! राता मे राता कलपता रहा होगा ! ये तो उससे दस गज दूर रहती थी हमेशा !"

"हा हा ! मैंने खुद आख से देखा जिज्जी !   " सुरगो ने कहा था— रसोई से बाहर खाना दती थी उसे। कहती—तुझसे घिन आती है। थाली भी उसके सामने नहीं रखती थी। एक लम्बी लकडिया से सरकाकर उस तक पहुचा देती ! ऐसी कुलच्छनी को डड मिलना ही था !"

"सही बात है। आय नाग न पूजिये, बाबी पूजन जाये !' मैनपुरी वाली को लगा था कि अब तक का चुप, उसे अस्तित्वहीन बनाये दे रहा है, "साक्षात भगवान रखा था घर म—पति परमेसूर ! उसे तो पूजा नहीं और पत्थर पीपल पूजने चली ! लुच्ची कही की !'

"अब सड रही है तो कह रही थी—हाय रे भगवान ! ओ हा हा !" सुरगो ने फिर चर्चा चलायी।

मैनपुरी वाली को बेटा बुलाने लगा था खिडकी से। 'आई' कहकर वह लपक पडी थी उस ओर।

मुरगो उसे घूरती रही सहसा फुसफुसायी थी—"इस मरी मनपुरी वाली को तो देखो ! पति-परमेसर की पूजा का पाठ पढ़ा रही थी, जस हम जानते ही न हो कि पुराणिक बाबू और य क्या कैरम खेलते हैं सारी-सारी रात ? "

वैष्णवी हसी। शामलाल न उसे झिडक दिया, "क्या फुसफुस करती है घुनमुन की मइयो ! अपुन को क्या करना ! अपुन भले, जग भला !" वह उठकर भीतर चला गया

और धीमे धीमे कदम बढाता अजित घर की ओर रेशमा को अस्पताल भी पहुचा आये हैं और अब उसके घायल होने में पुण्य पाप, गुण दोष भी ढूढ रहे है। याद आया। कभी शभू नाई को लेकर ही इस चबूतरे पर मुरगा, वैष्णवी वगैरा के बीच चचा सुनी थी—'मरा मरता भी तो नही ! कौवे ने कोयल ब द कर रखी है—जहरी ! नाश हो इसका ! सीधा नरक जायेगा। कहा वह फूल की डली और कहा य मुरदा ! कैसा पाप किया है इसन ?

वही शभू नाई किस तरह परिभाषा परिवर्तित हो गया ! कभी का कोयल अचानक बेसुरी बना दी गयी है। नक स्वग को शभू रेशमा के बीच ट्रासफर कर दिया गया है !

अजित दुखी भी हुआ था—चिढा भी। आदमी अपनी सुविधा के साथ अपनी राय से स्वग नक, पुण्य पाप को कैस, किसी के भी हिस्से म पहुचा देता है ? किसी पल अपने लिए सोचता ही नही।

पर रेशमा नाइन गिर गयी ! पता नही कितनी चोट लगी होगी उसे ? अजित उखडा हुआ सा आगन पार करके अपने कमरे म आ पहुचा था। बेचारी ! अजित को याद है। एक बार भोजन पर बुलाया था उसन। अजित सुनासुनाया आशीर्वाद दे बैठा था—"सदा सौभाग्यवती हो ! ' और रेशमा ?

अजित के सामने चेहरा उभर आया है तब की सुहागिन रेशमा का। आखें, आवाज सभी कुछ तो छलक आये थे उसके भीतर से ? बोली थी, नही नही, लालाजी। अपना आशीर्वाद वापस ले लो। मुझ नहीं चाहिए। हाथ जोडती हू—यह आशीर्वाद वापस ले लो !"

वही रेशमा सारे जीवन सिफ दद की एक लकीर बन कर जिदा रही वही रेशमा आज अस्पताल के किसी जनरलवाड मे गदगी, असुविधा, उपक्षा के बीच पडी मृत्यु माग रही होगी मुक्ति !

कौनसा न्याय था, जिसके तहत शभू उसे मिला था ? और कौनसा याय है, जिसके तहत उस जीवन भर जलती रही औरत को अस्पताल का वह लावारिस बिस्तरा मिला है ?

केसर मा कहती हैं, " ऊपरवाले की लीला अपरम्पार। उसकी लाठी अधी है। "

सचमुच अधी। अधी न होती तो रशमा के साथ यह सब होता ? उसका प्रारभ और शायद अत।

छन छन छन्नन

अजित चौकता है। सीढिया पर उभरी अवाज तेज होती है, "कौन ? "

जरूर बटनिया ! चादर की तरह हर विचार फेंककर बैठ जाता है—आखें दरवाजे के पार। बटनिया वही से निकलेगी और अजित उसे रोक लेगा।

रोक भी लिया था, "बटनिया ? ' आवाज मे उत्साह था खुशी भी और और एक एसा आनन्द जो शब्दो से परे है।

वह थम गयी है। अजित देख रहा है। कीमती साडी, चम्-चम् करते गहने, पैरा म बिछुए और माथे पर दमदमाता सेंदूर का टीका ! माग सेंदूर से इतनी गहरी कि एक लाल लकीर ही दीख रही है

'कब आयी तू ?" जानकर भी जैसे बोलने के लिए अजित बोलता है। लगता है कि उसकी आवाज भीग आयी है।

"क्यो—तुझे नही मालूम क्या ?" वह उखडे, नाराज स्वर मे पूछती है। आखें सीधे अजित की आखो मे खुभा देती है।

अजित सिटपिटा जाता है।

देखता आया था उन्हें। पाटनकर बाजार के चौराहे पर ही बस रुकवा ली थी, "यहीं। एक काम है मुझे!"

'सलाम तो ले लो, यार!" ड्राइवर चिल्लाया था।

'राम राम!" अजित सड़क की ओर चलता बोला। कन्डक्टर हो गया है। इन सबसे यारी मिलाकर रखनी होगी।

अब उतर क्या गया यहां? उसने खुद से ही सवाल किया था। याद आया—मिन्नी के घर जाने के लिए। पर वहां तो तीन बजे पहुंचने को कहा था और अभी बजे हैं सिर्फ दो!

क्या फर्क पड़ता है। वह खुश चाल में बढ़ चला था मिन्नी के घर की ओर। उसे खबर देगा तो कितनी खुश होगी? वह सोचता जा रहा था। लगा था कि सारे बोझ उतर गये हैं। कन्डक्टर को एक सौ बीस रुपये मिलते हैं। काफी हैं। अजित सन्तुष्ट।

पर लोग कहेंगे—क्या कन्डक्टरी करनी पड़ रही है पंडितजी के बेटे को? जमींदार का बेटा और क्या हाल हुआ?

अजित को परवाह नहीं। कहते रहें। जब लेखक बन जायगा तो सब कहेंगे कि क्या बात है! इसे कहते हैं मोती होना! सीप से आखिर को निकलना तो मोती ही था! दूर से पहचाना गया और क्या!

बोली थी—"मुझे विश्वास नहीं था कि तू आ जायगा?"

क्या?" अजित भीतर जा पहुंचा।

उसने चिटकनी बन्द की थी 'तू कभी समय देकर सही वक्त पर आया है?" वह हंसी। अजित भी हंस दिया। सोफे में धंसता हुआ बोला, "आज मैं बहुत खुश हूं!"

उसने गौर से देखा।

'कन्डक्टरी मिल गयी!"

उसे जैसे धक्का लगा, फिर सम्भल हो गयी, "चलो परेशानी तो हल

हुई।" फिर बैठ रही। चुप।

"क्यों, तू खुश नहीं है।"

"नहीं!" उसने भड़ाम से पत्थर मारा।

"क्यों?" अजित ने चौंककर कहा।

"मिठाई जो नहीं लेकर आया?"

वह हँसे। अजित ने सहसा उदास होकर कहा था, "जरूर लाता मिन्नी, पर क्या तू जानती नहीं कि मैं पर पहली तनख्वाह पर तू जो कहेगी—वह खिलाऊँगा!'

"उधार दे दूँ तुझे?"

अजित ने कहा, "मैं माँगता तो नहीं, पर तू देना ही चाहती है तो दे दे।"

वह उठ पड़ी। आलमारी खोली, "कितने?"

"दस रुपये दे दे। "

'दस? इतने से क्या होगा?"

वह चौंका। दस रुपये की मिठाई सारे महल्ले में बाँटी जा सकती है। पूछा, "तू क्या ड्रम भरकर खायेगी?"

"नहीं। आखिर सिनेमा भी तो देखना होगा? कुछ ड्रिंक व्रिंक नहीं करवायेगा?"

"ड्रिंक?" वह सहसा गंभीर हो गया, "तू तू ड्रिंक" याद आया—गोविल, सक्सेना मिन्नी के लिए शराब अनजानी नहीं रही है। फिर यह कमरा। कीमती शराब की बोतलों में लगा मनीप्लाट जाहिर है यहाँ भी आती होगी। बोला, "तू चाहे तो मँगा ले, पर पर मैं नहीं पीता!"

"तू नहीं पीता?" वह जोर से हँसी।

"क्या?" सिटपिटाकर अजित ने पूछा।

"इसलिए कि तू तू मुझीसे झूठ बोल रहा है? अरे, मैं क्या तेरी चाची, दादी, दीदी हूँ, जो छिपायेगा?" मिन्नी पस लिये हुए खिड़की के पास जा खड़ी हुई थी।

अजित ने तय कर लिया था कि इसके सामने उजागर नहीं होगा।

मिन्नी पुकार रही थी, "एय। चरन? चरना-अ्- ?"

आया बहिनजी ई। " आवाज सुनी थी अजित ने। उसी लड़के को बुला रही होगी।

मिन्नी ने दरवाजा खोला। लड़का आ खड़ा हुआ। एक नजर अजित को घूरा फिर मुस्करा दिया। मिन्नी ने सौ रुपये का नोट उसकी ओर बढ़ाया था, 'जा। एक बोतल लाना व्हाइट हार्स की और एक सेर बंगाली मिठाई। छह समोसे।" सहसा मुड़ी थी अजित की ओर, "और कुछ?"

"नहीं नहीं" बुरी तरह घबराये पिटे स्वर में अजित ने जवाब दिया। लगा था कि मिन्नी के यहां आकर भूल की। जो कुछ बतला रही है, सब मिलाकर चालीस-पचालीस रुपये का नुस्खा हो जायगा। और पहली तनख्वाह में से ही अगर इतना रुपया लगा था कि अजित के भीतर से कुछ वजन घट गया है। गहरी कमजोरी का अहसास। उसने अपने आपको झिड़कना शुरू किया था—औकात से बाहर जाकर सगन करेगा तो यही कुछ भोगना होगा। आखिर सोचना था कि मिन्नी खेलती है रुपयों में और अजित एकदम मुफलिस। एक सब्जी बनना भी घर पर कठिन हो गया है। यहां आया ही क्या?

मिन्नी दरवाजा बन्द कर रही थी। लौटी। अजित उदास था। वह पर्स अलमारी में रखकर फिर सामने आ बैठी थी, "क्यों—क्या सोचने लगा?"

अजित ने रुआंसे होकर उसे देखा। बोला "बुरा मत मानना मिन्नी, मैं—मैं इतना रुपया किस्त में चुका पाऊंगा और अभी तो पहली तनख्वाह भी नहीं मिली?" अजित को महसूस हुआ था कि उसकी अपनी आंखों में शायद आंसू आ चुके हैं। बस, गिरने से रह गये हैं।

वह जोर से हंसी खूब ठठाकर!

अजित पागलों की तरह उसे देखता रहा।

"अरे, मैंने कहां कहा है कि यह उधार है? यह तो मैं मंगा रही हूं तेरी नौकरी की खुशी में और तेरा दम निकल गया? वाह रे जमींदार के बेटे?" वह फिर हंसी।

अजित ज्यादा आहत हो गया। कहा, 'तू क्या मुझे भिखमंगा समझती है? कंडक्टरी कर रहा हूं, पर इसका मतलब यह तो नहीं कि तू मुझे इस तरह नीचा दिखायेगी?" वह एकदम खड़ा हो गया। उत्तेजित।

वह एकदम चुप हो गयी। गुर्राकर देखने लगी। पूछा, "तू कंडक्टरी कर रहा है?"

"हां!" अजित ने कहा, "नौकरी है। तेरी तरह कालीन, सोफे का काम नहीं है, पर चोरी तो नहीं? आखिर काम करने से आदमी छोटा तो नहीं हो जाता? तू समझती क्या है मिन्नी? अपने आपको क्या समझती है? एं?"

"कहां है तेरी कंडक्टरी? " उसने चीखकर पूछा, "किधर है तेरा अप्वायंटमेंट लैटर?"

अजित सिटपिटा गया। अरे, उसने तो अपने को अभी ही नौकरी पर समझ लिया था। मिनमिनाकर कहा, "मिल जायगा। कल दिखा दूंगा तुझे!"

"तब तुमसे खाऊंगी मिठाई। अभी मैं मिठाई खिला रही हूं एक ऐसे आदमी को जो बेकार घूम रहा है बल्कि खुद ही खा रही हूं '

अजित चुप हो रहा।

' अब बैठ जा!" वह बोली, "फालतू ही अकड़ता है!"

और वह बैठ गया था।

मिन्नी मुसकरा रही थी। जाने क्या वह भी मुसकरा पड़ा था। मिन्नी बोली थी, "कितनी अजीब बात है अजित। तेरा स्वाभिमान इतनी-सी बात से आहत हो गया? तू सोच, अब तक मैं किस कदर आहत हुई हूं? सब जिन्दगी घाव ही घाव लगे हैं मुझे कितना दर्द होता होगा? तेरा साथ पाकर अगर मैं फिर से वही, छोटी मिन्नी बन जाना चाहती हूं तो कोई भूल करती हूं क्या? वही मिन्नी—जरा याद कर उस मिन्नी को अजित? याद कर!"

अजित ने उसे देखा। सहसा ही गंभीर भर नहीं हुई थी, भायें छल छला आयी थी उसकी। अजित बेचैन हो गया लगा कि यही मिन्नी है, जिसे कई बार खेल खेल में थप्पड़ मार दिया करता था वह। रो पड़ती

समझाता तो सिसकने लगती रूठ जाती

परेशान होकर चुप देखता ही रह गया है।

मिन्नी कहती है, "आज बड़े हो जाने से क्या उस वहम में जीने का हक भी जाता रहा हमारा ? बता ?"

"नही नही मिन्नी पर मैं क्या करू ? मेरा स्वभाव ही अजीब है !" वह क्षमा मागने के स्वर म बोला था।

"अजीब तो बहुत कुछ है अजित। क्या यह अजीब नही कि मास्साब की बेटी कालीन पर बैठी है ? क्या यह अजीब नही कि तू जमींदार का बेटा सुलझा सुसस्कृत होकर भी कडक्टरी करेगा ? और क्या यह अजीब नही कि एक नगी जिन्दगी पर मैंने मखमल उढा रखा है और हस रही हू ? कल के बेईमान, कगले मच पर खडे होकर गाधी के उपदेश समझा रहे है ? क्या यह सब अजीब नही ?" सब कुछ अजीब। यह अजीब ही तो सच है।

अजित चुप हो रहा था। ठीक ही तो कह रही है। सब कुछ अजीब ! सहसा वह उठ पडी थी, "मैं खाना लगाती हू। "

वह चली गयी।

वह उसे जाते हुए देखता रहा था। कसे गसे बदन की सुडौल मिन्नी लगता था पानी मे लहरो का एक रेला चला जा रहा है। वह अपने जिस्म से सदा ही लापरवाह रही कम से कम अजित के सामने। अजित ने उसे लेकर उत्तेजनाओ के दौर सहे है। एकात, चुप क्षणो मे कामुक कल्पनाए भी की है पर कभी कभी लगा है जैसे सब व्यर्थ। अगले ही पल वह अजित के लिए किसी तेज बहती नदी की धारा जैसी निर्मल और खूबसूरत हो गयी है। श्रद्धा और प्यार बटोरती। बस।

कितनी भावुक लडकी। पर किस कदर अजीब हालात से सामना करना पडा था उसे ? कभी सोचा होगा उसने ?

और अजित ने भी कभी सोचा होगा कि उसे कडक्टर बनना होगा ? केशर मा न ? उसके पिता, जिनका सारा जीवन सिर्फ हुक्म देते बीता, सोच सके होगे कि उनका एकलौता बेटा कडक्टर बनेगा ?

सब कुछ अजीब !

अजीब ही तो लगता है, जब गणित का सवाल किया जाये और सही हल न मिले ?

माथापच्ची किये जाओ कहा गडबड हुई ? या हल ही गलत है ?

यही ऊहापोह रह जाती है आदमी के पास। वह अजित हो या मिन्नी ? या बटनिया ?

रेशमा ने भी हिसाब लगाकर कहा सोचा था यह अन्त ? इतनी पूजा, इतनी भक्ति, इतनी श्रद्धा और, इस कदर अपनी उम्र को कुचलकर स्त्रीत्व का फूल मुरझाने की उम्र तक जी जाना कहा थी वह दुघटना ? अजित को मालूम है। उसने तो स्वग का हिसाब लगाया था।

उस दिन केशर मा चन्दनसहाय से बोली थी— " जाति से तो नाइन है, पर सारे सस्कार, क्रियाकलाप बाम्हना के से हैं उसके। मैं तो कहती हू कि ऐसे ही लोग तरते हैं। अजामिल जैसे पापी राम-राम कहकर तर गये तो रेशमा बेचारी तो सचमुच देवी है। सगमरमर जैसा मन, शरीर, *आत्मा सब। इसे कहते हु परलोक सुधारना।*"

रेशमा के गणित हल मे य परलोक सुधारना चाहिए था।

पर हल मे निकली एक दुघटना। मालूम नही—जियेगी या मर जायगी ! पर जी भी गयी तो मरन से बदतर हाल मे जियेगी। कराह-कराहकर पानी मागा करेगी, दद से उलट पुलट होती हुई रातें काटेंगी। यह हुआ रेशमा का स्वग !

अजीब।

और क्या सिरीपालसिह के साथ अजीब नही हुआ ? सहोद्रा की गोद मे बच्चा देकर सिरीपालसिंह लकवा खाये पडा स्वय एक बच्चे की तरह आते जाते लोगो को देखता रहता है

बोल नही पाता। लकव ने चेहरे का काफी कुछ हिस्सा मृत कर दिया है। दवाइयो के असर ने होठो को हिलन की शक्ति दी है, पुतलियो को घूमने की, फिर भी सहजता और स्वाभाविकता नही आयी। इसके बाव-जूद सिरीपालसिंह ने नि शब्द रहकर भी जैसे अपने गणित का हर आकडा, हर मीजान बयान किया है कितनी कितनी बार अजित न ही देखा है यह हिसाब।

अजित को याद है। पति की कापुरुषता स निराश सहोद्रा अक्सर सिरीपाल सिह के यहा आ जाया करती थी। हट्टा कट्टा सिरीपाल उन दिनो महल्ले मे सधे बधे शरीर के लिए सराहा जाता। सहोद्रा और सिरीपालसिह घटा कमरे मे बैठे पता नही कहा कहा की बातें बतियाते रहते फिर य बातें कब उनके बीच गणित बन गयी थी—किसी को पता नही चला था। पर हिसाब का कागज किस पल, कैसे महल्ल म फड फडाया—यह भी मालूम नही। सब जानने लगे थे कि सहोद्रा और सिरीपाल के बीच कुछ चल रहा है। यह चलना इस कदर दौडा कि सिरीपालसिह के बहू बेटे—बदनसिह और उसकी घरवाली—घबराने लगे। वैष्णवी न एक दिन बदना और उसकी घरवाली को बुलाकर सम झाया था, 'भइया, तुम लोग हो नई पीढी। आदमी का तन माटी का दीया होता है। माटी कच्ची हो तो गल जाय, तेल चुके तो बुझ जाये। नतीजा एक ही कि जिसने आत्मा पर शरीर धरा है, एक न एक दिन ससार से जायेगा जरूर। पर शरीर जब तक न जाये, उसे सभालना तो पडता ही है "

बदनसिह और उसकी घरवाली समझ नही पा रह थे। क्या कह रहे है पाडे पडियाइन? टुकुर-टुकुर उनका मुह देखते, कनखियो से एक दूसरे का समझ बूझ लेते। पर चुप।

अजित गली मे ठीक पाडे की दीवार के पास 'अप्टा चगा पै' खेल रहा था। चलता गोटी पर ध्यान पाडे की बाता पर।

पडियाइन, यानी वैष्णवी सीतलाबाई बतलाने लगी थी—"सीधी सीधी बात ये है कि हम पर देखा नही जाता और तुम लोग हो कि ससार को समझते नही। बरखा आन से पहले बादल गडगडाते कम है धीरे से आकर कालिख की तरह सिर पर फैल जाते ह। आदमी की जात को कुछ पता ही नही चलता।"

बदनसिह और उसकी घरवाली फिर चुप।

अगली बात पाडे ने सम्हाली, "फालतू बातें क्यो करती है? साफ साफ बतला दे। नयी उमर के लोग है, चक्करबाजी क्या जानें?" फिर वह बदनसिह की ओर मुडा था— देखो भाई, ये सहोद्रा जिस तरिया

तुम्हार बाप के सिर पर चढ रही है, इससे किसी का कुछ नही बिगडने वाला ! नतीजा तुम लोगों को भोगना पडेगा !"

"सिरीपाल भइया का भी क्या कसूर ? "वैष्णवी ने कहा—"वह तो मर्द हैं। बाकी सब मामले म भले तेज हा, पर कुटनिया का फेर नही जानते !"

"मद है तो मद की तरह रहें। सोचना चाहिए कि न बदना छोटा है न उनकी घरवाली। आखिर को सब दख-समझ रहे हैं "

बदनसिंह और उनकी घरवाली काफी कुछ समझ गये थे। कुछ पहले से समझ रह थे।

पाडे न बात खत्म की थी—' वैसे मुझे ता लगता है कि सहोद्रा का स्वारथ सिरफ गोद भरने के अलावा कुछ नही है, पर आगे अगर उसके दिमाग म कोई बात और घुसी हो ता पता नही कोई किसी के पेट म तो बैठा नही है, क्या सीतला ?"

"पट म भी बैठा हो तो बिना डागधरी आये, नसें थोडे पहचान लेगा ?" पडियाइन न जोर लगाया।

"हा अ। कहती तो ठीक है। अब असल बात है भइया, कि तुम्हारा घर-बार है, जमीन-जायदाद है, किरपा से चार पैसे भी होगे इन सबको बचाओ ! अगर सहोद्रा एसे ही डिलेवर साहब पर जादू की लकडी घुमाय रही तो किस दिन सब सरका लेगी—पता ही नही पडेगा !"

"बाकी कोई डर नही है ! ऐसे पर भी सहोद्रा बाज न आये तो मरेगी वह। औरत जात ह। मद का क्या बिगडता है ? और कोई सिरीपाल भइया तो उसके यहा जाते नही ? वही आती है आये !' सीतलाबाई बोली थी।

उन दिनो सहोद्रा सुनहरी के घर स निकाली गयी थी। घरवाले का लेकर ड्रायवर सिरीपालसिंह के ही एक कमरे मे समा गयी। किराया देती थी, पर देती है कि नही—किसन देखा ? सिरीपालसिंह और उसके बीच बहुत कुछ अनदेखा था !

बात जम गयी थी बदनसिंह और उसकी घरवाली के बीच। कहा था, "आप चिन्ता मत करो पाडे कक्का। हम सब ठीक कर लेंगे !"

बदनसिंह न पत्नी को विदा कर दिया था।

पाडे पडियाइन जाने क्या-क्या पट्टी पढाते रहे थे उसे। बदनसिंह को लगा था कि मुहल्ले म एक वही हैं, जिन्होंने दूर तक बदनसिंह और उसके भविष्य के बारे म सोचा। पडियाइन बोली, "यह सब कहने की जरूरत तो नही थी भइया! पर तुम्हें नगा देखा है। रामजी न मेरी गोद तो भरी नही, पर दूसरो के बाल-गोपाल देखकर ही छाती ठढी कर लेती हू तुम पर जुल्म होते देख नही सकी। मन नही माना, इसीलिए कह-सुन दिया। अब तुम जानो!"

बदनसिंह की आखें भर आयी होगी कैसी ममता टूट पड़ी थी उसके लिए! खुद की मा मर गयी थी। न मरी होती तो सिरीपालसिंह किस लिए सहोद्रा के अटे चढता?

बस उस दिन का दिन कि सहोद्रा को लेकर बदनसिंह और उसकी घरवाली ने वह ताडव मचाया कि सिरीपालसिंह शिव की हैसियत स गण की हैसियत म जा पहुचा, शिवत्व ट्रासफर हो गया था बदनसिंह म।

अजित को याद है। सिरीपालसिंह ज्यादातर चुप रहने लगा था। आये दिन सहोद्रा और बदनसिंह की घरवाली म युद्ध होते। बात किरायेदार और मकान-मालिक के मसले स उठती और बार-बार सिरीपालसिंह के कैरेक्टर पर जाकर खतम हो जाती। वैष्णवी और पाडे या और और लोग दौडकर समझौता करवाया करते। एक दिन सहोद्रा की गोद म नन्हा मुन्ना आ गया था। बिल्कुल सिरीपालसिंह का अक्स! जैसे दरपन से छाया उतर आयी हो उसकी। जाकर सहोद्रा की गोद म समा गयी हो! सबने सहोद्रा को बधाइया दी बदनसिंह की पत्नी को देवी आयी। देवी के निर्देश पर सहोद्रा को घर छोडना पडा। किसी और गली घर म चली गयी। सिरीपालसिंह को मार गया लकवा

कुछ दिनो सहोद्रा तबीयत देखने आती थी। अजित के सामने ही कई बार आयी। सिरीपालसिंह सहोद्रा को देखता। उसके होठ फडफडाते, पुत लिया घूमती फिर एक दिन सहोद्रा को न जाने क्या हुआ कि वेहद भावुक होकर गोद के बच्चे को सिरीपालसिंह की चारपाई के पास इस तरह लगाया कि सिरीपालसिंह बच्चे को प्यार कर सके। अजित ने देखा

था कि बेहद लाचार सिरीपालसिंह के शरीर मे तेज छटपटाहट हुई थी शरीर के जीवत हिस्से थरथराकर काप उठे थे, पर निर्जीव थे—निर्जीव ही रहे ! वह गरदन मोडकर बच्चे को चूमना चाहता था, पर नहीं मुडी थी गरदन !

बेबस, लाचार सिरीपालसिंह की घूमती पुतलिया किसी अनाथ बच्चे की तरह उस बच्चे को देखने लगी थी और तभी अजित ने पाया था कि सिरीपालसिंह की आखो से दो बूद चमचमाते आसू झरकर कनपटियो के पार ढुलक गये ह। जिन्दा रह गये एकलौते हाथ से उन्हें पोछने लगा था

गोद म बच्चा उठा चुकी सहोद्रा बोली थी, "अरे, सिरीपाल भइया ? मद होकर बच्चो की तरिया रोते हो ? भगवान सब ठीक करेगा ! अब मैं जाऊ ?"

और सिरीपालसिंह के होठ हिल सके, इसके पूव ही एक झटके से मुडकर सहोद्रा मुसकराती हुई बाहर चली गयी थी वही सहोद्रा, जिससे कभी सिरीपालसिंह ही ऊबकर कहा करता था 'अब तू जा। बहुत रात हो गयी ! अच्छा नहीं लगता !"

और वही सहोद्रा चली गयी थी

सिरीपालसिंह अपने गलत गणित पर बिना कराहे, बिना छटपटाये सिफ कनपटी और आसू के बीच एक गम रिश्ता पीता रहा था

अजित सोचता है—क्या कुछ नहीं उबलता होगा उसके भीतर ? जीवन और इरादो के बीच के कितन कितने सवाल ? व सब, जो उसने कभी सोचे होगे दिमाग म हल किय होग कागज पर उतारने की तरह जिन्दगी म उतार लेने चाहे होंगे ?

पर व्यथ।

और सहोद्रा ? उसके लिए सब कुछ न्यय—सिफ अपना गणित सही। सही निकल गया।

किसने किया सही ? सहोद्रा मानती है कि उसने स्वय। तब सभी तो यही मानते थे कि उसीका सही किया हुआ स्वय अजित भी यो ही सोचता था

पर अब लगता है कि शायद नही।

बेशक नही। भूले भटके जिनके गणित सही हो जाते हैं, उन्हे यही लगता कि उन्होंने हल निकाल दिये। पर कोई छोटा सा गणित, हर पद्धति सही निबाहने के बाद जब गलत हो जाता है, तब समझ मे आ जाता है कि नही—हल तो कही और हैं, आदमी के पास हैं सिर्फ आकडे। वही उसका सत्य।

और एक अजाना सत्य है—हल।

पर इस अजाने और जाने के बीच अनोखा रिश्ता। बिना आकडे उठाये—हल की खोज व्यर्थ। और हल पा जाने पर दोनो के भेद की खोज का अनत सिलसिला यही हमेशा चलता आया है यही चलता जा रहा है

खुद अजित ने इस रिश्ते को समझा है

जया मौसी बोली थी—' तब बेचारी मिन्नी ने यही समझा होगा कि ठीक कर रही है सारा हिसाब किताब तो ठीक से लगा लिया था, पर कहा जानती थी कि होनेवाला वह है, जो उसने सोचा ही नही। जिसका भय ही नही था।

'हा अ मौसी !" अजित ने पलकें मूद ली थी। माथा बुरी तरह घूम रहा था। कहा था—'अब परसो आऊगा तब तक के लिए मुझे इजाजत दो!' खा पीकर निवृत्त जो हो चुका था

पर जया मौसी बहुत पी जाने की आदी। इतना जहर पिया था उन्होने कि छुटपुट जहर असर नही करते थे। पूछा 'क्यो अपना वादा निबाह चुका, मुझसे वादा निबाहने को नही कहेगा रे?'

कहूगा जरूर कहूगा—पर कल। नही नही, परसो।" वह उठ पडा था

जया मौसी ने रोक दिया, 'तू ठहर। मैं कस्तूरी से कहती हू। किसी को भेजकर टक्सी मगवा लेती हू।' फिर उन्होने कस्तूरी को

बुलाया, निर्देश दिय। अजित न 'ना' की थी, पर ज्यादा नही। वह भी समझ रहा है। सीढिया उतरते ही टैक्सी लगेगी।

खुद जया मौसी सीढियो तक छोडने आयी थी। पता नही—क्या क्या बडबडा रही थी। कुछ याद रहा, कुछ नही

" तेरी घरवाली क्या कहेगी ? विमला नाम है ना उसका ?"

हा अ ! " अजित बोला था, "वह मुझे जानती है। कुछ न कहू, तब भी कुछ नही कहेगी। सब कह दू, तब भी कुछ नही ' वह उतर गया था।

'तू सुखी है र ! " सहसा जया मौसी का गला भर्रा गया था।

अजित न टैक्सी मे समाते हुए कहा था, 'सुख ? हा अ, सब सुखी ही तो हैं सुखी न रह ता कर भी क्या सकते है अपना और किसी और का ? "जाने कैसे हसकर वह टैक्सी मे धस गया था।

टैक्सी स्टार्ट हो गयी।

पर ये सब बातें बहुत बाद की ह। तब की नही—जब अजित सुख और दुख को समझने के गोरखधधे म उलझा ही उलझा था उसमे पहले दुख से सिफ डरता था। उसका स्मरण तक नहीं चाहिए—साथ तो दूर।

फिर सुख और दुख को सहज समान भाव से नापने तोलने लगा। जीवन गणित के व्यापार मे जैसे हासिल बच आत है—उसी तरह य दोनो आते है। किसी आकडे की तरह सुख और किसी शून्य सत्य की तरह दुख!

माना जाता है कि यह शू य खाज पाना ही भारतीयो का मानवता और ससार के लिए सबसे बडी देन ह। सब गणितज्ञ, वैज्ञानिक और लेखक कहते ह—माना भी गया है। इसके बिना गणित न आरभ होता है, न समाप्त!

पर अजित को लगता है कि इस शून्य की खाज केवल गणित के लिए

लेटी हुई थी। शायद प्रतीक्षारत। घडी देखी ठीक तरह कुछ दिखा नही। शायद देख नही पाया।

उन्होने द्वार खोल दिया था। शायद सिर स पैरो तक अजित को देखा परखा भी होगा। अच्छा भी नही लगा होगा, पर पूछा था, 'खाना तो खाओगे ना ?"

'नही !" कहता हुआ अजित तीर की तरह बैठक मे घुसा और पलग पर जा बैठा था। एक-दो पल बाद कपडे उतारे लगभग फेंकने की मुद्रा म। पत्नी ने उन्हे सम्हाल लिया हागा। नयी आदत नही है। बाहर से आते ही सबसे पहले कपडे फेंकने लगता है। निलकुल अडरवीयर बनिया इन तक पहुचकर सहजता महसूस होती है। अक्सर खुद ही अच्छा नही लगता! छोटे शहर मे यह चल जाता था अब ता शायद वहा भी नही चलता।

पर आदत बहुत पुरानी आदत है। अजित—किसी दिन पाच सितारा होटल मे भी हा—तब भी यही करेगा!

"क्या हुआ ?" पत्नी पास आ बैठी थी।

"कुछ नही—याही। अपनी ही एक आन्त पर हसी आयी" लेटकर अजित बडबडाया था, "अच्छी आदत नही है पर फिर भी। आदमी अपने गलत पर भी कभी कभी कैसे निलज्ज भाव से हसना सीख लेता है ?"

वह चुप हा रहीं। अजित की इन लेखकाना बातो के फेर मे उलझ-कर अपने सत्य से परे हाना विमला का स्वभाव नही है। सहसा अजित न पूछा था, "तुमन खाना खाया ?"

'हा।" कहकर वह उठ गयी। अपने पलग पर जा पहुची। अजित चुप हो रहा। पलकें मूदी—नीद आ जायेगी। पर ह्स्की ज्यादा हा जाये तो कम्बख्त नीद भी बचैनी मे वदल जाती है! उसन करवट बदल ली थी।

अनायास ही उसे फिर से जया मौसी याद हो आयी। मृत्यु-सत्य का समझती है, फिर भी मिन्नी की कहानी मे रुचि क्या ली ? खुद अपनी कहानी से त्रस्त और आक्रात क्यो है ? आसू किसलिए आते ह ? फीकी,

तीन

उसने खाना लगाया था। चरनसींग बोतल, मिठाई सभी कुछ ले आया। अजित बीडी पीता हुआ चुपचाप देखता रहा था उसकी फुर्ती। सब कुछ बडी गभीरता और यात्रिकता से किया था उसने। मिठाई का एक हिस्सा प्लेट मे सजाकर डायनिंग टेबल पर रख गयी थी और बोतल अल मारी मे। लौटकर बैठते हुए बोली थी, ' खतम हो गयी थी ना मुझे तो मगानी ही थी।"

फिर वह खाना परोसने लगी थी

"यानी तू रोजाना ही "

"हा।" उसने यात्रिक ढग से ही जवाब दे दिया था, 'आदत पड गयी है।"

"पर मिनी, अच्छी आदत नही है यह "

"अच्छी आदत कौन-सी होती है—बतला ?" वह हस दी।

अजित चुप रह गया। कडवा जिक्र है। टाल देना ही ठीक। खाना शुरू करते हुए फिर पूछ लिया था, "तूने बिना सोचे समझे यह कैसे कह दिया था कि मैं भी पीता हू ? "

"तू नही पीता ?" उसने आखे सीधी अजित की आखो म खुपा दी।

सकपकार कहा था अजित ने, "नही !"

"पर मुझे मालूम है तू पीता है !" उसने इस दृढता के साथ कहा कि वह सकपका गया—और ज्यादा।

चुप रहा।

' जब पीता ही है, तब छिपाने की क्या जरूरत ?" वह बडबडायी थी।

"यह झूठ बात है। तुमसे कहा किसने ?" वह झूठ को खीचने लगा

था। रबर की तरह। नही जानता कि रबरें टूटने के लिए होती हैं। खिचने से नही तो गल जाने से। पर टूटती जरूर हैं।

"मोठे बुआ ने।"

"मोठे ने?" अजित चौंका। ग्रास हाथ मे ही थम गया, "वह भी आया था यहा?"

"हा, एक बार कन्नो को उसकी जरूरत पड गयी थी। मैंने ही बुलवाया था उसे।"

"पर तू तो बिलकुल पसन्द नहीं करता था उसे?"

"लगता है कि गलती करती थी।"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि वह कडवा है, कई कई बार सीना चाक कर डालने तक जहरीला भी है—पर है सच्चा।" मिन्नी ने बडी शान्ति से उत्तर दिया था।

अजित चुप रह गया। शायद ठीक ही कहती हो मिन्नी। मोठे बुआ को कभी न पसन्द कर पाने के बावजूद नापसन्द करने का दुस्साहस अजित भी नही कर सका है। पर मोठे बुआ जैसे आदमी की जरूरत कन्नो को क्यों पड गयी? इतनी कि मिन्नी उसे बुलाने को लाचार हुई।

"हुआ क्या था?"

'कैसा?'

"मेरा मतलब है कन्नो को मोठे बुआ की जरूरत क्यो पडी?"

'दुनिया म किसको किसकी जरूरत नही पडती?" मिन्नी हस पडी थी "तुझे मालूम है ना कि दूसरी लडाई म कम्युनिस्ट रूस को पूजीवादी अमरीका की जरूरत पड गयी थी बस, वैसे ही कन्नो का—या कह ले कि मुझे मोठे बुआ की जरूरत पड गयी!"

खीझ गया अजित, "बात मे फालतू चक्कर मत डाल। सीधे सीधे बता।'

"सीधे ही तो बतला रही हू।" वह बोली, "बडी बडी बातें ऐसी ही होती हैं" वह उसी तरह मुसकराती हुई कहे गयी थी, "देख नही रहा है। आजादी के बाद भला कागरस को राजा महाराजाओ की जरूरत क्यो

पड रही है ? इन राजाओं को तो खत्म करने की बात किया करते थे नेहरू जी ? पर नेता भी इन्ही को बनाये दे रहे हैं। सो क्यो ? यह जो अपने को बचाने और स्वग नक, हर हाल मे बचाये रखने की आदमी की आदत है ना, इसके कारण झूठ और सच मे ऐसा अजीब रिश्ता है कि दोनो एक दूसरे को नापसन्द करते हैं विपरीत भी होते है—पर एक-दूसरे के मोह-ताज भी हैं। "

"हा।" अजित ने मुडकर कहा था, "और फिर झूठ और सच ऐसे गड मड् हाते हैं कि दोनो मे फरक करना ही मुश्किल हो जाता है—है ना ?"

वह हसी, "बिलकुल। जैसे रूस अमरीका हुए है। "

"अच्छा, बकवास छोड। हुआ क्या था ?" अजित के भीतर जैसे एक खलबली मच गयी थी।

"बतलाऊगी। फिर कभी।" उसने टाल दिया था उसे। खाना खत्म हुआ। व यहा वहा की बातें करते रहे थे। उसके बाद चाय बनायी थी उसने। पूछा था, "शाम को आ रहा है ?"

"नही। "

"कल ?"

'आऊगा। " वह उखड गया था। मोठे बुआ किसलिए आया था ? बन्नो को उससे क्या काम पडा ? और फिर बात यहा तक पहुची कि मोठे को अजित के एक बार शराब पीने का रहस्य उजागर करना पडा ? इतनी फोश बातो तक।

एक खलबली महसूस की थी उसने, पर समझ चुका था कि मिन्नी वह सब सुनाने के मूड मे नहीं है। अजित मोठे बुआ से ही पूछताछ कर लेगा। वह बतलाने मे नही हिचकेगा। यही सोचकर जल्दी निकल आया था वहा से। अजित को मिठाई दे दी थी मिन्नी ने, "बाट देना। मेरी तरफ से। तेरे काम की खुशी मे।" अजित ने ना नुच की, फिर ले आया था।

खुश था—केशर मा के सामने मिठाई रखकर कहेगा, "लो मा। मुझे काम मिल गया है।" बहुत खुश होगी।

और सचमुच बहुत खुश हुई थी। आखें छलछला आयी थी उनकी।

अपने रूखे लहू से रीतते हाथों को अजित के सिर पर हौले हौले दुलारने लगी थी। अजित बुदबुदाया था, 'अरे-रे, बाल खराब हो जायेंगे मेरे !" पर उन्होंने परवाह नहीं की। बोली थी, "ठीक ही कहा है किसी ने आखिर को भगवान है। तेरी-मेरी सबकी सुनली।" अजित जाने को हुआ तो कहा था "सुन सबसे पहले जोशी साहब को ही देना। होटल से खाना खाकर रात तक आते हैं "

"तुम्हीं भिजवा देना।" कहकर अजित बैठक से निकल आया था। पर आगन में आकर थम गया। बटनिया पर नजर पड़ी। भीतर—चन्दनसहाय के कमरे में दिखी थी मन हुआ था—जाकर मिले, पर सुबह का उसका रुख याद हो आया। बाहर आ गया। छोटे आफिस से आ चुका होगा। या आने का होगा। उसे खबर देनी है—काम मिल गया।

पर खबर दबर सब भूल गया देखा—मोठे बुआ, छोटे बुआ, टापनदास सभी गली के बाहर की ओर दौड़े जा रहे हैं। अजित भी लपका, 'क्या हुआ ?"

रेशमा अस्पताल से लायी गयी है यार।" मोठे ने दौड़ते दौड़ते बतलाया था ' बिसर्नी चारपाई ऊपर चढ़ानी पड़ेगी !"

शंभू नाई के कुतुबमीनारनुमा मकान की सीढ़ियों के सामने एक चारपाई रखी थी। चारपाई पर रेशमा शायद नहीं ! पट्टियों में बंधा एक शरीर ! रंग रूप—सिर्फ पट्टियाँ। स्तब्ध, घबराया हुआ देखता ही रह गया है अजित वही रेशमा, जिसका जिस्म संगमरमर की तरह चमचमाता था ? वही—जिसे विक्टोरिया रानी के पूरे पाव सौ कलदारों से शंभू ब्याह कर लाया था ? वही—जिसके रूप को लेकर अजित अपने भीतर आनंद, पर श्रद्धा एकसाथ अनुभव करता था वही—जिसे एक बार अजित और मोठे ने एक बदमाश से बचाया था ? और वही रेशमा—जिसने सारा जीवन अपनी उजली सफेद धोती और गोरे दगदमाते बदन की ही तरह साफ धुला बिताया था ? सिर्फ भीतर की मटक बटारी थी, सिर्फ पूजा पाठ, व्रत उपवासों से स्वर्ग सीढ़ियों की खोज का इरादा किया था ? वही रेशमा—इस तरह ? इस हाल में ?

अजित टकटकी बांधे हुए देख रहा था। उस ओर से बेखबर, जो इद

गिद हो रहा है चारपाई, सकरी सीढियो से ले जाना समस्या हो गयी है शामलाल ने कहा था, "इन्हे बरामदे मे ही रहना होगा। ऊपर ले जाते हुए कुछ कम ज्यादा बात हो गयी तो ज्यादा परशानी खडी हो जायगी।"

कुछ आवाजें उठी थी, "हा हा, ठीक है।'

"पर यहा तो धूप बारिश सभी का डर है साहब!' रेशमा के बहनोई ने उलझन पश की।

"अरे, काई साल छह महीने का राग है क्या? एक दो महीने"

"डाक्टरो ने चार महीने कहा है"

"उनके कहने पर खाक डालो जी! वे तो मरते को कहते है कि वाह वाह क्या रौनक आयी है आप पर? कम से कम साल भर लगेगा—देख लेना!"

'बिलकुल बिलकुल।" पाडे बडबडाया था, 'सात फ्रेक्चर है साहब! अकेली एक टाग ही तीन जगह से टूटी है। कोई हसी खेल है?"

"हाँ। बरामद म ही रहने दो!" सुरगो न कहा था।

अजित चुप। कुछ सुन पा रहा है, कुछ नही जी होता है कि इस रेशमा को झकझार डाले, पूछे, "कहा है तेरा भगवान? इतने व्रत पूजा-पाठ, उपवास? तीरथ? सब बेकार हो गये?'

"पूरब ज म के फल है साहब!"

"उस सबको छोडा!' मोठे चिरताया था, 'करना क्या है—वह बतलाओ।"

बहुत न राय दी थी—बरामदे म रहन दो! फिर बरामदे का उपचार ढूढा गया था। धूप बारिश से रक्षा। दरवाजो पर कही पुरानी दरी, कही टाट और कही चिकें लटकायी गयी थी बहनोई न कहा था, "बारिश तक एक तिरपाल ले आयेंगे।"

और लगभग दस पन्द्रह मिनिट म ही सब व्यवस्था करके व क्रमश विदा हो गये थ। बचे थे, सिफ छोट, मोठे और अजित। अजित अब भी रेशमा की ओर देख रहा था

सिर पर भी इतनी पट्टिया हैं कि चेहरा नही दीखता। सिर्फ आखें। एकदम बच्चे की आखें। इन आखो तक को परदे मे छिपाये रहती थी रेशमा, पर अब बेबस। सिर्फ मूद लेती है बाकी चेहरा ढका हुआ। डाक्टरो न स्थायी घूघट लगा दिया—म्यादी। कम से कम दो-तीन महीने!

'भाभी ?" रशमा के करीब झुक आया था अजित।

वह बोल नही सकती। सिर्फ देखा, आखें भर आयी। यही जवाब! व लौट पड थे।

उस वक्त पूछना चाहता था अजित, 'क्यो मोठे, मिन्नी के यहा किस चक्कर मे गया था तू ? ऐसा क्या काम था कन्ना को ?'

पर नही। मन नही। रशमा को दखकर जी बिगड गया।

'बेचारी। " सहसा छोटे बुआ बडबडाया था।

तकदीर का चक्कर है यार!" मोठे ने गहरी सास ली।

'यह हुआ कैसे ?" अजित ने एकदम कहा।

'केत ह सुबरे सुनर तीन मजिले से तुलसी की पूजा करन जा रही थी। जिसका रोज का नियम था पता नही पाव कैसे फिसला एकदम नीचे चली आयी और हो गया काम!"

अभी बात खत्म हो कि थम जात ह। सुनहरी के घर से आवाजें आने लगी है। मोठे कहता है ला। रडी भडवे फिर शुरू हो गये। "

सुनहरी एक छोटी सी लोहे की सदूक लेकर दरवाजे से निकल रही है—पीछे पीछे चेचक के बदनुमा धब्बोवाला एक काग्रेसी। अजित गौर से देखने लगता है। इसे अक्सर रलडिब्बा रेस्तरा म बैठे देखा है उसन ? क्या नाम है इसका ? तभी वह अजित को दखता है। एकदम सिटपिटाकर बुदबुदाता है, 'जैहिन्द अजित बाबू!'

जैहिन्द। 'अजित एकदम मिनमिनाता है 'आप ? "

'तेम ही जरा इनके यहा तक आया था " वह लगभग सफाई देने के टोन मे कहता है। उडती नजरें मोठे बुआ पर भी। सहम जाता है। सुनहरी भी कुछ घबरा गयी है।

'अच्छा अच्छा " अजित का कहना पडता है।

आप यही कही '

"ये, बगलवाला मकान हमारा ही है।"

"ओह अच्छा-अच्छा!" वह चेहरे का पसीना पोछता है।

'चलो चलो। " सुनहरी एकदम से फुसफुसाकर उसे टहोका मारती है।

सारा महल्ला दरवाजो पर।

"जा रही है तो जा। पर याद रखियो—आगू कभी इस मकान मे तो दूर—इस गल्ली मे दिखी तो तेरे परखच्चे उडा दूगा!" जमनाप्रसाद बाहर आ गया है।

सुनहरी होठ भद्दे ढग से बिचकाकर जवाब देती है "हुह। मरा भगेलची। " फिर टहोका मारती है, 'चलो ना ठेकेदार? काहू को तमासा "

वे चलने लगते हैं। सहसा अजित के करीब से माठे बुआ तूफान की तरह गुजरता है, "ऐय! सुनहरी-- जरा रुकने का।"

ठेकेदार और सुनहरी थम जाते हैं। चेहरो पर हवाइया। ठेकेदार के माथे पर पसीने की बूदें छलक आयी हैं लगता है कि पाजामे मे पैर भी काप रहे हैं उसके। जल्दी-जल्दी हाठो पर जीभ फिराता है।

अजित एकदम उनके पास—करीब है पर माठे बुआ तो लगभग सट ही चुका है दोनो से। एक गुराहट, "क्या चक्कर है?'

"चक्कर? कैसा चक्कर?" ठेकेदार हिम्मत सहजता है, "अजी, चक्कर कैसा?"

"क्या बात है माठे भइया?" सुनहरी का सवाल जैसे बच्चा आदेश पूछता हो।

सब चुप हैं। वातावरण मे सिफ बैकग्राउन्ड म्यूजिक की तरह राम प्रसाद के बेटे जमनाप्रसाद की गालिया हैं, खीझ है और हैं शिकायतें? "हरामजादी। अब क्या खुल्लमखुल्ला लोगो के घर जा बैठेगी? जित्ता किया—उससे क्या पेट नही भरा? जा। शौक से जा कुत्ती। जा! मैं भी समझा लूगा--रडुआ का रडुआ ही रहा "

वातावरण मे गहरा तनाव। अजित जानता है कि मोठे के बीच मे उछल आने से पैदा हुआ है तनाव। किसी मामले मे मोठे जब उछलता है

तो लगता है फौजदारी की दफायें उछल आयी हैं

मोठे नथुने फुलाये हुए उन दोनों को देखता है, फिर सारे महल्ले को। कहता है, "ऐ नेताजी! जरा तसल्ली से सारी बात समझाओ।"

बदनुमा चेहरेवाला ठेकेदार' या नेता, जो भी है सहमा हुआ सबको देख रहा है, फिर मोठे को

"चलो, ऊपर चलकर बैठते हैं।" सहसा मोठे ने बाँह पकड़ ली है उसकी, ऐसे, जैसे हवालात में ले जा रहा हो। वे पुन रामप्रसाद के घर की ओर वापस हो जाते हैं। सन्दूक लटकाये सुनहरी पीछे पीछे। मोठे कहता है, "अजित! छोटे! जरा आना तो।"

सब चुप हैं। अजित न चाहकर भी जाता है। जाना होगा। लगता है कि कोई कहानी होगी

और कहानी है

हाँ, क्या चक्कर था?" मोठे के पूछने के साथ ही ठेकेदार सिगरेट निकालकर जवाब देता है—"पूछलो इन दोनों से। मेरा कोई मतलब नहीं।"

'बात जे है मोठे दादा।' जमना बड़बड़ाता है, "इस कुतिया के करम तो तुमसे छिपे हैं नहीं? यारों से बड़ा सोना उगाहा, जब देनेवाला असल यार ही एक दिन सब उड़ा ले गया तो क्या करें? तब तक ये भाई साहब जान कहाँ से इसके अन्टे चढ गये। जानते हैं कि दूसर की जोरू है—पर मोहब्बत कर रहे हैं। करे जा रहे हैं साहब! कांगरेसी हैं और कांगरेस का राज आ गया है तुम जानो"

पाल्टी को बीच में मत लाओ!' ठेकेदार गुरगुराता है।

"तुम चुप रहो जी!" मोठे बुआ घुड़क देता है उसे। अजित और छोटे स्तब्ध बैठे हैं।

ठेकेदार चुप हो गया। अजित की ओर सिगरेट बढ़ा देता है, 'लीजिए साहब, नोश फरमाइए!"

अजित सोचता है फिर निश्चिन्त भाव से सिगरेट निकालकर सुलगाता है।

"तो साहब बात जे कि अब जे कहती है, मैं यार के साथ जाऊँगी।

और ये मेरी जिनगी ठिकाने लगायेंगे। "

"अरे, मूठे। तेरे मुह मे आग पडे। कीडे पडें तेरी झूठी जबान को!" सुनहरी एकदम बिफर पडती है

"अरे रे, गाली मत दो सुनहरीबाई!" माठे का स्वर।

"ठीक है गाली नही देती पर जरा इससे पूछा तो कि मैं कहा जा रही हू काहे के लिए जा रही हू? जिसे पाप लगा रहे हो ना तुम, उसे मैंने डोरा बाधा ह। धरम भाई बनाया है। अब बिपत्ती मे बेचारा काम आया है तो उसे गालिया मत दो, उस पर झूठी तोहमत मत लगाओ। कीडे पडेंगे तुझमे! सडेगा, कोई तेरी ल्हास पर थूकनेवाला भी नही हायेगा! हा, नई तो!"

"अरे-रे फिर गाली "

"जानो, धरम भाई धरम बहनोई का—स्साले को—खूटी पै लटका के धरम बहनो को ले जाते है कि—चलो बहना। ऐं, अरे मुझे झूठा कहनेवाली छिनाल। तू क्या समझती है कि तेरे करम ये लडके लोग जानते नही? दस माल से देख रह हैं। तेरी मब आसने समझ गये होगे। हरामजादी!"

"बस बस, बहुत हो गया!" अचानक ठेकेदार उठन पडता है—सब चौंककर उसका उठना और तैश देखते हैं। कहन है—'इ सानियत का ये नतीजा मिलता है, मैं नहीं जानता था! मेरी बेज्जती, पारटी की बेज्जती, बहुत हुआ!" सहसा नट् माठे बुआ की आर मुडता है— देखो, मोठे भाई साहब! '

"तुम मेर का जानत हा?" माठ का सवाल।

'खूब, साहब! आपको सारा शहर जानता है।"

मोठे खुश हो जाता है। एक नजर अजित और छोट को देखता है। बहुत खुश। फिर कहता है "गुस्से म मत आन का ठेकेदारजी! घर मे बात हा रही है जरा तसल्ली मे बात करने का! बैठो!"

ठेकेदार बैठ गया है। बडबडाता हुआ 'मैंने इस औरत को बहिन माना इनकी मदद की, पर इसका जे मतलब तो नही है? राम राम! आगे से कान पकडे—मुझे पता नही था कि शराफत—"

"अबे चुप ! शराफत की पूछ !" सुकल जमना प्रसाद बिगड गया है। ठेकेदार की सिगरेट पैकिट से सिगरेट निकालकर तम्बाकू हथेली पर खीचता है जेब की पुडिया स गाजा निकालकर उसमे भरता है—"ऐसे बहुत शरीफ देखे हमने !" नाक गन्दगी की तरह निचोडते हुए एक नजर सुनहरी पर डालता है "और ऐसी शरीफाओ के तो कहने ही क्या। अहा !"

इसकी बात छोडो ठकेदार ! तुम बतलाओ साफ साफ।' मोठे पूछ रहा है।

'मैं हू गाधीजी की पार्टी का आदमी अहिसा, सेवा, धम "

छोटे सहसा बोल पडा है देखा भाई साहब ! गाधीजी जैसे देवता का इस चक्कर म नही लाने का ! आपको शम आनी चाहिए, ऐसे चक्करा म उस पुण्यात्मा का नाम लेते हो ?'

ठीक है। ठीक है। छोडो गाधीजी को !" खादी की सलवट ठीक की है उसा।

अजित जानता है। गाधी के प्रति छोटे की श्रद्धा इस घटना मे नाम आने से आहत हुई है। लगता भी है कि ठीक कहा।

तमाम गाली गुत्तो के बीच बात उभरती है केवल यह कि सुनहरी ने ठेकेदार की घरवाली के बीमार होने के कारण तय किया है कि कुछ दिनो उसके घर रहगी। जबकि जमनाप्रसाद का खयाल है कि सुनहरी लफगी है और ठेकेदार गुडा ही नही बदमाश भी है। वह इनके सम्बधो पर सन्देह ही नही विश्वास करता है।

'अब बाल दो भाई साहब क्या है फैसला ?" ठेकेदार बडबडाया है "मैं ता गाधी का मानता हू। सत्य-अहिसा "

"फिर गाधी ?" खिलखिला पडा है मोठे।

'ठीक है। न सही !' ठेकेदार की खामोशी।

"हा करो दाना फैसल्ला !' जमनाप्रसाद न गाजे की फूक भरी है। अजित मोठे और छोटे के नथुने कुछ काप रहे हैं कसैला धुआ !

मोठे बुआ कुछ पल सोचता है अभी कुछ कहे कि सहसा दौड

पड़ता है दरवाजे की ओर। सब देखते ह दरवाजे पर मैनपुरी वाली खड़ी है। चेहरा फक हो जाता है मोठे का सामन पाकर। खिसियाकर हसती है।

'आओ-आओ, आज का भाभी। इधर मज़ेदार बात हो रही है। तुम भी बैठो। आओ!" गुर्राया ह माठे बुआ।

हा जा जा। जा-जा ना!" हाथ फक्ती हुई सुनहरी भी जा पहुचती ह, "खसम लुगाइया की बाते हो रही ह आ जा, तेरे पुराणिक बाबू की भी कर लें? आ ना?"

"चुप रह, लु ची!' मैनपुरीवाली चली जाती है।

'स्साली!" मुड आये है माठे बुआ और सुनहरी। अपनी-अपनी जगह आ बैठते हैं मोठे कहता है—' देखा भई जमनाप्रसाद और ठेकेदार। बात यह समझन की है कि यह महल्ले का मामला है। महल्ला मान होता है—एक घर। घरीच समझान का! हाता है कि नइ?'

' हा, हाता है।" तीनो की राय।

'तो महल्ले मे जो काम हो—खुशी खुशी होना चाहिए। " अब अगर तुम्हारे घरवाले की मरजी नही है कि तुम बिंदर—ठेकेदार के घर जाओ? तो मत जाओ। " वह सुनहरी का आदेश कर रहा है और तुम भा ठेकेदार, जब भाई बने हा ता सोचन का ना कि आखिर को तुम्हारी भी इज्जित रहना चहिए इसकी भी तुम्हारी बहन है? है ना?"

"हा!"

जमनाप्रसाद खुश ह। सहसा मोठे बुआ उसकी आर मुडता है, ' और दखा ।ागू से महल्ले म तुम इस माफिक नगापन मचाओगे ना, तो तुम्हारी हड्डी पसली बरोबर करूगा। क्या समझे? फालतूच मे स्साले गाली-गुत्ता देते हो !'

जमनाप्रसाद बुदबुदाता है, "पर माठे भइया "

' ऐसी की तैसी माठे भइया की!" मोठे बुआ बिगड पडा है—' तुमन स्साले महल्ले का चावडा बना दिया—ऐ? तुमका अगर ऐसे ही बदनामी करना है ता इदर—घर मे—इस कमरे म चारपाई की पाटी

थपथपाता है मोठे "इदर ही करन का ! क्या समझे ?"

"हा-अ ! " जमना ने सिर हिलाकर स्वीकार किया है।

"और बाहर भी कुछ करना है तो इदर तै कर लो, फिर करो !" माठे सुनहरी को देखता है।

सुनहरी स्वीकार म सिर हिलाती है। ठेकेदार उठ खडा हुआ है, "मैं चलता हू। "

'म भी तुम्हार साथ चलता हू !" कहकर मोठे बुआ उठ पडा है। दानो चले जात ह।

अजित उठन को ही है कि रोक देती है सुनहरी, "तुम जरा देर बैठो छोटे भइया ! अजित भइया। '

नही नही जीजी काम है।"

तुम्हें री सौगध। बैठो !' घिघियायी ह सुनहरी। बचा अजित और छ ट दुआ एक दूसर का देखत हैं।

जमनाप्रसाद लेट गया है। पलकें बद। अजित का याद है। एक दिन कहा था—' सुरग दिखता है गाजे स। साच्छात सुरग ! बिसनू भग मान लेट हैं स छमीजी उनके पाव दबा रही ह बिरम्हाजी द रख रहे हैं और सिव भगमान ? उनकी ता बात ही क्या ? भभूती बदन म रमाय भाग घाट र है जैहा ! जैहा !'

जरूर सु ग हा दख रहा हागा अजित मुसकराता है।

सुनहरी क ती है— माठ भइया ना गये। पर असल बात सुन लो भइया ! अब तुमस ता कुछ दबी मुदी है नही। छाटे छाटे से थे—तब से देख रह हा। इस मरद न कि ी दिन चार धेले लाकर घर म दिय हा सो ता * नहीं ? मैं हा चला रही ह सब। " सहसा सुनहरी न गरदन झुका ली है धीमी आवाज म बुदबुदाती है— "अब तुम छोटे भी महा —सर समझत हा दाना। बगैर पदी लिखी कैस चला रही हाऊगी यह ता भी जानत हा। कहन की बात ता है नहीं '

अजित अकुलाता गया है। सकपकाकर कहता है 'यह सब यह सब तुम हमस क्या कह रहा हा, जीजी ?'

और किसस कहूगी ? अब तुम जाओ—सास-ससुर, देवर-जेठ ता

हैं नही ? होते तो ये गत हाती मेरी ? " वह रो पडी है ।

हडबडाकर दोनो एक-दूसरे को देखते हैं जैसे परस्पर पूछ रहे हो—क्या करें ? मन हाता है—भाग खडे हो पर वैसा करते नही । करना समव भी नही ।

"जब अव इस मरे से कहो कि चार रोटी इस भी मिलें चार मुझे भी तो आदमी नही तोडे । "

छि छि । घिन से भर उठे ह दोना । सहसा छाट बुआ उठ पडता ह, 'आ यार ! देख तो गरली मे क्या हुआ ?" दोना कोई रास्ता न पाकर गैलरी मे जा खडे होते ह । समझते हैं कि भाग ह, पर भागकर भी कमरे से बाहर ता नही जा सके ? यू ही यहा वहा देखत है—बदहवास ! गालिया मन मे ! किन कमीनो के बीच आ फसे ?

अनायास जमनाप्रसाद की आवाज सुनायी देती ह—फुसफुसाहट "करवा लिया फैसला ? इसीसे कहता हू स्साली—सोच ले । मैं तेरा मरद हू, मुझे ठेंगा दिखाकर तू कोई लीला नही रचा सकती ! क्या समझी ? शुरू मे ही बाल दिया था तेरे को, मुझे ऐतराज नही है ! क्यो करूगा ? पर मेरा चिप रहना क्या फाक्ट मे ही हो जायेगा—ऐं ?"

आह ! ' कोडे जसे खा रहे है दोनो । सहसा मुडते ह कमरा पारकर दूसरी ओर निकल जाते ह सुनहरी पुकारती भी है, सुनो ता कहा चले ?"

जवाब नही देते दानो । गली तक भागे चले आय ह । बडी राहत । दोना एक दूसरे से बोले भी नही थे । अपने-अपन घरा की ओर लपक गये ।

अजित सीढिया चढा । कमर मे पहुचा ।

बैठक स केशर मा कह रही है, "वह आय तो उसीसे पूछ लेना बटनिया, टिन्डे खायेगा कि अरवी ?"

अजित न एक गहरी सास ली थी । याद हा आया था—कल से नौकरी पर जाना होगा । तभी बटनिया आ खडी हुई, "अरबी खायगा कि टिन्डे ?"

'सब कुछ भूलकर वह उसे देखता रह गया था बिन्दी, माग,

सिंदूर, बिछुए, गले का लाकिट, हाथों की मेंहदी उन सबके बीच बट गया। लगा था कहे, तून इतना अपने आपको किसलिए सजा रखा है ? तुझे सजने की जरूरत है क्या !" पर बोल नहीं सका।

लगा था कि अपने भीतर एक पुलक महसूस कर रहा है यह भी कि वह भीतर ही भीतर किसी अजाने सागर में गोते खा रहा है

बोल ना ? ' वह जैसे भुझलाती, कुरती हुई पूछने लगी थी, 'क्या खायगा ?

"जो तू खिला देगी ! ' अचानक पता नहीं अजित को क्या हुआ था ? अपने भीतर ही जोर से इठलाकर दाना हथलिया कस ली थी—संदूक पर बैठ गया। उसकी ओर अकारण मुसकराता, हसता हुआ।

"अरबी बहुत पसन्द है ना तुझे बना दू ?" वह खडी रही।

"तू तो थोडे ही दिनों में बहुत खिल गयी है बटनिया ? हरदोई का पानी रास आ गया शायद—क्यों ?"

वह गरदन झुकाकर नीचे देखने लगी थी।

'बहुत अच्छी लग रही है।'

वह सहसा गभीर होकर मुडी, 'अरबी बना देती हू।" कहा, फिर चली गयी।

अजित खामोश हो गया। महसूस हुआ था कि बदन में जो इठलाहट आयी थी अचानक पानी बनकर वह बह गयी है—मालूम ही नहीं। फिर उसे अपने पर ही झुझलाहट हो आयी "अजीब है वह भी। उससे फालतू की बातें न करके पूछना था कि ससुराल कैसी है उसकी ? पति से अकेले में मिली होगी ? कैसा लगा ? कौन कौन है घर में ? रहन-सहन, मिजाज कैसे है सबके ?" पर मूर्ख अजित ! सिनमाई डायलाग मारने लगा। फूहड !

शायद वह बहुत खुश नहीं है कहती ही थी कभी अप्रसन्नता जाहिर नहीं की थी उसने, पर गहरी प्रसन्नता व्यक्त करके ही कह दिया था कि वह इस विवाह से प्रसन्न नहीं है।

अजित को प्यार करती है

अजित ने सोचा—खुश भी हुआ पर लगा कि यह सब भी मूर्खता

पूण है। बटनिया को वहा जाकर अप्रसन्नता ही रही हो—जरूरी तो नही है? हो सकता है कि हरदोई वाला वह लडका क्या नाम था उसका? गोविन्दसहाय। हा, गोविंदसहाय—वह शक्ल से जितना भोडा है दिल से उतना ही बढिया हो? अजित से हजार गुना बढिया। अजित अपन आपको फिल्म का हीरो क्या समझता है? मूख!

अजित लेट गया था मिनी याद आयी। फिर मिनी को लेकर दसिया सवाल। कन्नो का जिक्र कुछ सम्मानास्पद ढग से नही करती। कुछ न कुछ ऐसा करती और कहती है जैसे अजित से न कहना चाहकर भी कहती हो कहना चाहकर भी न कहती हो। जरूर कुछ गडबड घोटाला है।

उसने पलके मूदी। अब कहानिया लिख सकेगा। इस नौकरी से बहुत निश्चिन्तता आ गयी है जीवन म। काफी है। मा बेटे का चल जायेगा!

और कहानियो के लिए यह सब काम आयेगे कभी रेशमा सुरगो, सहाद्रा, मिनी

पर यह बडी दिक्कत है। कहानिया छपती नही हैं। कलम बनर्जी ने एक दिन कहा था, "बदमाशी है। सपादक स्साले लिफाफे पर प्रेषक का पता देखते हैं। अगर जान-पहचानवाला हुआ ता कहानी पढी, वरना रद्दी की टोकरी म!"

हा यार! ' अजित न गहरी टीस अनुभव की थी, 'अब नवभारत टाइम्स को ही ला। कितनी बार रचनाए नही भेज चुका हू! वापसी का टिकट भी रखता हू पर हद है बदमाशी की! रचनाए छापना तो दर-किनार टिकट खा जाते है। इतनी बडी कम्पनी, इतने पैसवाले हम गरीबा की दुअनिया खाकर क्या मिलेगा इन्ह?'

'बात मिलने की नही टुईमी की ह। " कलम बनर्जी ने एक विद्राही भाव चेहरे पर लाकर कहा था "अब इन चार मिनिस्टरो और नताओ को ही देखा। सबन चारिया कर करके घरू कारें पैदा करली हैं। छकडे पर बैठने की औकात नही थी स्सालो की पर करली पैदा! कुर्सी का खल फिर भी उन्हें गैरेज मे रखेंगे और सरकारी गाडियो पर चढकर तेल जलायेंगे।"

'पुराने लोग थे जोरदार!" अजित ने सहसा तकलीफ को हमेशा की तरह मजाक मे उडाया था। इसमे अजब सा सुख मिलता है। लगता है, कि चोट लग जाने के बाद अपने ही अगूठे का लहू चूसकर बद किया जा रहा हो कहा "तभी तो लिख गये—तेल जले सरकार का और मिर्जा खेलें फाग! "

बात खत्म हो गयी थी

पर लगता है कि बात खत्म नहीं है बल्कि शुरू हुई है और इस शुरुआत से भी जबरदस्त सघर्ष होगा!

याद आया था। स्वतत्रता के एकदम बाद ही महाराजवाडे पर जो मीटिंग हुई थी उसमे वल्लभभाई पटेल आये थे—बोले थे, "ये जो सब कुछ डिस्टर्ब्ड पडा है, टूटा फूटा या बिखरा हुआ है, इस सबको बनाने मे हमे सघर्ष करना होगा! फिर आजादी के बाद कहीं ज्यादा बडी जिम्मेदारी और तेज सघर्ष होगा उसे बनाये रखने के लिए! "

बहुत बडी बात। बहुत बडे सदर्भ मे। अजित सोचता—उतने बडे सदर्भ और उतने स्तर पर न सोचकर उसे सिर्फ अपने स्तर पर ही सोचता है लगता कि समूचा भविष्य ही सघर्ष है। कितनी कितनी जगह और कितने कितने स्तरो पर ये व्यक्तिगत-सामाजिक सघर्ष नहीं प्रारभ हो गये है?

जिस देश मे कलम के स्तर पर भी बेईमानी शुरू हो गयी हो, वहा ये सघर्ष कितना बढ जायगा? अजित अपने को लेकर सोचता। उस समय कहां जानता था कि जो जो कुछ अपने को लेकर सोचा, या सुख दुख पाया है वह किसी और तरह ही सही पर समूचे समाज, देश का दुख दर्द है सच मे उसी का सघर्ष!

लगा था कि सपादक या तो व्यक्तिवादी है, या फिर गुटवादी या फिर अयोग्य! उसकी पीढी के हर लेखक को इस सबमे से रास्ता निकालकर जाना होगा।

आये दिनो की सुबह शामो मे जब जब साथ के लेखक मिलते यही कुछ चर्चा का विषय होता।

पर मालूम ही नहीं था कि एक दिन छपने के इस सघर्ष के पार उसे

वह संघर्ष भी देखना होगा, जिसमें बुद्धिवाद सत्ता में गिरवी होकर समूचे राष्ट्र को ही संघर्ष में उलझा देता है बढ़ाए चला जाता है विध्वंस या नाश के कगार पर ला पहुंचाता है

पर वह सब बाद की बातें।

तब बात थी महल्ले के घर, फिर गली से पार आकर चौबारे में पहले-पहल कदम रखने की कदम रखकर यह देखने की—कि अगले कदम का क्या होगा ?

"अरे, सो गया ? "

धीमी, झनझुन की तरह शब्द बजे, अजित ने पलकें खोल दी थीं। बटनिया करीब ही खड़ी बुदबुदा रही है, "अजित ? "

वह बैठ गया। बटनिया ने एक बार थाली रखी। गिलास रखा। वह उठकर बाहर गया। हाथ धोकर लौटा। वह खड़ी हुई थी, "अचार काहे का लेगा ? नींबू या "

'कुछ नहीं।' वह ग्रास तोड़ने लगा।

बटनिया उसके सामने बैठ गयी। पहले की ही तरह। अजित ने उसे देखा। वह मुसकरायी। पर जाने क्यों अजित को लग रहा है, यह मुसकान बहुत दूर की है। अपरिचित। बटनिया शादीशुदा लड़की है अब नजरें बटनिया के माथे पर जा ठहरीं। सिंदूर की एक दमदमाती लकीर खिंची हुई है। बिजली की तरह कौंधती है। अजित का हर ख्याल इस कौंध की चकाचौंध में आंखें मूंद लेता है।

"क्या देख रहा है तू ?"

'कुछ नहीं।" वह चुपचाप खाने लगा। उसे संयत रहना चाहिए। उसने अपने आपसे कहा।

"कुछ तो देख रहा था ?"

"कुछ नहीं।" कहने के साथ ही अजित को लगा कि उसकी आवाज कुछ बदल गया है। आवाज या उस आवाज की आत्मशक्ति ? हां,

भारी आत्मग्लानि हुई। बटनिया अब घर दामाद की बहिन नहीं है जिसे वह गाम दर गाम पिंजरे में बन्द करके आँगन में घुमाता रहा था। अब बटनिया किसी की पत्नी है। किसी घर की बहू। उसकी एक स्वतंत्र सत्ता है। यह स्वर गहरा था।

वातावरण में एक ठंडापन-सा हो गया है। शायद उसके लिए भी, शायद अजित के लिए भी। इसे उसे ही तोड़ना होगा। उसने सोचा। फिर तोड़ भी दिया, "ससुराल कैसा लगा तुझे?"

वह चुप रहा।

अजित ने उसे देखा, "बताती ना? कैसा लगा?"

उसने उदासी से उसे देखा, फिर आवाज भारी हो गयी, "ठीक। ठीक ही है।"

"और तेरा वह?"

वह चौंकी, एक गहरी सांस ली, "तूने देखा नहीं है क्या उन्हें?"

"देखा हाँ सो है, सिर्फ समझा कहाँ?"

वह नासमझ भाव से देख रही है।

अजित ने अपनी बात समझायी, "मेरा मतलब है कि देखना अलग बात है। पर अब तू उसके साथ रही होगी? मिली-जुली होगी? बोली बानी में, व्यवहार में पता चला कि कैसा है? वही पूछ रहा हूँ।"

"अच्छे हैं।" उसने गर्दन झुका ली।

"अच्छे भर से क्या मतलब?"

"बस अच्छे हैं। हँसते हैं, बोलते हैं, मेरे लिए रोज मिठाई लाते थे।" बटनिया ने लजाते स्वर में कहा, धरती पर अंगुली घुमाती रही, "कहते हैं कि मुझसे ब्याह करके बहुत खुश हैं।"

"खुश क्यों नहीं होंगे?" अजित बोला, "तुझसे ब्याह करके कोई भी खुश होता।"

"पर तू तो..." अचानक वह बोली। अजित ने उसे चौंककर देखा। वह एकदम सिटपिटाकर चुप हो गयी। बात बदल दी उसने, "तू तो ऐसे ही कहता है। मुझसे ब्याह करके ही क्या खुश होगा कोई? सबके ब्याह होते हैं। सब खुश ही तो होते हैं?" वह फिर धरती कुरेदने लगी थी।

"नही नही, तेरी बात अलग ! तू सुन्दर है, सुघड है और और तू प्यार कर सकती है " अजित ने कुछ घबराते हुए बात खत्म की थी, "तुझसे ब्याह करके तो कोई भी खुश होता।"

"मैं रोटी लाती हू " वह एकदम से उठी चली गयी। लौटी। एक रोटी लाकर अजित की थाली मे रखा। कहा, "छोड इन बातो को ! सुन्दर तो मेरी जिठानी भी बहुत है। बिलकुल चमकचादनी। "

अजित न कुछ बौखलाकर सवाल किया है, "ये चमकचादनी कैसी होती है ?"

वह वह," वह परेशान होकर कहने लगी, "बस, चमकचादनी ! जैसे पूनो के दिन चादनी खिलती है ना आकास मे—वैसी ! गोरी भूरी, चमकती हुई। झक्क सफेद !"

"यह झक्क सफेद होने से सुन्दर हो जाता है क्या आदमी ? " अजित कहता है, "पगली है तू। होने को तो धूप भी झक्क सफेद होती है, पर अपने गरम सुभाव के मारे आदमी का पानी निचोड देती है। ऐसी सफेदी किस काम की ?"

वह कुछ सोचती रही, फिर अपने आप स्वीकार मे गर्दन हिलाती हुई बुदबुदायी, 'हा अ ! ये तो है। 'वो' भी जे ई कह रह थे उस दिन।"

"वो कौन ?" अजित ने मजा लेने के लिए उसे कुरेदा है।

'वो ई ! और कौन ? हरदोई वाले।"

"कौन—गोविन्दसहाय ?'

"हू-अ !' उसन सिर झुका लिया। ज्यादा सुख हो उठती है।

"क्या वह रहे थे ?"

"कह रहे थे कि भौजी झक्क सफेद है, पर बडे गरम दिमाग की। हमारे जेठ जी है ना ?" वह बातें करन के मूड मे आ गयी थी।

'हा हा !" अजित ने टहोका लगाया।

"उनको ऐसे डाट देती है जैसे बालक हो। गादी मे बालक !" वह अपने आप हसी। बेहद खिली खुली हसी। "एक दिन—बस उसी दिन—जिस दिन मैं विदा हो के पहुची थी ना बस, उसी दिन की बात

वह है ।" आलथी पालथी मारकर बैठ गयी है । लापरवाह । वह जाता है 'मैं जिस कमरे म बैठी थी ना उसम बिना खास चले आय और भौजी न एकदम से हाथ पकड़कर खीच लिया उन्ह । बोली, 'जरा शरम-लिहाज करो । इत्ते बूढ़े हो गय आर अक्कल छू नही गयी तुम्ह ?' " वह हसे जा रही है, "और मर जेठजी हैं ना ? बिचार चूहे की नाइ कि कि-कि करन लगे । कान पकडकर बाले 'गलती हो गई भागवान ! आगू से नही हागी ।' चिपचाप बाहर चले गये ।" वह और खिलकर हसी है ।

'हू-अ ! अजित का जाल क्यो उसकी खुली हसी सरलता और ससुराल का जिक्र अच्छा नही लग रहा । क्यो नही लग रहा ? बस, नही लग रहा । मन अपने को ही धिक्कारन लगा है—इसी कारण ना कि बट निया को उसन अपनी जायदाद ममझ रखा था ? वह उसे सरलमन स प्यार करती रही है और अजित उसे वस्तु समझता रहा है । अपन अधि कार की वस्तु अब सह नही पा रहा है

उसन जिक्र काटन की काशिश की थी, "तो ऐसी हैं तरी जेठानी ?"

"हा अ । और जानता है उनके मारे मरे ससुरजी और सासूजी भी चुप मार रहत हैं । उन्ही का हुक्म चलता है घर मे ।"

'यानी मद तर यहा बौडम हैं—क्यो ?" अनचाहे ही वह बोला था । क्या इस तरह उसकी ससुराल वालो को अपमानित करके वह सुख पा रहा है ? शायद—एक क्रूर सुख !

सरल बटनिया अहसास ही नही करती । कहती है, "अब इसम मरदो का क्या दोष ? जब आदमी देख लेता है ना कि भाई ये पतग तो फालतू म ही फटफडायेगा तो मत उडाओ उसे । चिप्पके से नीचे उतार लो । चुप बैठ जाओ । इसीम घर बाहर की आबरू इज्जत होती है । हा !'

और अजित चुन गया है ! कितनी शक्ति हाती है सरलता मे ? कडवे, जहरीले इरादे स भरे व्यग को भी इस सहजता से ग्रहण किया है जैसे समुद्र किसी पोखर को आत्मसात कर ले । अजित ने अपने ही भीतर छोटापन महसूस किया था ।

पर बटनिया बातें करन के मूड म आ गयी थी । शायद बटनिया को

बरसो बाद एक विस्तृत आकाश में उड़ान भरने का मौका मिला—वही इसका कारण। उस विस्तृत आकाश में बिखरे हुए निर्मल जल से लेकर कूड़े-कचरे से भरी आंधी को भी संस्मरणात्मक प्यार के साथ बटोर लायी है। खुश है। कहने लगी, 'मेरी ननद एक ही हैं। छोटी हैं पर उमर में मुझसे बड़ी है।"

'यानी जवान ?"

"हट्ट! "बटनिया ने उसे स्नेह से झिड़का। फिर उसे इस तरह समझाने लगी थी, जैसे अजित नासमझ है। बोली, "अभी कुल सैंतीस साल की तो है पढ़ रही थी कालिज में! पता नहीं, बारहवें दरजे में थी कि चौदहवें "

अच्छा, अच्छा तो यह तो बिल्कुल आंचल का दूध पीने की उमर हुई। है ना?' अजित ने शरारत की।

"तुझे बात सुननी है कि नहीं?' वह गुस्सा हो गयी।

"अच्छा अच्छा सुना। अब नहीं बोलूंगा। बोल।"

"तो ननद जी है ना—रिश्ते में मुझसे छोटी हैं। 'ये' उनसे चौदह महीने बड़े हैं।'

'ठीक।" अजित बोला।

'उम्मर तो चाहे जितनी हो जाये लड़की की पर तब तक जवान नहीं मानी जाती जब तक घर-गिरहस्ती न जम जाये। है कि नहीं? "

'हां हां आइडिया ठीक है तेरी।'

"तो लड़कीनी हैं। सुन्दरी नाम है उनका।' बटनिया के सिर से पल्लू गिर गया। उसने परवाह नहीं की। बोले गयी, 'यों शक्ल-सूरत तो ठीक ही है रंग भी सांवला है पर ठीक ही हैं।"

जल्दी-जल्दी सुना क्या कहना चाहती है?" अजित ऊबने लगा।

"तो मैं कह रही थी कि सुन्दरी बहिनजी बड़ी तेज हैं। जरा जरा में रूठ जाती हैं जरा जरा में लड़ पड़ती हैं '

"तुझसे लड़ी?'

'नहीं। अभी तो नहीं पर 'ये' कह रहे थे कि लड़ेंगी जरूर। और

इनने बताया है कि सबसे अच्छी तरकीब है कि मैं तब चिप्प हो जाऊं। मेरा क्या है हो जाऊंगी चिप्प। है ना?" उसने पूछा।

"हां, जरूर हो जाना और और तू मुझ पर भी एक कृपा कर!"

"क्या चाहिए?" उस जैसे मान हो आया।

'कुछ नहीं। वह उठ पड़ा था मैं कह रहा हूं कि बस तू भी चुप हो जा!"

वह नाराज हो गयी।

अजीत बाहर गया। लौटा तब तक वह गायब थी। अजीत ने बीड़ी जलाई और सोचने लगा था कैसी विचित्र बात है? बटनिया कुछ दिनों मे ही जाकर इस कदर सिर्फ रसोई और हरदाई की होकर रह गयी? सिर्फ वही बातें सिर्फ वही वे लोग। सिर्फ वही की यादें। एक बार फिर, पर अजित को अच्छा नहीं लगा था।

कुढ़ता है। उसकी निर्मलता और सरलता के साथ-साथ उसकी अपार सहनशक्ति और जुड़ जाने की असामान्य क्षमता से कुढ़ता है। उसने अपने आपको दबोच लिया था।

वह फिर आ खड़ी हुई।

दबोचकर भी अपने को कितना दबोच पाया था अजित? कुछ रूखे पन से पूछ लिया था, अब क्या है? कुछ सुनाने को रह गया क्या?"

नहीं मैं सिरफ ये पूछने आयी हूं कि तू दूध पियेगा क्या?"

दू अ् ध? अजित 'दू' और 'ध' के बीच मे एक पूरा आलाप ले गया था। हंस भी पड़ा, ये ये दूध कब से पीने लगा मैं? और तू ?"

वह व्यर्थ ही हंसा।

"अम्मा ने पुछवाया है कह रही थी कि तुझे कल से काम पर जाना होगा। दिन दिन मेहनत करेगा। आखिर कुछ खायेगा पियेगा नहीं तो "

अरे, बस बस। ' वह झटक पड़ा था।

वह चली गयी। मुंह बिचकाकर।

अजित लेटे रहा। सहसा याद हो आया था बीड़ी खत्म हो रही हैं। सिर्फ एक। बटनिया को फिर पुकारा। अम्मा से पैसे मंगवाये और

वाडे की ओर चल पडा।

गयारह बज चुके हैं गली अंधेरे म डूब चुकी है। खीम हो आयी थी उसे। चलते-चलते अपने पर ही झल्लाये जा रहा था—हमेशा ही कुछ न कुछ अधूरा छोड देता है। यह बिडल आते समय ही ले आना था अब इतनी रात उसके लिए दौड रहा है पर एक बीडी का ही मामला ता नहीं है ?हमेशा कुछ न कुछ अधूरा छाडता रहा है मिन्नी से मुनाकातें बातें पढाई बटनिया के लिए चाहत बटनिया का विश्वास

सब कुछ अधूरा। य आधी अधूरी जिन्दगी ही अजित।

कितनी कितनी बार सब कुछ इसी तरह अधूरा नही छूट गया है ? जो पाना चाहा है—रह गया है। जा नहीं पाना चाहा है—शुरू हो गया है !

आगन से खेलते, घुटनो घुटनो चलते बच्चे को जैसे पैर मिलें, वह गली तक आये और फिर कपडे मिले—वह गली के पार चला जाय !

जिन्दगी गली के पार चली गयी है कितनी कितनी जिन्दगिया ? कितनी कितनी गलिया ?

बटनिया गली के पार हुई, मिन्नी न महल्ला छोडा, हमेशा घर म बन्द रहनेवाली, घूघट मे छिपी रेशमा अस्पताल जा पहुची और खुद अजित ? वह काम के लिए और कभी कहानी के लिए सारे शहर मे भाय भाय भटकता रहा !

माठे बुआ की दादागीरी दूर, कई कई गलिया पार करके शहर मे फैल रही है। तमाम अजनबी चेहरे गली मे नजर आते हैं। पूछते हुए, "मोठे दादा कहा है ?"

और माठे दादा बाहर आता है। इद-गिद होते हैं चार छह सेवक। अकारण, उठते, अकडते, गुरात जाते लोग। महल्ले म एक सहम फैल जाती हैं फिर ये सहम गली के हर घर म आ पहुचती है

कुछ टिप्पणिया आती ह, 'इस मरे की ल्हास ही लौटगी किसी दिन

गली म। सब शहर म अत मृत दी है इमने। "

पुलिसवाले भी टहलत रहत हैं। कान्स्टेबिला, हवलदारा स मोठ बुआ की दारती है। सब दादा कहते हैं उस। दूर से देखते ही सलाम ठोकते हैं और मोठे पूछता ह "कहो हवलदार, क्या हाल है ?"

"बस, दुआ है माठे दादा !"

"अर, दुआ तो ऊपरवाले की होनी चाहिए—जिसकी, जिसन हमार का, तुम्हारे का पैदा किया है। " माठे मूछें ऐंठता है। भारी चेहरे पर लम्बी मब्बा मूछें रखली हैं उसन। मानो नाकें, दो तीखे भालाकी तरह ऊपर उठी रहती हैं। एसे, जैस सामनवाले का सीना भेदकर अभी भीतर घुस जायेंगी !

सुबह घर से निकल जाता है मोठे। शाम लौटता हैं तो हिलता हुआ। न लौटा तो रात कोई तागेवाला मह्ल्ले म आकर पूछता है, 'भाई साब। दादा का मकान किस बाजू है ?"

एक दिन अजित से ही पूछने लगा था वह, "ए, भाई ? "

अधेरा था गली म। अजित थम गया था, 'क्या-अ ?"

मोठे दादा किस बाजू रहने है ?"

'क्यो ?'

'विनका पहुचाना है।"

क्या, क्या वह खुद नही पहुच सकते ?" अजित न चिढकर सवाल किया था तागेवाले स। जोर म हसा था तागेवाला, 'अरे, खुद पहुच सकते होत ता मेरे माथे बेगार ही क्यो लगती ? टेसन पर खडे थे। पता नही दो बोतल पी रक्खी है कि तीन। बोले, घर छोडके आ !' अभी रास्ते म पूछा ता सो गय है। देखो। "

हैरत मे अजित तागे के पास आ गया था। देखा कि मोठे एक बडे भारी बोरे की तरह पूर तागे मे फैला हुआ है, तेज शराब की महक उसके कपडो और मुह स आ रही है। नाक घुर्राती है— घुरर र् घररर् !'

हसी भी आयी थी, चिढ भी हुई। क्या हालत बना ली इस आदमी ने ! बिलकुल शैतान हो गया !

हौले से टहोका मारा था, 'माठे ? अबे ओ मोठे ?"

"हो ओ हू ए ? "वह फिर घुर्राने लगा था—'घुरर्र र् । '

अजित ने तागेवाले से कहा था, "घर तो मैं बतलाये देता हू, पर इन्हे पहुचाओगे कैसे ? ये महाराज ता होश मे ही नही ह और चार-पाच आदमियो मे कम का बूता है नही उठाने का। गिरे तो समझना कि पूरा पडाल ही गिरेगा। भडाम् !"

"बिलकुल घर पर लगा दूगा तागा, और क्या करू साहब। "तागे-वाला उदासी से बोला था, "अब साहब ! मैं ठहरा गरीब आदमी। शहर मे पता नही किस बगल, किसे मिल जायें य ? ऐसे ही रोज किसी भी तागेवाले को घर लेते हैं कि पहुचा। बस, फस गया बेचारा !"

"अ-ऐं ऐं क्या बक्क-रता हैं ऐ ए। " सहसा मोठे की गुरगुराहट आयी थी। फिर वह झूमता हुआ तागे मे उठने लगा था। घोडा जोर से हिनहिनाकर हिला। तागेवाले न रास सभाली। "क्क चुप। खडा रह बेट ! खडा रह !'

अजित अपने दुबले पतले शरीर के बावजूद अपने को रोक नही सका था, 'अरे रे यार मोठे ! गिरगा। "

पर तब तक नीचे आगया था मोठे बुआ। हिलता हुआ एक भारी ड्रम जैसा सडक पर खडा था। जार से एक हाथ तागे मे पटका। पूरे अजर पजर हिल गये तागे के। चिल्लाया था, "घर आगया ना ? पहुचा के आ हरामजादे !"

तागेवाला तुरत उतरा 'जो हुक्म दादा !" फिर सहारा दने लगा। दूसरी ओर स अजित। मोठे का भारी, विकराल शरीर लगभग झूल गया उनपर पैर हिलन लगे थे अजित के। एक गाली दी—'कम्बख्त। एक-दम रेल का डब्बा है। " जैसे-तैसे गली की ओर बढे। अजित भुनभुनाकर कह गया था 'मोठे ! यार तू ने क्या हाल बना रक्खा है। "

'अर-ए पन्डीत ! अबे स्साले ! तू किदर स आ गया ? दब जायेगा—स्साले दब जायेगा ! परे होके चल ना !" फिर उसने अजित के ऊपर से बाह हटाली थी, तागेवाला पर चिल्ला पडा था, "अबे मादर देखता नही ! पन्डीतजी पर वजन डलवा दिया, कुत्ते। " सहसा अजित

की ओर मुडा था, 'माफ करना यार पडीत। ये स्साली आज ज्यादा ही हो गयी—हिच।"

व टोपनदास के बाडे मे आ गये थे। अचानक मोठे पूरी तरह चैतय हो गया था। तागेवाले की बाह से दूर उछाल दिया, 'हट।" फिर इधर उधर देखा। एक बल्ब जल रहा था। सब तरफ भैसें, गोवर बदबू अजित दौड पडा था मोठे बुआ के घर की आर। छोटे को बुलाना होगा।

अभी द्वार पर जाकर आवाज दी ही थी कि बाहर से आवाज आयी, "अरे रे। नादा, क्या करते हो? जे- जे"

जोरदार आवाज उठी—भडाम!

'छाट ऐ ए!" घबराया हुआ अजित एक आवाज दकर फिर बाड की ओर भाग आया। क्या हुआ—मोठे गिर पडा क्या?

तागेवाला भसो जैसी विशालाकार पानी वाली टकी पर चढा हुआ झाक रहा था—वेबस रुआसा अजित के पहुचते ही बाला था, 'देखा तो भाई साहब टकी म कूद गये।"

'क्या अ?" अजित भी टकी पर जा चढा।

छोटे बुआ और महल्ले के कई लोग दौडे चले आय थे शार शराबा सुनकर। कुछ भयभीत कुछ मजा लेते हुए टकी के इद गिद एकत्र हो गये।

माठे बुआ आदमकद टकी म ठीक किसी भस की ही तरह लोट रहा था हा हा हा हा अ।" मुह म पानी भरता दूर तक डुबका मारता, 'बुडुम! बुडुम।"

'अरे मोठे। निकल उसमे से!'

माठे हसता!

भाऊ?" छाट गुस्स से चिल्लाया।

मोठे ने सुना-अनसुना कर दिया।

टोपनदास टकी से दूर खडा माथा पीट रहा था। पास ही उसकी भयभीत, हैरान पत्नी भागवती।

अबी देखो ना भेडा य भी काई बात है। अब भैंस लाक को क्या

पिलाऊंगा मैं ! सारा पानी गंदा हो गया नी ई । "

मोठे चिल्लाया, "अबे चोप्प ! हरामी के पिल्ले ! तू ने ऐसी परी गंदी कर री—बिसम कुछ नहीं हुआ क्या ? अब जवान लोक क्या बुढ़िया व्याहंग । पानी को रोता है स्साला !"

सुरगो हंसी—फिस्सस्स !

टोपनदास ने अजित से कहा, "देखो भाई इ ऐसा गंदा गंदा बात बात्ताय, साईं ! हम भी इज्जितवाला है भेंडा !"

भागवती भीतर चली गयी थी, ऐसे जैसे किसी ने फूंक दिया हो। दरवाजा बन्द कर लिया।

टकी पर लगभग लटकी सुरगो ने धीमे से कहा था, 'अरे, मोठे लाला। बाहर आ जाओ ! काहे को तमासा दिखा रहे हो ?'

माठे ने एकदम सिर निकाला। भीगे बालों ने माथा ढक रखा था उसका। पानी में भी झूमते हुए कहा था, 'अच्छा। मैं तमासा दिखाता हूं भाभी ? और तुम क्या दिखा रही हो महल्ले में ? वह कुतिया का पिल्ला घर में घुसाकर चुनमुन की गोदी में बिठाल दिया है—वो तमासा नहीं है—ऐं ? "

' ऐय ऽ तुम्हारे मुंह में आग लगे। "

मेरे तो मुंह में लग जायेगी आग—ठीक है। लगने दो स्साली को ! पन तुमने तो सारे महल्ले में आग लगा दी ई। "

' भाऊ। काय बडबड करतोय तुम्ही ! लाज नईं वाटत ? '

"लाज ह्याना पाहिजे कि मला ? ' चीखा था माठे, "य स्साली बोलती है कि माठे के मारे गल्ली में सोना मुहाल हुआय। य स्सानी सत्ती सवित्तरिया। मोठे खुल्ला है और ये हरामजादियां बन्द हैं। बस। "

"अरे, माठे भाई ! बस भी करो ! ' चन्दनानाय ने जैसे प्रार्थना की।

सुरगो गालियां देती विदा हो गयी थी। शामलाल उसके पीछे गरदन लटकाय। "होश में नहीं है भाई। शराब बुरी चीज है !"

"कित्ते बड़े आदमी का बेटा और ये क्या हाल बना लिया इसने !' सुनहरी बड़बड़ा रही थी।

'काय का बस करो चन्दनसहाय। काय को करो बस ? तुमन बस कियाय क्या ? "

"भइया। य गन्दा पानी है।" चन्दनसहाय बडी सभ्यता के साथ समझाने लगता है, "भैंसो का जूठा। सेहत के लिए नुक्सान दायक। निकल आओ इसस !"

"काय को ? " मोठे बुआ फिर लोटने लगा है, "हा हो-अ होअ्। " कहता है, 'तुमने किया है बस ? तुम ऊपर का कमाते हो ! दो दो रुपया गरीब लोक से लेते हो ? आ अच्छा है ? विससे तुम्हार सुरग का नुक्सान नही हायगा क्या ? तुम भी ता खराप पानी म घूमते हो। '

'क्या क्या बक रह हो यार !" कहकर झुंझलाता चन्दनसहाय उतर गया है टकी से। 'बिलकुल जवान में लगाम नहीं है इस आदमी के। शराबी !" चुपचाप घर म धस जाता है

"भाउ अ् ? " छाट बुआ रुआसा हो गया है 'अब बाहर आने का ! भात हुआय। "

'यार, माठे ! बाहर आ। " अजित जैसे हाथ जाडता है।

निकालो। पकडा इधर बिदर स। "

छाटे अजित टापन पाडेजी कई लोग जोर लगाते हैं सहारा देत हैं—जैस तैस माठे बुआ बाहर आया है पर टोपन भीतर चला गया, 'भेंडा अ् ! हमका गिरा दिया नी ईइ !"

मझा आया। खूप मझा। " वह हिलता हुआ घर की आर चल पडा है। सब वापस।

तागवाला कब का खिसक गया है मालूम नही। अजित लौटता है। कमबख्त न पूरे एक घन्टे ड्रामा किया।

सहसा माठे की टकी म की गयी बकवास का याद कर अजित मन ही मन हस पडता है। खूब छाल रहा था इन पाजियो का। पर यह सब अच्छा नही। माठे स कहना होगा। इस तरह दुश्मनी बढाने से कोई लाभ नही। य सब मन म गाँठें लगाकर बैठे रहते होंगे। एक दिन यहा भी था मोठे यार नशे म तू लागो को लेकर जो कुछ असलियत बकता है—

उसका क्या फायदा ? "

"फिर य कुत्ते मेरे को लेकर क्या वक्ते ह ? " मोठे बुआ न जैस चाबुक की चोट खाकर कहा था। आवाज भीग गयी थी उसकी 'इन हरामिया को दख। सब भीतर से काले है स्साले। आवनूम। मव लोक के भीतर गंध हैं, पन बनेंगे स्साले पुजारी ! चोट्टे नही ता !"

"पर यार, तुझे क्या करना। "

"क्या, करना क्यो नही ह ? य हरामी मेरे का लेकर क्या-क्या वक्ते हैं—क्या तेरे को पत्ता नही है ?" माठे की आखो मे गुस्से से ज्यादा दर्द उभर आया था, "ये स्साले। मिलट मिलट बिक्त है, खरीद हाते है और मैं—जिसन इनका कुछ भी नही बिगाडा, इनके लिए वखत काटने की चीज हू ? मरे का गाली देकर झूठ मूठ बदनाम करके य मजा लेते हैं पडीत। य कमाई हैं हरामी !"

अजित हैरान हो गया था। माठे बुआ का गला भर्राता भी है ? वह कुछ महसूस करता है, साचता भी है—? उसी दिन तो पहली बार जाना था। मोठे की आखो मे चमकीलापन तिर आया था। क्या आसू आ रहे थे उसके ? अजित कुछ न बोल पाकर सिर्फ उसे देखे जा रहा था

उसन कहा था, "मरे को बानते है स्साले मैं गुडा हू। मेरे से इज्जित खतर म है इनकी। मा बहिन को मा-बहिन नही समझता मैं। " सहसा मोठे न अपन भारी भारी पजे अजित के कधो पर रखकर उसे झकझार डाला था, 'पूछ बिनसे ? बिनसे जरा पूछ के ता देख पडीत। मैंन कोनची गुडागर्दी की है बिनके साथ ? अगर कवी चदनसहाय से पाच रुपये लिये ह ता बिसको मधद भी करी हायेंगी यार ? बिसको ले क लडा भी होऊगा। स्साले टोपन की दूध उधारी के पईसे डूबते ह ता माठे याद आता है बिसका पन, मोठे गुडा ? इस सुरगा भाभी को किरानेवाले सिंधी न उधारी चुकान के लिए कमरे क भीतर बुला लिया था तब मोठे याद आया था बिसको ! और अब्ब। अब मोठे गुडा ? पडीत, य कुत्ते भी नई है। कुत्रा भौत वफादार होता है यार। ये स्साले पत्ता नई क्या है !"

वह जसे थककर बैठ गया था। एकदम चुप। अजित पर भी कुछ

बालते नही बना था। सच ही तो अजित जानता है—मोठे बुआ न महल्ले के हर घर पर अपना 'वरद' हाथ रखा है हमेशा पर उसे क्या मिला है ? सिफ थप्पड, तिरस्कार झठी गालिया और बदहवास बदना मिया का एक लम्बा दौर। इस माठे के भर्राय गल, उदास चेहरे का क्या जवाब है अजित के पास ? चुप ही रहना पडा था उसे।

अजित कुछ कह या सोच मक, इसके पूर्व ही मोठे बुआ फिर बडबडान लगा था, 'तेरे को मालुम है—ये स्साली गल्ली म नईं सोती। बोलता हैं—माठे बदमास है। बिसका क्या भरोसा ? रात उरात किस खटिया को तोड देयेंगा—क्या भरोसा ? " सहसा मोठे रो ही पडा था, 'बोल पन्डीत। मैं ऐसा हू ? इन सब लाक के भीतर बाहर की सब बातें जानता हू यार। पर मैं ऐसा हू ?"

अजित चुप था। चुप ही रहा।

माठे थोडी दर इसी तरह दद मे कराहता रहा था फिर वापस चला गया—अजित को स्तब्ध छोडकर।

बहुत कुछ समझा था उसन। बहुत कुछ नही भी समझा। पर मोठे बेशक उन सबसे ज्यादा सबसे अच्छी तरह समझ मे आनवाली चीज था।

इसीलिए ना कि उन सबमे समझन लायक कुछ था भी नही। उस समय ता यही कुछ साचा था अजित न। बिलकुल इसी तरह।

पर बहुत दिनो बाद मालूम हुआ था—शायद नहीं। उस तरह सोचकर गलती ही कर रहा था अजित साचता था— उस नयी व्यवस्था पर। नयी व्यवस्था के साथ साथ आ चुके नय सवाला पर और सवाला के खामाश जवाबो मे जवाबों की तलाश मे भटकते हुए उन सब लागो पर।

सुनहरी का सच था उसकी रोटी, उसका भविष्य। एक बार जमना से झगडकर मैके चली गयी थी। गयी थी चेतावनी फेंककर "जा रही हू, पर याद रख। तेरा मुह नही देखूगी सत्यानासी।

'अरे जा। मत आना ! स्साली। " जमना ने भी चुनौती झेल ली थी पर सुनहरी को शाम ढलते ही सारे महल्ले न लौटत दखा था।

रहे थे। बहुत कम बोलने की आदत है उन्हे। अभी अभी पता चला था

" तो गाधी बाबा के साथ बहुत रहना पडा साहब--बहुत !"

सावलराम कह रहे थे—' मानता ही नही था बुढडा। जरासी बात हुई नही कि एकदम प्यारे भइया से कहता कि बुलाओजी सावलराम को !"

"कौन प्यारे भइया ?" आहूजा पूछ वठा।

सावलराम ने कुछ चिढकर उसे देखा, जैसे बहुत बदतमीजी की हो। कहा, "कमाल है आहूजा साहब। आप लोग सुततरता के सिपाहियो को जानते ही नही हैं ? अरे, पियारेभाई तो सिपाही भी नही अपीसर थे। क्या थे ?"

"अफसर !" मिन्नी ने कहा।

"इसको कहते है—कालेज। क्या कहते है ?" वह सबको देखने लग। मुह कछुए की तरह एकदम सबके सामने फैंक दिया।

कोई कुछ बोल नही सका। क्या कह रहे हैं—यही नही समझ सके थे।

"हद हो गयी साब। " उन्होने गरदन खीचली, उदासी से कहा, "इसको कहत हैं—जरनल कालेज। "

"अच्छा अच्छा !" आहूजा बुदबुदाया, ' जनरल नालेज ?"

' हा अ जरनल कालेज। " सावलराम ने कहा। दो घूट लिये, बुदबुदाय, "पियार भाई सुततरता क सिपाही नही—अपसर थे। गाधी बाबा के सिक्रटरी !'

"ओह , उन प्यारेलाल की बात कर रहे हैं आप ?" आहूजा ने अपनी नासमझी पर परदा डाला

"तो क्या मैं प्यार पाटर की बात करूगा ? अर बाबा, मैं गांधी महतमा के साथ रहा हू।'

"आह !" आहूजा जैस हुक्का गुडगुडाकर चुप हो गया।

मिन्नी फिर स फैल गयी थी। सीना खुला हुआ। लापरवाह ! सावलराम नजरा स दुलार रहे थे बोले गय—" ता महतमा से बडी-बडी

चीजें सीखनी पडी साव। बिरमचर, यानी सब औरतो को मा-बहिन समझना क्या समझना ?"

'मा बहिन !" मिन्नी ने आखें मूदी । बोल गयी।

'हा, तो मा बहिन ! और - और अपने रामजी, किसनजी, शिवजी, दुर्गा माता और क्या कहते हैं—मक्का मदीना अपन ईसा बाबा बुद्धजी, अम्बेडकरजी "

"जी हा जी हा "

"इन सबको बराबर समझना—भाई भाई। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई—सब भाई भाई। क्या होते हैं ?'

'भाई भाई !" कन्नो न कहा सहसा सावलदास शुरू हो, इसके पूव ही मिन्नी की ओर मुडा "बडी, अब खाना लगाओ नी साई। "

हा, बाई खाना लगाओ। लगाओ खाना !" झूमते हुए सावलराम बडबडाने लगे, "इसी को कहते है कि भूखे भजन न होय गुपाला ' वह हसे।

मिन्नी जैसे तैसे उठ रही थी। आहूजा और कन्नो को हसना पडा इसलिए हसे।

तो साव। " सावलराम बाले, 'एक बार कमुनिस्टो ने हडताल की ! अपने यही– टेशन पर। पचास आदमी उनके और साव, दो सौ मेरे। पूरे झासी डिवीजन के आदमी। " सहसा सावलराम की आखें खुल गयी। आहूजा न चौकवर देखा। डिपाटमट का मामला था। रेल्व यूनियन का कोई सस्मरण सुना रहे थे सावलराम। ध्यान देने की बात। पता नही क्या दाव पेंच खेला हो ! मालूम था—सावलराम बहुत धूत है। उनके रिश्तेदार की बारात विदाउट टिकट नही बिठाली थी स्टेशन-मास्टर न। एक मजदूरिन का मामला उछालकर बलात्कार का आरोप लगवा दिया। नौकरी ले बैठे उसकी। बडे सफल नता ! ध्यान दिया।

सावलराम न कहा, "तो हडताल की कमुनिस्टो ने। मैं तो ससालो को कमीनिस्ट कहता हू पर चुप इसलिए रहता हू कि गाधी न कहा था—बुरा मत देखो, बुरा मत कहो, बुरा मत सुनो। " उन्होंने तीन बार कान पकडे। बात आगे बढायी, 'कमुनिस्ट बोले कि या तो टेशन

मास्टर का तबादला करो या हम अनशन करते हैं। अपने पोद बाबू टेशन मास्टर थे। मैंने कहा कि करने दो ससालों को अनशन। और साब, उनके पचास आदमी अनशन करने लगे। पागल ससाले! मेरे पास दो सौ आदमी। मैंने उनका अनशन नहीं करवाया। बात तो जायज थी पर कम्युनिस्ट घड़े के नीचे से बात जायज क्यों होनी चाहिए। मैंने कह दिया जी कि नाजायज है। क्या कह दिया मैंने?"

'नाजायज।" मन्नो बोला। जोर से! जैसे जैहिन्द कहा हो।

"तो इस तरिया मैं अनशन के फेवर में नहीं हूँ। मैं तो कहता हूँ साहब, कि एक बार जेल में भी मैंने कह दिया था—कि देखो गांधी बाबा, ये रोटी में मार मत करो। हमी मर गये फिर तुम्हारी जै कौन बोलेगा? बतलाइये—कौन बोलेगा?'

टेबल पर खाना लगाती मिन्नी कैसे बोल गयी थी, उसे स्वयं ही पता नहीं चला। कहा था, "उन्हें पता होता कि आप जैसों के जय बोलने से उनकी जय हानी है तो वे गांधी महात्मा न बनकर मोहनदास ही बने रहते। ज्यादा सुखी रहते!"

'क्या कहा जी ई?" उन्होंने गिलास खाली किया। आँखें मुंद चुकी थीं।

"अरे यार! क्या बोल रही है?" मन्नो ने फुसफुसाकर आहूजा से कहा। रुआंसा हो गया।

आहूजा ने आश्वासन की थपकी दी। धीमे से बोला, "घबराओ मत! इस कुत्ते को बहुत जल्दी चढ़ती है। फटाक से आउट हो जाता है। यह कुछ नहीं समझेगा! ससाले मैं लात मार दो तब भी पूछेगा कि सिगरेट डाउन कहा हुआ जी?"

आँखें खाली सावलराम ने, पूछा, "आपने कुछ बोला, बहिनजी?"

"जी हाँ, मैंने कहा कि आखिर आप लोग न होते तो गांधीजी की जै कौन बोलता?"

"वा ई ता।" सावलराम ने अपना गिलास पुनः भर लिया, दो घूंट लिये। बोला, "बस डर गया बुड्ढा। अब छिपाने की बात नहीं है साहब, हम जो वक्त थे कांगरिस के, देश के सिपाही उनसे ही डरता

था बुडढा। अगरेज स्साले वा ता ठेंगे पर मारता था ।" वह मुडे, आहूजा से पूछा, "काहे पर मारता था ?"

"ठेंगे पर। "

'हा अ्। " वह सन्तुष्ट हुए।

मिन्नी ने कहा, ' आइये।

वे सब खाने के टेबल पर पहुँचे। मिन्नी ने झूम में उसे कुरद दिया, "फिर हडताल का क्या हुआ सावलरामजी ?"

"हा अ्। हडताल ! वो ई टेशनमास्टर वाली। कमुनिस्टो की। है ना ?"

हा हा। " आहूजा बोला।

"अजी साब। वह तो एक बात थी। उसको मैंने फेल कर दिया। क्या कर दिया—?"

"फेन। " मिन्नी बोली।

'हा, फेन। पर मैं तो आपको एक भजन सुना रहा था कभी बात चले तो कह देता हू साब। भजन कह देता हू।"

कौन सा भजन है ?" कन्नो ने पूछा।

'जे जो भजन है ना—जेई—भूखे भजन न होय गुपाला, जे धरी तुमरी कठी माला तो मैंने भी एक कांगरस का भजन बनाया है। क्या बनाया है ?"

'कागरेस का भजन !" आहूजा ने मूली खाते हुए कहा।

मिन्नी चिढकर बडबडायी "सचमुच कागरेस का भजन आप जैसो ने ही बना दिया।

सावलराम भजन सुना रहे थे "तो मैंने लिक्खा है कि—भूखे मरे ना, कागरिस वाला, जे धरा चरखा, खादीवाला। कैसी रही, साब ?"

बडी बढिया !" कन्नो ने कहा।

सावलराम गडगडाकर हसे। इतने कि दाल लुढक गयी, अरे र !" वह बोले। फिर चुप हो गये। खाना चुप के बीच हुआ।

मिन्नी नशे के बावजूद काफी कुछ स्थत रही थी पर टेबल के खाने ने दौर और चलाये। रगत खासी बढ़ गयी। एक सुबह फिर हुई थी। और इस सुबह के साथ मिन्नी ने अपने आपको भी बदलाव के तीसरे दौर मे देखा था। आहूजा खाने के बाद चला गया था पर सावलराम को लेकर कन्नो बोला था, 'इन्हे ज्यादा हो गयी है मिन्नी। यही ठहराना होगा।'

मिन्नी कुछ सुन सकी थी—कुछ नही। कब किस हाल म किस तरह, किसकी रात बीती—इस पर बहुत दिमागपच्ची करके भी मिन्नी कुछ समझ नही सकी थी। समझी थी सुबह—तब जब होश ने थप्पड मारकर जगाया।

बैडरूम मे कन्नो नही था। वहा थे सावलराम।

वह चीख भी नही सकी थी। सिफ पथरायी निगाहो से उन्हे और अपने आपको देखती रह गयी थी।

लग रहा था कि कुछ शब्द हैं जो मिन्नी को रोने के लिए लाचार कर रहे हैं या शायद हसने के लिए।

" हा, महतमा स वडी वडी चीजे सीखनी पडी सा'ब। बिरमचर—यानी सब औरता को मा बहिन समझना। क्या समझना?"

और मिन्नी बोली थी, ' मा-बहिन।"

"हा, मा-बहिन। ' वह बुदबुदाती थी—एकदम रो पडी। फफक-फफककर। ठीक उसी दिन की तरह पागल और बदहवास हुई ड्राइगरूम मे चली आयी थी

कन्नो—दीवान पर बिछा हुआ। निश्चित। गहरी नीद म। मिन्नी उसे देखती रही थी देखती रही थी कितने सतोष और चैन की नीद? सबसे बेखबर। यहा तक कि शायद अपन आपम भी।

और अगले ही पल उसे लगा था कि कन्नो के चेहरे की जगह मास्साब का चेहरा लग गया है। उसके अपन पिता टी० बी० की तीसरी मजिल पर पहुचकर बदहवास खासी स लडखडाता हुआ रुग्ण, जजर शरीर

कन्नो—उपयोगिता के अधरोग से ग्रस्त एक मृत आदमी।

काई अतर नही था दोना के बीच। एक मरने के लिए तैयार, दूसरा मरा हुआ। और मिन्नी? कब्रिस्तान के खुले ताबूतो के बीच एक जि

जिस्म। प्रेतग्रस्त। इससे अधिक कुछ नही।

इच्छा हुई थी कि दव कदमो उसके पास पहुचे अपने पथरीले जिस्म मे जडे हाथ आगे बढाय और उसकी गरदन दबाच ले। या फिर बैडरूम म पडे उस लार बहात पागल कुत्ते के गले मे साडी का छोर बाधे और गाठ खीच दे। आखें उबल आयेंगी।

य उबली हुई आखें मिनी को गहरी शान्ति देंगी। प्रेतमुक्ति का सुख—आनद।

पर इरादा थाम लिया है इस सबसे कब्रिस्तान तो मिट नहीं जायेगा। वह रहगा। वह रहेगा इसलिए प्रेतात्माए भी रहेंगी। बन्द खुले तावूतो से मुरदे भी झाकते रहेंगे।

जबडे कसकर उसने आसू पी लिये अब तक पिये हुए है। कनो जागकर ज्यादा देखने बोलन का साहस नही कर सका था। चाय-नाश्ते के बाद गहरा सन्तोप व्यक्त करके सावलराम चले गये थे। कहा था 'कनो बाबू। विश्वास रखें जब तक इस शहर मे हू—रेलवे के ठेके किसी और को नही जा सकते। " उसने एक उचटती नजर मिनी पर डाली थी। मुरदे की नजर। डरावनी, बीभत्स। मसूडो के साथ उभरे घिनौने दात। प्रेत हसे तो कैसा लगता है?

सावलराम हसा था 'अच्छा जैहिन्द। " वह चला गया था। उसे विदा करके कनो मुडा मिनी न लगातार देखा था उसे। थूकती हुई निगाह। वह कमरे मे नही थमा रहा था एकदम बाथरूम मे घस गया था। शायद डर रहा था कि मिनी कुछ कहेगी पर मिनी न कुछ नहीं कहा। कहेगी भी नही। कब कब किसको क्या कुछ कह सकी है वह?

सिर्फ कहा है अपने आपको। हमेशा अपने पर ही थप्पड चलाये हैं उसने। यह अपने आपको मारने पीटने, लहुलुहान करते रहने का अभ्यास भी खूब होता है। कभी कभी मिनी सोचती। रोन का मन होता। हस पडती अपनी ही अनपहचानी हसी।

बिना कुछ कहे सुने भी बहुत कुछ कह सुन दिया जाता है। कुछ इसी तरह मिनी कनो के बीच का वह समार चला कई ठेके आये-गये, कई वायदे दिये लिये गये गरदन से लगे हुए जिस तरह प्रेत लहू चूसता है

और एक नये प्रेत को जन्म देता है—उसी तरह मिन्नी ने अपने आपको पुनर्जीवित पाया ! एक अदृश्य म ।

इस अदृश्य का अहसास यही है कि लहू चुसवाने और लगातार चुस वाते रहने के बाद दद महसूस नही होता ! आदमी हस सकता है जी सकता है खुश रह लेता है—सब सहज।

"तू ने प्रेत देखे है ना ? मुझे देख। " मिन्नी हसी थी—"तकलीफ तो उस दिन तक थी, जब पहली पहली बार प्रेत ने मास मे दात लगाये थे अब इतना लहू निकल चुका है कि खुद ही प्रेत हो गयी हू। है ना मजेदार बात !"

अजित बोल नही सका था। बोलना चाहकर भी नही। भला क्या बोल सकेगा ?

मिन्नी न दोबारा प्याले मे चाय डालते हुए कहा था 'ये जो अभी अभी गय थे ना—य भी प्रेत है। जानता है—किसलिए आये थ ? "

"जानता हू।" अजित बोला था, 'यह सब बातें बन्द कर दे ! बहुत हुआ। अब सुनने का भी मन नही !"

वह जोर से हसी थी—' वह बात नही है जो तू समझ रहा है। " अपनी जगह से उठ पडी थी मिन्नी। अलमारी से एक लिफाफा निकाल लायी थी। कुछ तसवीरें बाहर निकाली। सब लडकिया कई चेहरे देखे हुए-से। पर कहा ? अजित को याद नही। छोटे शहर मे घूमते घामते ही कही देखा होगा उन्हे। पर इनसे मिन्नी और उसकी बातो का क्या सम्बन्ध ? सवाल भरी निगाहो से उसके चेहरे की तरफ देखने लगा था।

वह बोली थी, 'यू ही नही बतला रही हू तुझे। ये सब वो है जिनके साथ कन्नो ने मेरी तरह शादी नही की पर सबको प्रेत बना दिया है, या बन रही है ! और जानता है—प्रेत बनाने का यह कब्रिस्तान कहा है ?" सहसा वह सारे कमरे को देखने लगी थी—"ये जो शानदार परदे, कालीन, सोफे और सजावट देख रहा है ना ? यही है वह जगह !"

अजित की समझ मे नही आ रहा क्या कहे ? क्या करे ? व्यग्र होता जाता है। लगता है—हवा बन्द हो गयी है और वह किसी रेगिस्तान म बैठा है। तपते सूरज से पिघलता हुआ।

'ये प्रेत आफिसो मे फायलो पर फैसले लिखवाते हैं ये ठेके दिल वाते ? य प्रेत लहू पीते भी हैं पिलाते भी हैं। एक दिन आयेगा, जब ये प्रेत सारे मुल्क मे होगे—खून पीते और पिलाते प्रेत। तब सब कुछ सिफ प्रेतलोक ही हो जायगा। इन्सान पहली-पहली बार किसीका खून पीने की घिन या अपना पिलाने का दद महसूस किया करेगा फिर आदी हो जायेगा और होते होते एक दिन खुद प्रेत बन जायेगा, जसे मैं।"

तू चुप करेगी या नही ? "

वह जैसे थूकती हुई हसी हसने लगी थी—'क्यो—चुप क्यो करू ? तूने ही तो पूछा था जानना चाहा था कि मामला क्या है ? हर बार पूछता रहा है—और मैं हर बार बतलाती भी रही हू "

अजित उसकी आखो म देख रहा था बदहवासी के साथ साथ एक पागलपन चमक आया है हा बशक ! उसने महसूस किया था कि मिन्नी अब नही तो किसी और दिन—पागल जरूर हो जायेगी। लगा था कि रोकना चाहिए उसे। विषय खत्म करने के लिए बोल पडा था, ठीक है। मैं तुझसे सहमत हू—तू छोड दे इस पाजी को !"

उसने चौंककर अजित को देखा एक पल की खामोशी के बाद हसी। बुदबुदायी, 'छाड दू ? हा, छोड देना चाहती हू !" सहसा वह चुप भी हो गयी। गभीर उदास और चिन्तित।

"चाहती हू नही—छाड ही द। गोली मार ऐसे कमीने आदमी को। " अजित उत्तेजित हो गया है।

'हा गोली भी मार देनी चाहिए। जरूर मार देनी चाहिए !" वह उसी तरह बडबडाती गयी—'पर पर राउन्ड नही है मेरे पास। प्रेतलोक का कोई प्रेत आसानी से लोक छोड पाता है क्या ? नही ! इतना आसान नही है।"

"क्यो ?"

"वह मुझसे कह चुका है—मैं तुझे तलाक नहीं लेने दूगा।"

"लेने कैसे नही देगा। उसका तो बाप देगा!" अजित ने गुस्से और नफरत से भरकर कहा था "यह मामला मुझ पर छोड दे। मैं ठीक कर दूगा सब! अगर वह स्साला तेरे पैरो पर सिर रखकर न कहे कि मिन्नी माफ कर दे मुझे। मैं तेरे कहे मुताबिक तैयार हू—तब तू कहना!"

वह चुप हो रही। सहसा उसने आश्चर्यजनक ढग से अपने आपको ही नहीं, सारे माहौल को वातावरण से दूर फेंक दिया था—"अरे चाय तो ठडी हो गयी! चाय बनाती हू"

'नही!" अजित उठ पडा था। "अब मैं चलूगा। आज बहुत काम भी है ये ड्रेस कलफ वलफ लगवाकर तैयार करनी होगी। डिपो मैनेजर ने कहा है—कल से ड्रेस मे आऊ।"

वह कुछ नहीं बोली थी। अजित के पास भी जैसे न सुनने के लिए बचा है, न बोलने के लिए। दो खिलौनो की तरह मुडे हसे, विदा हो लिये।

प्रेतलोक!

बेशक प्रेतलोक ही है। कितनो इस कदर गया गुजरा होगा या लोग यहा तक आ पहुचे है? विश्वास नहीं होता! पर अविश्वसनीय ही तो सच होता है। बल्कि उनके अतिरिक्त शायद कुछ सच ही नहीं है!

अविश्वसनीय यात्रा का एक सिलसिला या यों कि मचो की एक कतार! जिन्दगी के लम्बे रास्ते का एक जरूरी, बल्कि अनिवार्य दूसरा किनारा! आदमी शुरू होता है यात्रा पर रास्ते के बायीं तरफ से। आगन गली और फिर चौबारे समझने की एक यात्रा। और एक उम्र के साथ वह उसी मजिल पर वापिसी शुरू करता है—दिशा होती है वही बायें—पर सच देखता है रास्ते के दूसरे किनारे वाले। यह समय चुकने की यात्रा!

शायद पहली यात्रा प्रारभ हो चुकी है अजित की। आधे से अधिक रास्ता गुजर गया जीवन का एक चौथाई।

यदि चौथाई म इतनी षड्याहटें हैं, तल्ख हादसे हैं, तब तीन हिस्सा म क्या होगा? भय और आशका की एक झुरझुरी जिस्म का थरथरा जाती है!

यही कुछ सोचा था तब। तीन हिस्सा का डर! आशकाओ स भरा एक सपना

हा, विगत कुछ इसी तरह तो जीवित रहता है! सपन जैसा। कभी डरावना, कभी सुखकारी।

पर चालीस पार स प्रारभ यह वापिसी की यात्रा। जीवन की सडक का दूसरा पहलू चालीस तक की यात्रा के अनुभव ने बहुत सहज करदी है य वापिसी।

य रास्ता कही ज्यादा दुरूह, ज्यादा कष्टकर, ज्यादा दुखदायी है पर अनुभव आत्मबल और विवक बनकर दो शक्तिशाली बैसाखियो की तरह हर स्थिति, हर घटना को सुविधा से पार जान की शक्ति दिये हुए है!

अजित कुछ इसी तरह यह वापिसी पूरी कर रहा है शायद सब करते हैं! अतर यही है कि विगत के अनुभवो का मूलशक्ति बना दिया जाये! जो एसा नही कर पाते—वापिसी बहुत कष्टकर ही नही असाध्य हो जाती है!

कितन-कितन लोग है जिनका बढना भी देखा है अजित न, वापिसी भी। जया मौसी की यात्रा कथा का आरभ सुनकर वापिसी जानन की बडी इच्छा है। अजित का मालूम है—वे आत्मबल और विवेक से सब कुछ जुटाये हुए है। उस जी० बी० रोड के गलीज कोठे पर बैठे हुए भी उनकी यह वापिसी का अभियान दुखदायी नही रहा है

पर अजित न उन्हें भी तो खूब देखा है जिनकी वापिसी न सिफ दुखदायी रही है बल्कि भयानक बदनाममयी और उनके लिए असाध्य साबित हुई।

और अजित को वे भी याद हैं—जिनकी वापिसी दुखदायी होकर भी

दुखदायी नही रह गयी वे मुसकाते है, हसते हैं, जीवन माग तय किय जात है ! अन्तिम पडाव से निर्भीक ।

वापिसी मिन्नी न भी ली थी उस वापिसी ने उसे सिहरा दिया था ! दशन मात्र न जिस्म को कपकपी से भर डाला था। अनजान ही होठ बुदबुदा गय थे— हे भगवान। यह क्या हुआ उसे ?"

पहली पहली बार तो पहचान ही नही थी। शायद कोई भी नही पहचान सकता था ! कैसे पहचान सकता ? बरसो बाद जब जबलपुर, नागपुर दिल्ली भटकता हुआ एक बार फिर अजित अपने गृह नगर मे जा पहुचा था —तब उस मास्साब वाली गैलरी पर ही खडे देखा था उसन और एक उसी का क्यो ? कितना को ही ! कुछ बीत गय थे, कुछ बीत रह थे व जो आगन से अजित के साथ शुरू हुए थे व जो गली मे मिले थे और व—जिन्हें चौबारे पर पहुचकर अजित ने देखा था।

उस बीच यात्रा के कई पडाव थे। अनुभवो के दौर आये थे उनका जिक्र किये बिना यह महागाथा अधूरी रहेगी। वापिसी के आरभ से पहले उस जगह तक पहुचना भी तो बहुत जरूरी है, जहा स वापिसी आरभ हुई यही चालीस बरस की उम्र ! वह उम्र, जिस पर आते-आते अजित लेखक भी बन चुका है और काठे पर जाकर भी शरीरग्रस्त होने से बच सका है।

अजित माठे बुआ, बटनिया, मिन्नी जाने कितने सब के सब जीवन राह के पहले हिस्से को पार करते हुए चौथाई रास्ते से गुजर चुके लोग !

मिन्नी के घर स लौटकर वह फिर उसी कमरे मे जा घसा था जो उसकी एकमात्र जगह थी थकान मिटान की।

या कि थकान बटोर लेन की ? बटनिया से खाना मागने के बाद लेट रहा था वह ऊबता हुआ। सो जाने की इच्छा। पर नींद नही। सोचा था कि बटनिया के साथ ही कुछ वक्त गुजारे उबायगी या भगा देगा ! यही सोचकर पुकार लगा दी थी—"बटनिया ? "

बटनिया आ पहुची थी। अजित बोला था— 'बैठ। "

"नही। " उसने कहा था— 'टैम नही है। तू काम बता चाहिए तुझे, पानी ?"

'नही।" वह पता नही किस अधिकार से झल्ला गया था, "क्या काम कर रही है कि टेम नही है ?"

"मैं सूटर की बुनावट सीख रही हू अम्मा के कमरे म श्यामादेवी आयी हैं। उन्ही स।"

'कौन श्यामा देवी ?" अजित चौंका—यह नाम तो कभी नही सुना ?

"तू उन्ह जानता नही होगा। परसो ही आयी हैं। सिरीपाल डिलेवर के मकान मे। उसी हिस्से मे, जिसम सहोद्रा रहती थी पहले किराये पर फिर से चढा दिया है बदनसिंह न।" अजित कुछ कह, इसके पहले ही वह जान के लिए मुडी थी।

"सुन ?'

क्या है, फालतू म टो। ' वह झुझलायी, "बहिन जी चली जायेगी। ज्यादा रात तक थोडे बैठेंगी।'

वह चली गयी। अजित चुप हो गया। जाडी सुलगायी। कुछ करवटें बदली। क्या कर ? चले—श्यामा बहिनजी को ही देखे। कैसी हैं ? कौन ? कहा की ? महल्ले म नयी एन्ट्री हुई है। वह उठा। केशर मा क कमरे म जा पहुचा।

श्यामा बहिनजी सामने है। गोरी भूरी, भरी भरी। अजित के पहुचते ही उसे देखने लगी। बहिनजी। यही तो कहा था बटनिया न ? पर अजित को लगता है कि बहिनजी जैसी कोई बात नही है उनम। उम्र भी ज्यादा नही। यही कोई ३० ३५ की होगी। चेहरे पर चमक इस तरह है जैसे नयी ब्याहता हैं। अगुलिया मे अगूठिया, अगूठियो मे पुखराज और हीरा। गले मे कीमती लाकिट। दमदमाता सोना। नाक की लोग बहुत चमक रही है। शायद छोटा, बहुत छोटा हीरा जडा हुआ है उसम। माग मे सिन्दूर की रेखा। माथे पर टीका। सारे सुहागचिन्हो स सजी है श्यामा बहिनजी। अजित को देखते ही मुसकरादी है। बाल करीन के और दात एकदम सीधे कतारबद्ध। कुल मिलाकर बहुत खुबसूरत।

अजित अपने ही भीतर बडबडाता है—'महल्ले मे नया शगल आ पहुचा।" केशर मा कहती हैं—'श्यामा यह है अपना अजित! "

'अच्छा अच्छा। "

बदरी सिंह ने जवाब दिया था, बिल्कुल कर देंगे। सरकार तो यह मानती है कि कन्डक्टर-जैसी हैसियतवाले के पास भला रोज रोज कहां से ज्यादा पैसा हो सकता होगा। जरूर घोटाला कर रहा है।'

बदरी सिंह पुराना आदमी। आठ साल हो गये हैं उसे कन्डक्टरी करते। अंग्रेज के जमाने में काम पर लगा था। रियासती रोडवेज थी, नाम—जी०एन०आई०टी०। एक कम्पनी ही थी, फिर आजादी के बाद यही कम्पनी बदलकर मध्यभारत रोडवेज बनादी गयी। सरकारी हो गयी। अजित ने बहस की थी— यानी सिर्फ इसीलिए किसी आदमी को चोर मान लिया जायगा कि उसके पास ज्यादा पैसे हैं ?"

'बिल्कुल। और कारवाई भी हो सकती है।"

कैसी ?" परेशान हो उठा था अजित।

यही ससपेंशन हो सकता है 'नौकरी से छुट्टी हो सकती है 'अफसर बिगड जाय तो सजा भी दिलवा सकता है।" बदरी का जवाब था

अजित परेशान। कहा था—"अगर भूले भटके कंडक्टर गलती से दो चार की मार खा गया तो उसे हाल जमा करने होंगे, जबकि कही से कज उठाय, शम के मार बताना न चाहे तो उसे चोर माना जायेगा।"

"पर तू क्यो परेशान होता है यार। ये कानून तो बिना सिप्पेवालो के है। तू तो सिप्पवाला आदमी। मामा—आफिस सुपरडेंट बैठा है। सया भये कोतवाल अब डर काहे का।

इद-गिद बैठे एक दो कंडक्टर-ड्रायवर हसे थे। एक बोला था 'सिप्पेवालो की बात ही अलग है। उनके सात कतल माफ।"

पर अजित चुप। सोचता रहा था। सावधान रहना होगा। यह तो अच्छा ही है कि अजित के पास पैसे नही होते है। होते ता लापरवाही म पड़े रहते और तब फम सकता था। यह सिप्पा कितना है और कितनी बुनियाद है इसकी। अजित असलियत जानता है।

मगर जोशी साहब को किसी न किसी दिन तो मालूम ही पडगा। अजित न बेवजह ही एक झूठ उछालकर रोब जमाया है। पुरान-नय सभी लोग एक खास लिहाज करते हैं। वैसे कंडक्टर क्लर्क से भी गयी बीती हैसियत का आदमी होता है पर अजित ने एक झठ पर अपनी हैसियत खडी कर रखी है। सहसा उसे ध्यान हो आया था। बदरी बोला था, 'प्यारे! कल से लाइन पर चलना है तुझे। पर और ड्यूटी लगी है रहमान मिया के साथ। बडी चलतू ड्रेवर है। पूरे रूट पर चाय पानी करेगा। वह दुकनदारो के माथे। उसकी कंडक्टर को चिंता नही करनी पडती। बस, रहमान मिया की शाम का ध्यान रखना पडता है'

'क्या मतलब?' कुछ न समझकर अजित ने सवाल किया था।

'मतलब यह कि रहमान मिया पूरा अद्धा पीता है। अद्धे का भी अगरजी। दाम सात रुपया। यानी सात रुपय का अद्धा और सवा रुपय का खाना! धरम के सवा आठ कंडक्टर का राज देन होत हैं, फिर पौन दो रुपय रोज मिया को नक्द। घर गिरहस्ती की खातिर!"

अजित न मुह बनाया था। बडबडाकर कहा 'इसका मतलब है कि रहमान हिस्सा चाहता है पर जो नम्बर दो का काम करेगा ही नही, वह

हिस्सा क्या देगा ?'

"यह हिस्सा नही है मिया का सीधा सादा हिसाब है। रहमान इस तनखाह ही मानता है। कहता ह ये उसका ओवरटैम है।'

समझ गया था अजित। ये रहमान मिया कोई खतरनाक ड्रायवर होगा। सोचा था—हो। अजित न बेईमान है, न बेईमान को सहेगा। बदरीसिंह न हिदायत द दी थी, 'जरा खबरदार रहना उसके साथ। या तो उसका पहने ही तसल्ली दे देना, न दे पाये तो समझ लेना कि कोई चक्कर चलेगा।'

"कैसा चक्कर ?' अजित का चेहरा कडवा हा गया।

'यही काई फसानवाली बात। और क्या ?"

'मैं नही फसनवाला। ' अजित न घृणा स जवाब दिया था, "मियां अपन दाव पेंच किसी बईमान पर चला सकता है, मुझ पर नही।"

'प्यार, इस धधे म बईमान बन बिना कोई रास्ता नही है।" बदरी सिंह ने सलाह दी थी, "आदमी बईमान हाता नही है, हालात स्साले बा बना देते हैं।"

"हालात का नाम लकर बईमान अपनी वकालत कर लेते है।" अजित ने जवाब दिया था—उठ गया। जात जात सिफ बदरीसिंह की टिप्पणी सुनी थी उसन, 'चलो, देख लेंग। "

अजित चुप हो गया था। चला भी आया, पर तय किया था कि उन सबको, खास तौर से रहमान मिया को सिखा देगा कि हर आदमी बेईमान नही होता। और ईमानदार किसी स्साले स न ता डरता है, न उसकी परवाह करता है। फिर अजित को ता यह भी याद रखना हागा कि वह ऐर गरे घर का नही, जमीदार का बटा है। बेशर मा कहती हैं "चादी उनकी चमक दिखलाती, जि होन देखी न हा। जो धूप मे खेले हैं, उनके लिए चमक दमक बकार। कोई असर नही हाता। पैसा देखा है हमने।'

अजित ने पैसा देखा है। अब से दो साल पहले रोज [illegible] खच करता। महीन मे हुए तीन सौ। यह तनखाह तो [illegible] नही है। अजित पर वक्त आ पडा है पर [illegible]

यह तो नही है कि रहमान मिया जैसे दो पैसे की औकातवाले ड्रायवरो को रिश्वत खिलाये ?

मिनी सुनहरी सब इस चादी के लिए चमके, चकाचौंध हुए, बुझ रहे है। इसलिए कि उन्होने चादी देखी न थी। पर अजित ने देखी है। यह याद रखना होगा। इसके बावजूद रहमान मिया, जिसे अजित ने देखा तक नही है, एक अजब सा रहस्यमय आतक बनकर अजित के दिमाग पर फैल गया था साथ ही बदरी की हिदायत भी। लगता था कि किसी फिल्म की हीरोइन को जगल मे भटकते हुए बैंकग्राउड म्यूजिक से डराया जा रहा है

बाहर कुछ हलचल हुई थी। कुछ रुन झुन फिर वापसी। दो पल खामोशी छायी रही थी, इसके बाद बटनिया पानी का एक गिलास और तश्तरी से ढका लोटा ले आयी। कमर मे एक ओर रखकर वापस हुई। अजित जसे उत्तेजना स नहा गया था। लपककर बटनिया का हाथ थाम लिया।

'अरे रे ! ' बटनिया का चेहरा पिट गया। भयभीत। लगभग कापती हुई, 'ये ये क्या कर रहा है तू ?''

'कुछ नही। कह रहा हू कि थोडी देर बैठ।'' अजित ने एक झटके से उसे अपन पास, चारपाई पर बिठा लिया था। पर वह बुरी तरह घबराती हुई उठन की कोशिश करने लगी। बुदबुदायी थी, '' ये —ये क्या पागलपन है ? मैं तुझे काम क्या है ? बता ? पर इस तरिया वह बार-बार बरामदे की ओर देखती। बोलते मे आवाज घोट रखी थी उसने।

'बात कुछ नही है ! अजित न कहा था, 'तुझस गप्पें करनी है ''

'ता तो मेरी कलाई छाड ! मैं--मैं स दूर पर बैठती हू।'

'यहा क्यो नही ?''

''पागल है तू ! ' वह एकदम से जैसे डाटती हुई बडबडायी 'इत्ती-सी बात नही समझता ? मैं—मैं आखिर को अब ब्याहता लडकी हू।'' अजित की पकड जरा कमजार हुई कि वह कलाई छुडाकर बहुत

आश्वास्त भाव से सन्दूक पर जा बैठी। बोली "हा, अब बाल ? क्या बात है ?" वह कलाई भी मसलती जा रही थी, पर चेहरे का भय सहसा धूप खिल आने की तरह छट गया था।

अजित उसे देखता रहा था शब्द— 'मैं मैं आखिर को अब ब्याहता लडकी हू। " बरबस ही मुसकरा पडा था। कहा 'ब्याहता हो गयी है तब क्या मेरे लिए बदल गयी ? ' अनायास उसे लगा था कि कोई बात नही है जो उसकी नाजायज हरकत को जायज बना सके। वह अपने भीतर एक खालीपन महसूस करने लगा था।

"क्या, बदल क्यो नही गयी हू ?" उसने सवाल किया था "लडकिया जब परायी हो जाती हैं, तब क्या बदल नही जाती ? उनका घर, ससार घरवाले, यहा तक कि नाम भी बदल जाता है ? उन पर भाई भाभी, माता पिता किसी का भी ता हक नही रहता। बस वह उसी घर की हो जाती है।"

अजित को लगा था कि बालना सीख गयी है बटनिया। इस तरह विश्वास और शक्ति के साथ तो कभी नही बोलती थी ? यह भी महसूस हुआ था, जैसे बटनिया के पास सिर्फ शब्द ही नही आ जुटे है, एक अनोखा आत्मविश्वास और निश्चिन्तता भी उसकी आखो मे झलक रही है। अजित ने पलके झपकाकर एक बार फिर बटनिया को सिर से पैर तक देखा था। लगता था कि हर जगह से बटनिया बदली हुई है। बल्कि यह तो वह बटनिया है ही नही, जो कभी अजित के सामने रोयी थी। उससे शिकवा शिकायतें की थी उसके साथ भाग जाना चाहती थी और उसकी बाहो मे समाकर जैसे गुम हो गयी थी

यह वह नही है।

"तू क्या कहनेवाला था ?' वह पूछ रही थी। उसने हौले से अपने सिर का पल्लू सभाला था "बहुत रात हो रही है और तू तो जानता ही है कि किसी घर की बहू बेटियो का इस तरिया बहुत रात तक पराय मद के साथ बातें नही करनी चाहिए।"

अजित को लगा था कि बटनिया ने दूसरी बार उसे धकियाकर अपने से दूर फेंक दिया है। इतना कि अजित लुढकता ही चला जा रहा है

बहुत दूर ! शरीर के भीतर जनमी उत्तेजना बर्फ की मानिंद ठंडी हो चुकी है। बदन जमा सा। बस उसे निरुत्तर देखे जा रहा है

'बोल ना क्या बात है ?'

"कुछ नहीं। ऐसी ही।" वह सिटपिटाकर रह गया। उससे कहीं ज्यादा बटनिया के लिए चिढ़ भी उठा था। यह वही है, जिसे पति से ढेर ढेर शिकायतें थीं ? कई ! गंजा चेचक के दाग, दूजिया [1] एकदम नापसन्द किया था उसे, पर आज, उसकी अनुपस्थिति के बावजूद बटनिया उसके नाम उसके स्मरण भर से उसकी हो चुकी है ? अजित की परायी ! अजित का मन खराब हो गया था। कुछ चिढ़कर कहा था "तू जा ! "

"पर तू कुछ कहनेवाला था ना ? उसने बड़ी मायूसी और भोलेपन से सवाल किया था। लगातार उसे देखे जा रही थी। सहज, सरल नासमझ बच्ची-जैसी आंखें न चेहरे पर सकोच, न शिकायत

अजित की झुंझलाहट बढ़ती जा रही है। एक बार फिर जबड़े कस कर नफरत से कहता है, 'कह रहा हू ना कि तू जा। '

'जाती हू।' वह उठ पड़ी है, 'पर "पर तू हमेशा मुझसे कड़वा ही क्यों बोलता है ? क्या हो गया है तुझे ?" और वह झटके से बाहर चली गयी।

अजित धक्का खाया हुआ सा एक पल उस खाली जगह को देखता है, जहा बटनिया बैठी थी !

मन मे एक खालीपन भर गया है, पर बटनिया कितनी भरी हुई थी ? कितनी आश्वस्त और निश्चिन्त। अजित की बेईमानी और धूर्तता को उसने बड़ी सहजता के साथ थप्पड़ मार दिया। अजित के कानों में बटनिया के व बोल गूंज आये हैं जिनके जरिए उसने कभी अपनी तकलीफ बयान की थी अजित पर विश्वास किया था यहां तक कि उसके साथ भाग जाने का प्रस्ताव रखा था—वही बटनिया आज उसे पराया कहकर चली गयी है। न सिर्फ चली गयी है बल्कि उसके अपने बीच भी एक ऐसी

[1] दूजिया—विधुर

दीवार का अहसास करा गयी है, जो सामाजिक संबंधों का एक बहुत बड़ा यथार्थ है।

अजित बौखलाया हुआ सा जाने कितनी देर सो नहीं सका था। कितनी बार उसे नहीं लगा था जैसे बटनिया को लेकर उसके भीतर उठ रही नफरत का हर लहर महज अजित का घटियापन है शायद उससे भी कहीं आगे जलालत!

कितनी बार खोजने की कोशिश नहीं की है अजित ने—क्या है वह चीज जो बटनिया के भीतर एक विद्रोही भी पैदा करती है और एक दिन अचानक बटनिया को बदलकर केवल श्रद्धा बना देती है। एक ऐसी ऊंचाई जिसे छूना धरती पर खड़े बौने दिमागों की उलझन है। उसका अपना कुछ नहीं!

मन होता है—इस बटनिया पर लिखना होगा! यदि सुनहरी पर लिखा जा सकता है, मिन्नी पर लिखने के लिए अजित कहानी की खोज में भटक सकता है, तब बटनिया पर लिखना बहुत जरूरी।

लिखेगा।

लगा था कि बहुत कठिन होगा। मिन्नी, सुनहरी सुरंगों सब पर *लिखना जितना सहज है, बटनिया पर लिखना उतना कठिन।* इसलिए कि धरती पर बिखरे रहस्य की चादरें खोल लेना सहज है समुद्र में कहीं दूर गहराई में छिपे सीप से मोती निकाल लाना दुष्कर।

और बटनिया को अजित कुछ भी तो नहीं समझ सका है रचमात्र नहीं! समझ पाना उतना सहज भी नहीं।

अजित करवटें बदल बदलकर सोचता रहा था और उस एक बार ही क्यों— कितनी कितनी बार नहीं सोचता रहा था कि कहानी खोजनी होगी और बटनिया एक ऐसी *कहानी—जिसकी खोज लगातार गोता* खोर की तरह की जा सकेगी यह तो पहली पहली बार लगा है कि समुद्र में खोयी कहानी है—बटनिया के भीतर कई बटनिया हैं। परतों में। इन परतों का देखना समझना होगा मगर जो कहानियां धरती की सतह पर ही कई कई चादरें ओढ़े हुए हैं—वे?

पाच

कितन ही दिनो से मिन्नी की तरफ जाना नही हो पाया था। सोचा था, पर अब लगता है कि जो कुछ सोच लता है, उसका साठ प्रतिशत हिस्सा उसका अपना नही होता। नौकरी, उससे जुड सवाल, उसके बाहर के सवाल ये सवाल अजित के साठ प्रतिशत दिन का फैसला करते हैं। किसी पल लगता है कि अच्छा ही है पर किसी पल गहरी ऊब घेर लेती है।

रहमान मिया स उलझना दूसरे ही दिन भारी पड गया था उसे। बदरी सिह याद हो आया था कहता था,"प्यारे इस धधे मे बेईमान बने बिना कोई रास्ता नही है।' और अजित ने सोचा—बकवास!

पर बकवास क्या ह, कुछ ही दिनो न जतला दिया था। रहमान मिया को देखने की अजब सी उत्सुकता लिये हुए ही पहुचा था वह डिपो पर आज उसके साथ जाना होगा। उसेदघाट। डकैत इलाके के बीच है यह जगह। कच्ची सडक। मिट्टी हा मिट्टी। पाउडर की तरह उडती है। बदरी ने यह भी बतलाया था देखा पण्डितजी वह इलाका है ठाकुरा का। बिलकुल लट्टू हैं। प्यार से बोलोगे तो तुम्हारी खातिर कतल भी कर देंगे। तीन पाच करोगे तो गाडी मे अपर क्लास मे एक पैर रखा आयेगा लोअर मे दूसरा—समझे! सम्हालकर।"

चुपचाप सुनता गया था अजित। अच्छा नही लगा था सुनने मे पर सुनना होगा। बदरी बतलाता गया था—'लौटोगे तो अपना ही मुह पहचान नही आयेगा।'

'ऐसा क्यो?" परेशान हो उठा था वह।

'इसलिए कि पौडर की तरिया रोड की धूल माटी चढ जायेगी। बाल झक्क सफेद हो जायेंगे, चेहरा भक्भूदरा।"

"बडा मोडा रूट है।"

"अरे, सभी कुछ भाडा है यार।' बदरी बोला था वह तो तकदीर समझो अपने रहमान मिया बड कारीगर आदमी हैं। गाडी टिपटाप रखते हैं और भगवान की किरपा से मिकेनिक आदमी है। ड्रिरैविंग का तो जवाब नही, वरना उसदघाट रूट पर डायवरी करना हसी ठट्ठा है क्या ? न तो सामू आ रहे वीकल से सेड मिलती है न सेड देन का चास होता है। वह तो रहमान मिया ही हैं कि एक जोत की पतग भी बिना झप्पा खाये सम्हाले चले जाते हैं।'

अजित को अच्छा लगा था। इसका मतलब है कि कम से-कम रहमान मिया आदमी भले ही खराब हो —डाइवर बढिया है। जान तो बचाय रहगा।

बदरीसिंह न आखिरी चेतावनी दी थी "काई डिलेवर नही है, जिसने उस रूट पर गाडी भेड न ली हो। कभी खाई म पडे है, कभी मिलप मार गये!" वह कुछ पल रुककर अजित की आखों म देखता रहा था, फिर फुसफुसाया था, बस, उसदघाट लेन का मजा एक ही है '

अजित उत्सुक हुआ था, 'क्या ?"

"उस रूट पै न तो चैकिंग हाली है, न कभी फ्लैग स्क्वेड पहुचता है।" बदरी बोला था 'बस, समझे कि राज होता है कडक्टर-ड्रैवर का।"

अजित न सुना एक बार था पर कई कई बार दिमाग मे गूजता महसूस किया था। उसेल्घाट रूट का सारा भूगोल! फिर डिपो पर था रहमान मिया के दशन होग पहली बार।

और रहमान मिया म जितन उत्सुकता के साथ मिलने की चाह थी, मिया भी उससे भेंट को उतन ही उत्सुक। जब टिकिट शीटस सभालकर अजित बाहर निकला था, तो अचानक एक लहीम शहीम आदमी सामन आ खडा हुआ था, अस्सलाम वालेकम!"

'राम राम!" एकदम हडबडाकर अजित बोला था। कौन हो सकता है, यह पूछे जान स पहले ही मिया न परिचय दे दिया था—"मुझे रहमान खान कहते हैं।"

'अच्छा अच्छा।" जबरदस्ती हसने की कोशिश करता हुआ अजित बोल पडा था। निगाह सिर से पैर तक रहमान मिया पर घूम रही थी। ढीला ढाला खाकी ड्रेस, खिचडी बाल, छोटी छोटी दाढी और काला तावीज गले मे। कधे पर एक अगोछा डाल रखा था। मिया न। मुसकरा रहा था।

'मरी डयूटी "

'मैंन सुना है खा साहब! हम नोग साथ साथ हैं।" अजित बोना था।

रहमान मिया न जसे आशीर्वाद देती नजरो स उसे देखा। दाया हाथ वढाकर हौले से कधा थपथपा दिया अजित का। बाले, 'चिनता मत करना पण्डितजी अल्लाहताना की दुआ से रहमान की गाडी पर कम नोग ही आन की हिम्मत करते हैं। ये अडूरे नडूरे वाबू लोग तो दूर स ही सलाम ठोकते ह।"

अजित की समझ म नही आयी थी बात। वह मिया के साथ हो लिया था। गाडी लेकर व कम्पू स्टड आय थे। अजित न बुकिंग की थी, शीट भरी थी और विसिल बजा दी थी। बस रूट पर रवाना हुई। अजित सवारिया देख हा था। दिमाग मे बदरी की चेतावनी ठाकुरा का इनाका है

और अजित एक सिहरन के साथ हर चेहरा देख रहा था। लम्बे चौडे लोग। हाथ हाथ भर का घूघट खीची हुई औरतें। मरदो के हाथ म सामान्यत लाठिया कान तक खिंची हुई लाठिया। बस मे लाठिया रायफलें लेकर चलने का आदेश नही है। यही सुना जाता था पर न सवारिया को स्टैंड पर घूमते पुलिसिया न टोका था, न रोडवज के लोगो ने। व सहज भाव से बठे थे। अक्खड जबान म बाल रहे थे। हर शब्द गाली की तरह रूखा और ढीठ। भिन्ड भग्रावर की भाषा! अजित की जानी पहचानी एक हद तक यह भाषा उसके अपने सस्कार मे भी है। थोडी माज मूजकर किताबिया ढग से सम्हाल ली गयी है पर है वही

याद हो आया था डाकू का इलाका है। लाखन रूपा का इलाका। पर चिन्ता नही। अजित है ब्राह्मण। लाखन ठाकुर होने के कारण लिहाज

करगा और रूपा महाराज मिले थे तो जातिवध होने के कारण। अजित आश्वस्त।

"ऐ कन्डेटर साब। " अजित के साच टूटे।

"क्या ? ' पास म बैठी एक सवारी पूछ रही है। मान तक तेल पिलो लाठी। लाठी के एक हिस्स पर लाह की पट्टी। पट्टी के ऊपर कसा हुआ तार। अजित न लाठी देखी। य लाठी अगर किसीके सिर पर हौले स भी पड जाय ता बस, हो गया उस लोक की यात्रा।

'बीडी पीतो तम ?" सवाल हुआ था। भारी आवाज पर एक अजब-सी सहजता म डूबी हुई।

'हा-हा, जरूर।" अजित ने उसके बढे हुए बिडल से बीडी निकाली उसने माचिस बढा दी।

बीडी जल गयी तो माचिस वापिसी के साथ सवाल आगया, "कौन जात हा ?"

'ब्राह्मण। बाम्हन।'

"कौन बाम्हन ?'

"सनाढय।"

'कौन गाव के हा ?'

'ग्वालियर खास के हैं।" अजित बोला, "वैसे हमार बाप दादा कोलारस के थे। सीपरी जिला।' अजित उनके टान मे टोन मिलाता हुआ बात करन लगा था मालूम हाना चाहिए इन लागा को भी कि अजित कही दूर का नही, उनके अपने भीतर से ही है। इससे वकत बढेगी।

वह चुप रहा पर घूर रहा था। सहसा बाल पडा, 'हम तामर ठाकुर ह।'

"अच्छा-अच्छा। " अजित ने बात खत्म करनी चाही। कान पर टिकी पैंसिल उतारी और शीट देखने लगा। कहीं कुछ गडबड न हो। सारे टिकिट दज हैं या नही

ऐ य य।" एक आवाज उठी—जनाना। "झुँई झुँई रोकोना। मैं उतरोंगी।"

अजित ने मुडकर देखा—एक बच्चेवाली औरत हिलती डुलती सीट

पर खड़ी हो रही थी। कुछ आवाजें—"अरे थम जा याई। गिर जायेगी। मोढा पिच जायगा यटू की नाइ। नैक मयुर कर। ग डिलेवर। राक्ले यार।"

अजित ने अचानक गम्न हाकर कहा था "यहा नही रुकेगी। स्टाप नही है।"

"अए ते ए स्टाप की ऐसी तैसी यार। राक्ले। "

'ऐ मियां जी। रोकिओ तब।"

पास बैठे तोमर ठाकुर साहब भुनभुना उठे थ—"अर यार कडक्टर साब, तुमहू अजीब हो। एक मिलट को रुकि जायेगी तो सारा घिस नई जावगी। और फिर तिहारे बाप की माटर है का? सिरकार है। रोकि देओ।"

सहसा अजित को खयाल आगया था बदरीसिंह। उसकी बात भी—" प्यार से बालेंगे तो तुम्हारी खातिर कतल भी कर देंगे। बिलकुल लट्ठ हैं। तीन-पाच को तो एक पैर अपर क्लास मे रखा जायगा, दूसरा लोअर म। ' एकदम चिल्ला पड़ा था—"रोकना रहमान खा। "

पर रहमान मिया उस बीच गाड़ी बहुत स्लो कर चुके थे। रुक गयी। महिला बडबडाती हुई उतर गयी। अजित न चैन की सास ली। रहमान मिया न गाडी स्टार्ट की। सवारिया बडबडा रही थी—"मर जाती राड। चालू गाडी म वह छौना उठाये ठाडी है गयी। "

'हा हा

अजित चुपचाप। मूड बिगड गया था। यहा तो सारा कुछ गैरकानूनी ढग से चलेगा और चलाना भी पडेगा। पर नही चलना चाहिए। अजित कुछ सख्त होगा। समझाया बुझाया करेगा हाथ जोडकर कहेगा "भाई साहब। कानून को कुछ समझो। हर काम गर हिसाब चला तो देश कैसे चलेगा?

उसेदघाट पहुचते न पहुचते पता चल गया था कि इसी तरह बस जाया करेगी। रहमान मिया बोले थे, "पण्डितजी, यहा इसी तरिया चलेगा।"

"पर मिया, यह तो बड़ी खराब बात है।" अजित ने दुखी होकर कहा था, "बिलकुल गैर कानूनी ! और फिर इस कारण अपन लेट कितने हो जाते हैं ?"

"यह भी चलेगा।" मिया लापरवाह थे।

"इसका मतलब है कि ढाई घटे का रूट चार घण्टे मे पार करो।" अजित ने कहा, "यानी आठ घण्टे की नौकरी तो यही हो गयी लेट का क्लेम मिला सो अलग। दा ढाई घटा लगादो बुकिंग और कैश जमा करने मे ! ओवरटाइम तो मिलता नही है।"

हस पड़े थे रहमान मिया, "किसन कहा है कि आवरटाइम नही मिलता है ?"

अजित चौंका। यह शब्द रहमान मिया का लेकर बदरी ने बोला था।

रहमान मिया ने दाढी खुजलाते हुए कहा—"ओवरटाइम तो करना पडता है। अपने आप नहीं मिलता।"

"मैं समझा नही या साहब ?"

"समझ जाओगे।"

उन्होन वापिसी ली थी। डिपो पहुचे। रहमान मिया एक ओर बठ रहे। अजित कैश जमा करने चला गया था। कैश म एक रुपया सात आन कम पडे। याद आया था कि कई जगह इकन्नी छोडनी पडी थी। सवारी के पास छुट्टे नही थे। और किसी सवारी के शायद पसे लेने रह गये होगे अब क्या हो ? पास खडे एक कडक्टर न कहा था, "सुबेर एक्स प्लेनेशन काल हा जायेगा यार ! हो किस होश मे ?"

अजित बहुत परेशान। अब क्या होगा ? कैश शाट हा रहा है। यह खबर वकशाप म गप्पें मारत रहमान मिया के पास भी जा पहुची थी। उनका नियम था, जब तक उनके साथ का कडक्टर कैश जमा करके आ न जाये वकशाप मे बैठकर राह देखते थे। ओवरटाइम बाद मे देना होता था उसे। उसी राह म थे शायद। दौडे-दौडे आय। पूछा, 'क्या हुआ ?'

अजित न रुआसा होकर बतला दिया था, समझ मे नही आता, ५८

गड़बड़ हुई ? "

"गड़बड़ ?" मियां बोले, "इसमें कैसी गड़बड़ ? यह तो रोज होता रहता है। आम बात है। कोई बात नहीं, जो ओवरटेम किया हो—उसमें से भुगतान कर दो।"

"ओवरटेम ?

'अरे, यार ! तुम भी " झुंझला पड़े थे मियां। आसपास खड़े कंडक्टर ड्राइवर हंस थे। रहमान मियां ने कहा था, "अरे कुछ डब्लू० टी० बिठायी थी कि नहीं उसीको कहते हैं ओवरटेम !"

'डब्लू०टी० ? यानी विदाउट टिकिट ?" अजित जैसे भौंचक्का हो गया था ' वह क्यों बिठाता ? पूरी टिकिट काटी तो थी भर पास !"

रहमान मियां ने माथा ठोंक लिया था। सबकी निगाहें अजित को इस तरह देख रही थीं जैसे वह दया का पात्र हो। एक बीमार आदमी, जिस पर दया की ही जानी चाहिए। अचानक रहमान मियां ने जेब में हाथ डाला था कुछ रुपया निकाला। पूछा ' कितने शाट हैं ?"

एक रुपया सात आने।" अजित रुआसे स्वर में बोला था।

रहमान मियां ने दो का नोट दिया। बोले, "जमा करो और मैं बाहर खड़ा हूं।"

पर '

'बहस मत करो ! जमा करो और बाहर आओ मेरे पास !" फिर वह बड़बड़ाते बाहर निकल गये थे— किस छोकरे के साथ ड्यूटी लगी। वाह अल्लाह !"

सब हंस रहे थे। अजित चुपचाप पैसे जमा करके बाहर मियां के पास जा पहुंचा। वह किसी क्लर्क से उलझ रहे थे। कह रहे थे ठीक है कि गाड़ी लेट है। रोज होती है। आगे भी होगी पर देखते नहीं, लौंडा नया है रूट पै। अभी कुछ नहीं जानता। एक दिन तुम्हें ओवरटेम नहीं मिलेगा तो क्या ड्राइवर कंडक्टर का रिकार्ड बिगाड़ोगे ! तुम भी हद करते हो सक्सेना बाबू ? कल हो जायेगा !"

सक्सेना बाबू एक नाराज नजर से अजित को देखा था। कहा, कोई बात नहीं मियां। आज मैं गाड़ी राइट टाइम दरज किये देता हूं,

पर आगे ख्याल रखना। वरन कुछ नही सुनूगा।'

"हा हा, ठीक है। ' रहमान मिया आगे हो लिये। अजित पीछे। मिया बडबडाये जा रहे थे— कमाल के लोग है। इस तरह खून लगा हुआ है मुह से कि बस। एक दिन हरामजादो को टुकडे नही मिले तो लगे झाकने। कुत्ते स्साले।"

डिपो से बाहर निकलते ही सस्ते होटल खुले हुए थे। टाट पट्टिया और तेल से चिकनी मैली बेचो से भरे हुए गन्दे कपडोवाले छोकरो की दौड। खुल्लम-खुल्ला देशी शराब के दौर लायसेंस किसीके पास नही है। खुली बचते हैं। हर ड्रायवर का अपना ठिकाना। पौवा, अद्धा, बातल से बात पहुचती है कलेजी मटन कीमा करी

अजब सी महक फैली हुई। अजित कभी नही रुका है वहा। जी मिचलाने लगता है। रहमान मिया एक ऐसे ही होटल मे समा गये सलामवालेकुम राम राम करते हुए। अजित ने कहा था, खा साहब? इजाजत?'

कमाल है ' मिया बैठते हुए बडबडाये अजब अहसानफरामोश आदमी हो, मालूम नही कितना बडा घाटाला कर दिया है तुमने। "

अजित के नथुनो का स्वाद गुम गया। सिर्फ दिमाग जा ठहरा मिया के शब्दो पर। उसे अहसानफरामोश कह रहा है। कुछ रूखेपन से सवाल किया था, मैंने क्या किया है खा साहब?'

रहमान मिया को कुछ गुस्सा आने लगा था। छोकरा उनकी कीचट लगी टेबल पर काच का गिलास और देशी शराब का एक अदधा रख गया। मिया ने कहा था— बैठो, बतलाता हू। क्या गजब किया तुमने।

न चाहते हुए भी अजित को उनके सामने वाली बेच पर बैठना पडा। मिया ने पूछा 'लोगे?' उन्होने बातल का मुह जोर से घुमाकर ढक्कन तोड डाला था। गिलास मे पेग बनाया और पहली ही बार मे पूरा गिलास खाली कर दिया। कहा— देखो पण्डतजी तुम कण्डक्टरी कर रहे हो कनक्टरी नही। समझो। '

"तो मैंने कहा कहा है कि मैं

"पहले पूरी बात सुनलो। " मिया ने जोर से चिल्लाकर कलेजी

रखना, अगर मन लगेगा, मेरा और मैनेजमेंट का काम नहीं हुआ तो तुम्हारा खुदा मालिक है।

अजित लौट पड़ा था। फिर बुरी तरह भनभना गया। दिमाग से शहर की तरफ जाती बस में सवार होकर उन्हीं सब बातों पर सोचता आया था जो रहमान मियाँ से सुनने को मिली थीं

यही कुछ अगले दिन भी चला था। एक बार फिर रहमान मियाँ की हिदायतें मिली थीं। इस बार सांत्वना भी '...अपने मन को दिल समझना पड़ता जो कतल की रात होगी तुम्हारे हक में।'

अजित सुलग उठा था घृणा में। न चाहते हुए भी वहाँ कड़वाहट के साथ कह गया था मियाँ। अब जो तकदीर में हो पर मैं यह सब नहीं करूँगा जो चल रहा है। आखिर हद है शराफत की। यहाँ कोई ईमानदार हो नहीं होगा?

रहमान मियाँ हँसे थे इस तरह जैसे अजित पर थूक रहे हों। बोले, "अभी लौंडे हो। बड़ा जोश भरा है, पर यह जोश इस पहली नहीं तो दूसरी सीढ़ी पर खतम हो लेगा। फिर अभी तो कन्फर्मेशन भी नहीं हुआ। खैर मैंने अपना फर्ज पूरा किया। अब तुम जानो तुम्हारा काम जाने।"

बात खतम हो ली। पर अजित को लगता—बात शुरू हुई है। बात की यह शुरुआत जिन्दगी के हर हिस्से में चलेगी? और अजित को इसी एक बात का हिस्सा बनना होगा। एक जहरीली कड़वाहट मन को काटती महसूस होती। लेखक बनना है। और लेखक से पहले बहुत कुछ बनना लेखक के लिए जरूरी होता है। पुरानी माधुरी की फाइल में अजित ने पढ़ा था। कभी महावीरप्रसाद द्विवेदी बोले थे, "एक अच्छा लेखक बनने से पहले अच्छा मनुष्य बनना आवश्यक है। यह सब न होने पर अपराधी बना जा सकता है लेखक नहीं।"

और जिन्दगी में जो कुछ अजित के सामने है सिर्फ अपराधी बनाने वाला है। कुछ भी तो ऐसा नहीं, जो अच्छे की ओर ले जाय, अच्छे से

जुदा रहने दे ?

रहमान मियां, सक्सेना, बाबू लोग एक पूरी भीड़ ही उबल आती है उसके गिर्द यह हुई नौकरी। उससे भी पहले उसकी गली—सहोद्रा सुनहरी, चन्दनसहाय, मोठे बुआ, मिन्नी कितने ही

केशर मां कहती हैं, " पेट की खातिर सब कुछ करना पड़ता है। पाप वह, जो खुद किया जाये। उसे कैसे पाप मानेंगे जो दूसरे करवाते हैं।"

पर पाप की परिभाषा अलग। करना, करवाना, सोचना सभी कुछ सिर्फ पाप।

पाप पुण्य की एक लम्बी भलभुलैया में एक अजित ही क्या सब उलझे हुए हैं। उनके लिए अपने तक खोज रखे हैं। अपनी तरह निबाह भी रहे हैं। बटनिया पाप मिटा लेती है— झूठे विश्वास के नाम पर उपवासों से। सुरगो का तर्क है, किसी तरह जीना होगा। भले वह कम्पाउण्डर शामलाल की तनखाह से जिया जाय या जुए के पैसे से यह दोनों न होने पर उसे चुनमुन के सहारे ही जीना होगा। सोलह सत्तरह साल की हो रही है आखिर उसे खुद का ब्याह करना है दहेज जुटाना है सुनहरी जिन्दगी की एक गारंटी चाहती है। यह गारंटी पहले माहेश्वरी देता था, अब ठेकेदार दे रहा है जमना निश्चिन्त है, जो जैसा करेगा वैसा भरेगा। वह क्यों इस चिन्ता फिक्र में घुले। आप भले, जग भला। मोठे बुआ की दृष्टि में पुण्य यह कि पापी को जूते मारकर अगर खुद के लिए कुछ पा लिया जाये तो सही रशमा सोचती है— उसके उपवास पूजा पाठ का एक लम्बा इतिहास दर्ज हुआ है ऊपरवाले के पास।

कौन पाप कर रहा है, कौन पुण्य—तय नहीं।

पर उससे पहले तो तय यह होना है कि पाप है क्या और पुण्य कहां है ?

इनके बीच माथा पीटता लहूलहान वर्तमान। यह जिन्दगी।

क्या होगा इसका ? क्या पाप पुण्य की खोज करते सही गलत को देखते समझते इस वर्तमान को बिसराया जा सकता है ? अजित सोचता।

निश्चय नही। मनहारो के समुद्र म जैसा ज्वार आता है यह ज्वार किसी नतीजे तक नही पहुचाता। महज भावसपनो का गहरे सागर की तरह हुचमचाकर रह जाता है।

अस्तित्व बनाये रखना का यह सघर्ष भला पुण्य पाप क लेखे जोखे म भुलाया जा सकता है।

बिलकुल नही।'

पर लेखक बनने के लिए अच्छा इन्सान होना जरूरी है।

अजित की शाम, रात और सुबहें कब आती हैं कब बीत जाती हैं—पता नही।

एक जमीदार के बेटे का कण्डक्टर होना पड़ा है और कण्डक्टर रहने के लिए उस बिना टिकिट सवारियाँ ढोना जरूरी है। कण्डक्टर न रहने पर सुबह नाम की चाय नसीब होगी? शेष बातें तो दरकिनार। शायद कुछ अच्छे तक जाने के लिए ही बुरा जरूरी है? जरूरी ही नही अनिवार्य।

अजित के लिए यही सब सामने है। इसने सब कुछ तो भुला दिया है। बटनिया न उत्तेजना दिला पाती है, न ही उससे बहुत बातें करने का मन होता है। बोली थी, 'मैं चार छह दिन बाद चली जाऊगी। वह' आ रहे हैं।

अजित ने सुना अनसुना कर दिया था। गाडी रोज लेट होती है। सबसे ता न रिमार्क ठोक दिया है। सुबह चिट्ठी मिल जायगी। जवाब दो।

रहमान मिया न बतलाया था, भई पण्डतजी, माफ कर देना। मैं कुछ भी नही कर सकता था। चार छह दिन आदमी को रोब में रखा। खुद के ओवरटैम पर जवान बन्द किय रहा, पर अब नही चलता। मैंने तो साहब के सामने बयान दे दिया है कि कण्डक्टर स पूछा जाय। हर स्टाप पर टिकिट काटने, शीट आ० के० करने म टाइम लगाता है। मैं उसकी मरजी क बिना तो गाडी भगा नही ले जा सकता।'

"पर पर खा साहेब! यह झूठ है। सरासर झूठ है। कहा जा सकता है कि यह सारा घपला सिर्फ सवारियों की वजह से होता है!'' अजित ने कहा था।

'इस जवाब को कोई नही मानेगा।' मियां वाले थे जवाब म दम होनी चाहिये। मैं क्या बिना स्टाप गाडी रोकने का इल्जाम अपने सिर लेकर खतरा लू ? माफ करना पैगम्बर नही हू।'

वह चला गया था और अजित देर तक रस्तोरा म प्याले के सामने बैठा रहा। सारे डिपो के लोग घूरते रहे थे उसे। सबकी नजरो में अजित के लिए बेचारगी।

बटनिया कह रही है " चार-छह दिन की ह। यो ही मुह सुजाय रहगा ता "

"तू जा बटनिया। आज मेरा मन ठीक नही है।'

'क्यो?" वह चिन्तित हो उठी थी।

अजित की ऊब, महसा ही गुस्से मे बदल गयी क्यो? तुझे बत लाना जरूरी है क्या? और बतला दूगा तो तू क्या कर लेगी? ऐसे कह रही है, जैसे तू दुनिया का हर काम कर सकती है। तुझे बतला दू कि क्या है? क्यो है? क्यो हुआ है? कह चुका हू कि जा। दिमाग चाटती है।' यह सब इस कदर तेजी और चिल्लाहट म हुआ था कि वह बुरी तरह घबरा गयी। उठी और इस तरह अजित का देखन लगी जैसे अजित पागल हो गया है फिर रुआसी हो गयी। चली गयी।

'बेवकूफ कही की। "वह बडबडाया था। बीडी जला ली। व्यर्थ ही बैठा रहा। महसा केशर मा की पुकार आयी थी अजित? एय अजित?"

अजित झुझलाया हुआ-सा उस ओर चला। अब यह कोई नया आदेश सिखान लगेंगी या फिर बटनिया ने ही जड दिया होगा कि अजित कहता है—मन ठीक नही। हजार बेकार की बातें करेंगी? ठीक नही है तो क्यों ठीक नही है? पेट खराब है तेरा? बाजार म कुछ खा पी लिया था क्या? किसी डाक्टर के पास क्यों नहीं गया? इन्द्रवश म मिनेगी बट निया का। खिचडी बना देना इसका पेट कभी नही ठीक रहता। वक

वास ।

पर देहरी पर ही थमा रह गया था। देखा—जोशी साहब बैठे है।
"नमस्कार साहब !

नमस्ते ! बैठो।" उनकी आवाज बडी शात है। बहुत धीमे बोलते है। हाथो म कई कई तरह की अगूठिया पहन रखी हैं। ये अगूठिया ग्रह शाति की होती हैं, अजित को मालूम है। पर कौन सा नग किस ग्रह की शाति का है इसे लेकर अजित न न कभी सोचा है, न माथापच्ची की है। लगता है ऐसे लोग अपने आपको धोखा देते है—बस !

एक ओर बैठ गया था। केशर मा बोली थी, "अब इसीसे सब कुछ पूछ लीजिये। मैं ता तग आ चुकी हू। पता नही यह दुनिया म कुछ कर भी सकेगा या नही !'

अजित समझ चुका है। जरूर एक्सप्लेनेशनवाला मामला होगा। जोशी साहब के पास ही आया होगा। वही तो सीधे अफसर हैं।

जोशी साहब एक पल शात रहते हैं फिर बहुत धीमी आवाज म कहते है तुमने मामा कहा था तो राखी वधवाने लगा हू बहिन जी से, पर अजित ! दुनिया का कोई अफसर उस आदमी को नही बचा सकता जो अपने कुलीगस का खुश न रख सके !

पर पर साहब, वे लोग सक्सेना, रहमान ड्रायवर जो चाहते हैं—वह मैं कर नही सकता ! मै कहा से उन्हे हिस्सा दू, जबकि "

' वह सब ठीक है। जोशी साहब उसी तरह शात आवाज म कहे जाते है ' इस जवाब से आफिस का सवाल हल नही हागा अजित ! तुम्हे कोई ठोस कारण बतलाना पडेगा। गाडी रोज लेट होती है रहमान न लिख दिया है तुम अपना काम देर से करते हो और गाडी खडी रखनी पडती है।

' यह झूठ है जोशी साहब ! अजित उत्तेजित हा गया है।

"मैं भी जानता हू कि झूठ है। वे तुरत बोलते है, "पर झूठ या सच कागजो पर सिफ वही होता है जिसके फेवर म कागज मौजूद हो ! "

अजित एक गहरी सास लेता है

' इस बार ता मैं सम्हाल लूगा, पर यह चल नही पायेगा। बहिनजी

वह सब अजित को तकलीफ देता है।

पर चार दिन पहले अनायास ही जिक्र निकल पडा था। नक्शा बनाते-बनाते रुक जाना पडा था। मालूम हुआ कि एक सज्जन मिलने आये हैं।

छोटे न तपाक से उनका स्वागत किया था। अजित से बोला था, "तू इदरीच रेना अजित अभी आता हू।" कहकर वह उनसे भेंट के लिए दूसरे कमरे म चला गया था। लौटा तो पच्चीस रुपये हाथ मे थे। कागजो मे दबाकर खुश खुश फिर से काम करने लगा था। अजित ने सवाल किया "यह पैसा ? '

'यह ऊपर का काम है। इस आदमी का मैंने काम करवा दिया था आफिस मे। बेचारा भोत परेशान था।"

'यानी यानी तून रिश्वत " अजित की आवाज घिन और गुस्से से भर उठी थी।

हस पडा था छोटे। बोला "अगर तू इसको रिश्वत मानता है तो मान ले मेरे को क्या ?"

"छि छि ! " अजित ने मुह बिगाड लिया था—

'अबे छोड ये छी छी। " छोटे बुआ ने कुछ नाराजी से जवाब दिया था, "स्साले इदर आ के किताबी बातें करता है तू ? और बिस बखत तेरी किताब कहा चली जाती होयेंगी जिस बखत बिदाऊट टिकिट सवारिया धरता हायेंगा गाडी मे ? एं ? '

"थूठ। मैं य हराम की कमाई नही करता।"

"अरे ? ' छोटे बुआ न एकदम स स्केल पेंसिल धरती पर रख दी थी। बनियाइन म हाथ डालकर बगल खुजलाता हुआ हैरत से बोला था 'तू नई करता ?'

'एकदम नई ! '

'तो ड्रेवर तेरे साथ कैसे पटाता हायेंगा ? और आगू भी लोग हैं। कैसे चलता है तेरा ? ' छोटे को गहरा आश्चय हो रहा था।

"मैंने सबको बोल दिया है--अपुन साथ यह सब नही चलेगा। गौरमिन्ट ने काम दिया है तो बदमाशिया करने के लिए नही दिया। फिर

यह तो मोच कि अगर सब लोग यही करन लगेंगे तो देश एकदम गड्ढे मे चला जायेगा। वैसे ही ता स्साले अगरेज दो सौ साल म सब लूट खसोट ले गय और बाकी बचा वह हम लाग ही चाट पाछ जायेंगे।"

छोटे अवाक उसे देख रहा था सिर स्वीकार म हिलाकर बोला था, "ये ता है यार ! पन करन का क्या ? ' उसकी आवाज ढीली हो गयी थी। उतनी हो उदास, जितनी कभी बकारी मे थी। कुछ पल रुककर बोला था, 'अब य सब नई करें ना तो इन्टर घर नही चलता, विदर नौकरी नही चलती।"

"चलने को क्या है, सब चलेगा ! तू मत कर ऐसी-तैसी दूसरो की !" अजित उत्साह स बाला था। लगा था अचानक वह छोटे बुआ से तीन बालिश्त ऊचा हो गया है। बडे गौरव से कह जा रहा था, "जो स्साले पाप कर रह हैं, करन दो ! तुम क्यो "

"पन यार, मेरे यहा तो चल ही नही सकता !" छोटे ने एकदम निराश स्वर म जवाब दिया।

"क्या ? रिश्वत लो—ऐसा नौकरी के लिए जरूरी है क्या ?"

"हा, हमारे डिपाटमट म है। एक्सी० साहब को हाई लेबल पर देना पडता है। असिस्टन्ट इन्जीनियर का देते है, वे सब ऐक्सी को। इधर हम बाबू लाग हैं, बिनकी पूछ बडे बाबू के पास अटकी है। बिनको हर महीन हर बाबू से तीस रुपय होना नई होन पर बिसकी मुश्किल। कल कहगे तुम लेट हो। परसो कहेंगे जरूरी फायल का काम नही किया। अगले दिन बोलेंगे टाइम पे नक्शा नई बना। दो घन्टे के नाटिस पे दो दिन का काम मागेंगे। बस, बाबू मर गया ! नक्शानवीस का हो गया राम नाम सत !"

"पर तू साफ नही कह सकता है ! मैं नही करूगा !"

एक उदास नकली हसी खिच गयी थी छोटे के चेहरे पर, "हा अ ! कर सकता हू ! और बडे बाबू मेरा बिस्तरा बधवा सकता है। नौकरी नहो छुडा पायेगा तो ट्रासफर करवा देगा। कुछ नही तो विदर, शाजापुर, शुजालपुर कही भेज देगा !"

"मैं नहीं मानता !" अजित न कहा था। 'आदमी खुद न करे तो

कोई गरदन दबाके नही कहता कि लो धरती चाटो !"

"अबी तेरे को पन्दरा दिन हुए हैं ना काम पे इसीलिए ऊची ऊची बाग दे रहा है मुर्गे की माफिक। मेरे को आठ महीने हो गये सिरकार मे—हा!" लगभग धकियाकर छोटे बुआ ने जवाब दिया था। पेन्सिल स्केल उठाली।

पर अजित सहमत नही। कहा था "ये सब उल्लू बनाने की बातें हैं। क्या मुझे मालूम नही कि वह सुनहरी, लुच्चपन करती है तो अपनी सफाई मे दूसरे के मत्थे दोष मढ देती है। तू भी ऐसा ही कर रहा है। बस!" अजित उठ पडा था "पर कहे देता हू कि इतने बडे आदमी का बेटा होकर यह काम बहुत शरम की बात है यार! आखिर हम भूखे नगे तो है नही थे भी नही तू सिलेदार का बेटा है। एक तरह के जागीरदार फिर भी "

"बडे आ दमी! हूह!" वह लगभग थूकने की हसी म हसा था 'मर गय सारे बडे आदमी। अब बडे आदमी माने टापन सिंधी। दूध और ताजे फेन का पैसा लेता है वह बडा आदमी। तू फालतूच म पडिताई पेलता है स्साले!" सहसा वह उत्तेजित हो उठा था, गाधी बाबा की मूरती लगान मच कागरेस का मिनिस्टर बीस हजार खा गया है गरीब लाक का खातीर बीज मिलेंगा जिस नेता ने बोला है—ओच स्साला अपन अफ्सर लोक से मिलके पुराने जमीदार लोक कू बीज दिल वाता है "अबीच पोल खुली है। खुल गयी—तो क्या हुआ? यहा आया ह स्साला उपदेश करने को। "

"अबे जा चोरी करन को जायज बता रहा है!" कहकर अजित चल पडा था। दरवाजे से निकलते आवाज सुनी थी छोटे बुआ की, "तू भी जा स्साले। देखूगा किसी दिन तेरे को, कईसा गाधी बना है!"

वह सब याद आ रहा है एक-एक बात! एक एक पल, तब जब अजित ने बडी-बडी बातें की हैं। बडी-बडी बातें पढ़ी हैं। बडी-बडी बातें सुनी

हैं। अखबार खोलता है तो रोज ही जेबकतरों से लेकर मिनिस्टरों और समाज सुधारकों, ट्रस्टियों की खबरें सुनने को मिलती हैं लगता है कि वे सारे इरादे आदर्श, विश्वास धीमे धीमे मोम के महल की तरह पिघलने लगे हैं। इस पिघलते महल में बैठकर ही वह अपना आप गढ़ रहा है?

कैसे गढ़ पायेगा? जोशी साहब साफ साफ कह गये हैं, " कुलीगस को पटाकर रखो।"

न पटने का मतलब है अजित का सफाया। रहमान मियां की चेतावनियों का सच जैसे फैलता हुआ समूचे माहौल पर बिखर गया है धुंध की तरह! सब कुछ अनदेखा करता हुआ!

यही धुंध अजित के अपने जीवन पर भी छायेगा। यही नियति। और छा गया था

अगली सुबह रहमान मियां मुंह सुजाये हुए बस ले चले थे। अजित जगह जगह सड़कों पर चढ़ती-उतरती सवारियों से पैसे वसूल करता गया था। बिना टिकिट काटे हुए। ऐसा करते समय न उसे अपने प्रति कठोर होना पड़ा था, न निर्मम। बस, लगता था कि वह सबसे बदला ले रहा है। किसी शत्रु को पराजित या समाप्त कर डालनेवाला क्रूर सुख। इस तरह के पैसे अजित ने पैंट की दायीं जेब में भर रखे थे उसेदघाट पहुंचते पहुंचते वे पैसे, जो सरकारी थैले में होने चाहिए थे उनका ज्यादा से ज्यादा हिस्सा अजित की दायीं जेब में था। मुड़े-तुड़े, मुट्ठी में भींचे गये नोट रेजगारी का ढेर।

रहमान मियां उसी तरह सूजे रहे थे। जानबूझकर अजित ने सारे रास्ते में उनसे ज्यादा बातचीत नहीं की थी। कुश था ड्यूटी से आफ होने के बाद रहमान मियां को जानकारी देगा। और वह जानकारी भी इस तरह देगा कि मियां स्तब्ध हो जायें।

बायीं जेब से वापिसी की थी। कैश में जब रुपया जमा किया तो कैशियर ने हैरत से देखा था उसे 'यह क्या हो गया प्यारे। कल एक सौ बयालीस थे और आज कुल पैसठ। क्या सारे गांवों में सवारियों के मातम हो गये?"

अजित मुसकराया था यह मुसकान जैसे कह रही थी, "बस जमा

करो। बहस मत करो। ''अजित ने सिर्फ इतना किया था कि जाते समय दो का नोट कैशियर के पास फेंकता हुआ बोला था, ''चाय पी लेना। ''

वकशाप म नही थे रहमान मिया। ढाबे मे मिले। सक्सेना को दो रुपये इस तरह दिये थे अजित ने जैसे थप्पड मारा हो। फिर हिदायत भी, ''सक्सेना बाबू कल से तुम वह लिखोगे, जो सरकारी वापिसी का वक्त है। समझे !'' सक्सेना का भी मुह खुला रह गया था। आखो मे अविश्वास था, उससे कही ज्यादा बिलबिलाहट।

अजित ढाबे म चला आया था ''सलामवालेकम मिया !'' उसके करीब बैठ रहा। जेब स रुपये निकाले, गिनने लगा। रहमान मिया कभी उसे और कभी रुपयो को देखता रहा अजित न रेजगी और नोट गिन डाले थे—चौसठ रुपये चार आन। उनमे से दस रुपय का एक नोट निकालकर मिया की तरफ वढा दिया था लो हुजूर। यह आपकी अमानत !''

रहमान इस बीच बहुत कुछ समझ चुका था उसने चुपचाप नोट लेकर जेब मे डाला। अजित उठने को हुआ तो कहा था, ''एक मिनिट बैठो तो पडत !''

'नही खा साहब ! चलूगा। थक गया हू।''

''अमा बैठो भी !'' रहमान ने हाथ थामा झटके से विठाल दिया। बोला, ''इतना ओवरटाइम मत करो कि ज्यादा टाइम चले ही नही। ''

अजित ने हसकर जवाब दिया था, ''खा साहब। ओवर टाइम करना उसूलन खिलाफ मानता था, पर जब करने ही लगा हू तो कम किया या ज्यादा ! क्या फर्क पडता है !'' और इसके साथ ही अजित को लगा था कि वह अनचाहे ही रो पडा है। धरती पर नजरें गडा ली थी। उस बाप की तरह जिसकी बेटी भाग गयी हो।

इतना ही क्यो, कुछ ज्यादा पीडा थी।

मिया कुछ देर चुप रहा था कहा था, ''जानता हू पडतजी ये जो ईमान बेचने का दद है— हम खूब जानता हू। पर इस मुल्क म खूब बिकने लगा है। मोहब्बत बिकने लगी है, इबादत, दोस्ती सब बिकने लगा है—

मुल्क कहा रहेगा ?" रहमान मिया ने पैग गले मे ढाल लिया था जैसे सूखी मिट्टी को तर किया हो। आवाज भी तर हो गयी थी उसकी। बोला था, "तुम कहोगे यार कि, गुनाह की सफाई दे रहा हू, पर खुदा जानता है, सफाई नही है—सिरफ खुद्दारी की कराह है।"

अजित उसे धिक्कारती हसी से देखता हसता उठ पडा था, "अच्छा, चलता हू। राम-राम। "

न उसे रुकना था, न वह रुका। यान्त्रिक ढग से शहर जाती बस मे बैठ गया था। चुप यह चुप उसके समूचे व्यक्तित्व पर फैल चुका है—तब कहा जानता था अजित। बस, लगता था कि इस चुप के साथ जुडकर एक पथरीलापन स्वभाव, निगाह और तमाम व्यवहार मे आ गया है।

केशर मा ने सुबह बडी हैरत से पूछा था, 'चालीस रुपये ? इत्ते ? आज तनख्वाह का दिन तो है नही फिर ?'

"तुम्हे क्या करना—रखो !" अजित कुछ गुर्राता हुआ सा बोला था, "समझना कि ओवरटाइम कर रहा हू। देखती नही हो कि कई-कई बार बारह घटे मे लौटता हू डयूटी आठ घण्टे की होती है। चार घण्टे जो खच होते है, क्या फोकट के है ?"

वही तो पर बेटा, य ओवरटेम भले कर, बस त दुरुस्ती का खयाल रखना !" केशर मा स्नेहिल हो उठी थी। रुपये माथे से लगाकर तकिये के नीचे डालती हुई बडबडायी थी —"य बदन रहगा तो ससार रहेगा "

'इसीलिए तो किया है मा। इसीलिए किया है !" अजित जबडे कसता बाहर निकल आया था मालूम नही केशर मा सुन सकी थी या नही। दरवाजे तक आते-आते बोला था वह, " सिर्फ बदन के लिए इस ससार के लिए। यही तो सच है !"

इस सच न निरतरता ले ली थी। अजित पूरे डिपो मे मशहूर। ड्रायवरो की चर्चा का विषय। कडक्टरो की हैरत का कारण। बदरीसिंह बोला था, भइया। सब्जी मे जित्ता नमक समाय, उत्ता ही ठीक रहता है। किसी दिन कडवाहट आ जायेगी। "

हसकर अजित ने जवाब दिया था, 'आती है तो आय। यहा नही, कहीं और चले जायेगे। सब्जी मे नमक हर जगह डालना है। जो मरकर

क्यों न डालो। और फिर अपनी तो यह जगह ही नहीं है यार! पड़े हैं जब तक दिन कटें, तब तक काटेंगे।"

उसदपाट रूट को लेकर कैशियर स जोशी साहब न रजिस्टर मगवाया था। डिपो म जबरदस्त उलझन थी। इतना कम कैश कभी नहीं आया था। खबर अजित का भी मिल गयी थी। अजित ने मुह बिचकाकर जवाब दिया था, "ऐसी तैसी स्साला की। देखा जायेगा!"

रहमान मिया गभीर रहने लगे थे। एक दो बार हिदायतें भी दी थी, 'पण्डतजी! जरा मामले की नजाकत समझो। फ्लैंग स्क्वेड वालों का कहा गया है—चैकिंग करें!"

"दखेगे!" अजित ने फिर उपेक्षा से जवाब दिया था, 'बस खा साहेब। स्टीयरिंग पर काबू रखा। शीट मैं सम्हाल लूगा!" दायी बायी जेबें भर हुए अजित घर चला आया था।

पहली पहली बार शराब का गिलास थामते हुए जैसे नये हाथों मे सनसनी होती है, नाक बन जाती है और कलेजा उजलन लगता है यही कुछ उस पल महसूस होता है जिस पल पहली पहली चोरी की जाये।

फिर सकोच, शम, अहसास धीमे धीमे बेसुध होने लगते हैं। होते-होते मर भी जाते हैं।

भागवती को ब्याह लाये टोपनदास न शादी की पगत खिलायी थी। बहुत रात गये अजित, मोठे, छोटे और कई लोग खाना खाने बैठे थे। उसी दिन अजित ने शराब पी थी, मास खाया था! मोठे बुआ की पार्टी मे विशेष व्यवस्था हुई थी। मोठे के दबाव डालने पर ही अजित गया था। पहले वादा लिया था उससे, "किसीको मालूम तो नहीं होगा यार? तुम लोग तो जानते ही हो—कशर मा अजित के न सिर्फ पसीने छूट रहे थे बल्कि लगता था टखनों मे कम्परोग हो गया है। बोलते हुए भी डर कर आसपास देखता।

छोटे बुआ, मोठे बुआ इद गिर्द खडे थे। कहा था 'छोड भी यार।

केशर मा का कहा से पता चलेगा ? "

'क्यो ? पता क्यो नही चल सकता ?" अजित ने बहस की थी, "हसी खेल है क्या ? वह स्साला टोपन ही बतला सकता है। इधर उधर बक देगा या फिर भागवती "

"कोई नही करेगा। मैं दोनो से बात कर छोडता हू।" कहकर मोठे बुआ एक ओर चला गया था। टोपन और भागवती से कुछ फुस फुसाता रहा था, फिर अजित के पास आ खडा हुआ, "मैंने बोल दिया है बिनको। अब कोई धडभड नही है ! चल। "

अजित चला गया। एक अजब सा डर दिल-दिमाग को थरथराता हुआ बसा हुआ है शराब सामन होगी, फिर मास ! पता नही, मुर्गे का कि बकरे का ? अजित को तो कै हो जायेगी ! ब्राह्मण का बेटा है वह। मास खाना दरकिनार, देखन भर से उबकाइया आती है। छोटे वाला था, "कच्चा देखने से घिन आती है। पक मे ता पता ही नही पडता यार। तेरे को ऐसा लगगा, जैस कटहल खाया है। थोडा चिकना चिकना जरूर होता है, पर वह चीज ही अलग। फिर तू है दुबला पतला। ये स्साली घास पत्ती मे कोई दम होती है क्या ? '

"हा !" मोठे बुआ ने जैसे धक्का लगाया था बात मे, 'मास खायेगा ता मास बनेगा। अब देख मर को ! पक्का सबूत है तेरे आगू !" कहकर उसने अपना दीघकाय बदन अजित की आखा के सामन एक टकी की तरह फैला दिया था, 'देख, ये मसल यह वाडी ? ये प्योर मीट स ही बनी है ! प्योर बकर का मटन। "

और मोठे बुआ के माटे बदन का बडी लालायित दृष्टि से देखते अजित के भीतर एक तक उगा था—एकदम वैज्ञानिक तक। मास से सीधा मास बना। बात जम गयी थी। कहा, 'खा ता सकता हू यार मगर " उसका जी खराब होने लगा था।

"मगर क्या ? डरता है कि किसी को मालूम हो जायगा ? ए ?" मोठे ने सवाल किया था।

"हा "

"बिसकी चिन्ता मत कर। एकदम प्राइवट काम करेंगे।

समझा !"

'एक डर और है यार। " अजित न कहा था, "मुझसे बर्दाश्त नही होगी। आखिर हमारे सस्कार "

"अब, तू भी कि दर ससविरत क चक्कर म पडता है प डत। चल !" कहकर वे खीच ले गय थे। अजित चाहता ता इनकार कर सकता था। साफ साफ। बाध्यता नही थी। इसके बावजूद कठोरता नही समेट पाया था अपन भीतर ? इसीलिए ना कि उसके भीतर भी कही कुछ था, जो खीचता था—देखे, क्या कुछ होता है पीकर ? बचपन से मन के किसी अज्ञात कोने म दबी रही यह इच्छा ही तो थी, जा उस दिन उसने कुछ नखरे, कुछ चि ता, घबराहट और उबलत—के करते आतम पर थाप दी थी यह थापना उस बार धीमे हुआ था। बहुत धीम। जी मचलाता रहा था उसका इसके बावजद वह उस अन ात रहस्य म उलझ गया था फिर उलझता ही गया था और अब, बहुत कुछ सहज हो लिया है। रहमान मिया उसके सामने ही कलेजी खाता है, अजित को अहसास नहीं होता। किधर गुम गया है वह—जो कभी उसे लेकर मन मितला दता था ? घृणा पैदा करता था ?

और यही कुछ हुआ था उस दिन की पहली पहली चोरी को लेकर। दोनो के भीतर ही एक दबा मुदा विद्रोह या आक्रोश भी रहा होगा उस सारे माहौल के लिए, जो अजित न अपने गिद बुना पाया था पा रहा है।

हर विद्रोह कुछ नये, निश्चित परिणाम भी दता है। यह चि तको का विषय है कि विद्रोह की धारा सही है या गलत। पर जीवन, व्यवहार, सस्कार और सामाजिकता म पनप व्यक्ति-व्यक्ति के ये छोटे विद्राह भी कम महत्त्वपूण नही हैं। बहुत साल बाद समझा था अजित तब मोहवश किसी स्थिति को जानने के लिए किया गया विद्रोह किस तरह उसके समूचे जीवन, रहन-सहन, सस्कार-व्यवहार को प्रभावित कर गया था ?

और कण्डक्टरी की वह छोटी-सी चोरी चोरी से टूटा परहेज, भय और सकोच बड़े सन्दभ मे अथ की नही, समूचे समाज-व्यवहार की चोरी या झूठ मे बदलने लगी थी

पर वह सब बाद की बात। कहानियो से गुथी जीवन यात्रा के कितने ही पडावो की महागाथा

तब भी तो पडावो म ही चल रहा था जीवन। एक अजित का ही क्यो, सबका

मिन्नी किस पडाव पर थी—अर्से तक अजित अपनी व्यस्तता मे सुधि ही नही ले पाया था। अनायास ही एक दिन पहुचा था। खुश था। मिन्नी उसका बदलाव देखेगी। केशर मा ही नही सब कहते है कि अजित के चेहरे पर कुछ रौनक आ गयी है। सुग्गो की बात सुनी थी उसने। उसे लेकर वैष्णवी से बोली थी, "जब कमाई कर रहा है, भला चेहरा क्या नही चमकेगा ? दौलत मे बडी चमक होती है जीजी !"

अजित को नही मालूम कि चमक कितनी होती है कैसी होती है। बस, इतना जानता है कि अब उस एक प्याला चाय की खोज म जून की दोपहरी नगे सिर, चप्पलो मे काटती गरमी के बीच नही गुजारनी पडती वह बेहतरीन रस्तोरा म न सिफ चाय पीता है, बल्कि चार दास्तो का पिलाते हुए अपन का महत्त्वपूण अनुभव करता है।

द्वार खुला, "तू ? कैसे याद आयी मरी ? ' वह एकदम स शिकायत करत हुए बोली थी। अजित कुछ कहे, तभी उसकी नजर अजित के सिर से पैरा तक दौड गयी थी। खुश हुई थी, 'तू तो एकदम ही बदल गया ? '

"हा, मुझे खुद भी एसा ही लगता है " कहता हुआ वह उसके साथ हा लिया।

दरवाजा बन्द करके वह लौटी। साफा उसी तरह है, सब कुछ वैसा ही—पर जाने क्या अजित को लगा कि बदला हुआ-सा है। शायद मिन्नी का चेहरा भी तभी वह चौक गया था। मिन्नी की बायी गरदन पर सूजन है कलाई पर चूडिया नही, पट्टी।

मिन्नी कुछ कहे, इसके पहले ही पूछ बैठा था, ' क्या बात है, तरी कनपटी सूजी है ? इस हाथ म भी "

बुआ। वही है जा सब कुछ न सिफ समझ सकता है, वल्कि समझा भी सकता है। और अब अजित का उसीकी तलाश।

माठे बुआ का खोजन म ज्यादा मेहनत नही करनी पडी थी। उसके कुछ खास ठिकान हैं खास इलाके। चार छह साथिया के साथ वही मौजूद रहता है। शाम के साथ उसकी अपनी जिन्दगी शुरू होती है वह और शराब। शराब और वह आदमी, जिसे मोठे की नजर मे आ जाना होता है।

टापरोवाली बस्ती मे मिला था माठे। वही उसका शिविर। अजित को उस गन्दे बदरग और बदनाम इलाके मे देखकर जैसे मोठे बुआ पलकें झपकने लगा था चारपाई पर बैठा था। इद गिद उसके आदमी। सब निगरानीशुदा बदमाश। किसी पर दस केस हैं किसी पर चार। चाकूजनी से लेकर राहजनी तक के। मोठे एकदम उठ पडा था, 'क्या बात है? क्या हुआ पडित?'

अजित ने कहा था, "तुम्हें मेर साथ चलना होगा।"

माठे के साथी भी खडे हो लिए थे। हैरत से दख रह थे अजित को। ज्यादातर लोग जानते हैं, मोठे का बचपन का दोस्त है। सबसे जिगरी। मोठे न पूछा, 'कहा?"

'पहले चलो तो। रास्ते म बतलाऊगा।' अजित उसे बाह से थाम कर चलने का सकेत करन लगा था।

मोठे न कुरता झटकारा था। पूछा, "कुछ लफडा हुआ क्या?"

'हा भी और नही भी।'

'तो चल। " वह उसक साथ हा लिया था। सहसा थमा, 'ज्यादा आदमी लगेंगे क्या?"

'नही फिर भी तुम चाहो तो "

मोठे साथियो की आर मुडा था, 'भूर। बखतावर। यार तुम लोग ' सहसा फिर अजित का ओर मुडा ' इलाका कौन सा है? कहा जा रह है अपुन?"

'ग्वालियर टाकीज। कुछ सोचकर अजित ने जवाब दिया।

'ठीक है।' मोठे ने साथियो से कहा 'तुम लाग ग्वालियर टाकीज

पर मिलो।'

अजित ने स्थिति साफ की थी, "हम थोडी देर म वही पहुचेंगे। कन्नो कन्नो साई का घर देखा है ना ? "

"हा हा, वह रेलवे वाला चोट्टा।" उनम से एक ने कहा।

"हा वही।' अजित ने जवाब दिया फिर मोठे के साथ चल पडा था। मोठे बुआ न चलते चलते सवाल किया था 'कन्नो। उसे क्या हुआ ?'

अजित ने बतलाया था, "उसे कुछ नही हुआ। उस हरामी के पिल्ले ने बेचारी मिन्नी को बहुत बुरी तरह मारा है एक तो उसम पेशा करवा रहा है, ऊपर से उसे "

"अरे यार पडत। तू भी स्साला भोत सन्टीमन्टल है। वह मिन्नी स्साली क्या कम है ? ब्याह से पहले ही घाटपान्डे के यहा जाने लगी थी ?" मोठे बडबडाता चला। "ऐसी औरत को तरिया तरिया से पिटना ही तो है "

"वह सब ठीक है। तू जो चाह बक, पर यह मत भूल यार। वह अपने को मानती है। अपन साथ बचपन म खेली है फिर "

'नई बिसमे थोडे ही मैं कुछ कह रहा हू वो तो ठीक है। अपुन कन्नो को हिन्दी मे समझा देंगे। बाकी महल्ले की लडकी भी है " सहसा वह रुका ' हुआ क्या था ?'

अजित ने सब कुछ कह सुनाया था। फिर बोला 'मोठे, उसके साथ न्याय होना चाहिए। "

"फिकर नई। " मोठे के जबडे भिच चुके थे, "हम बिसको स्साले को एकदम ठीक करेंगे एकदम सतर। चलो, कहा मिलेंगा स्साला ?"

अजित ने जगह बतला दी थी। कहा था, "पर काम जरा तरीके से हो एकदम नही। ठडा करके खाना ठीक रहेगा।"

"मैं कुछ नही बोलूगा। तू जब आख मारेगा तो बस बिस स्साले का तापळभाजी हो गया समझो। क्याअ ? '

कार्पोरेशन पर उसे ढूढन मे ज्यादा परेशानी नही हुई थी। बिल्डिंग के भीतर ही था। मोठे ने कहा था "तू विसको ढूढ के ला। मैं इदरीच् रेता हू।" फिर वह रेल डिब्बा केंटीन म समा गया।

अजित उसे पा लिया था। किसी क्लक से गेनरी के कोने मे बतिया रहा था। अजित को देखकर चौंका था। अजित ने मुसकराकर कहा था, "कन्ना साई जरा दो मिनिट तुमसे बात करनी है।"

'क्या है साई बालो नी ? " वह बडे अपनेपन से बोला "ये भाई साहब भी अपना ही हैं भाई ई '

"नही नही कुछ प्रायवेट।"

क नो की पलकें झपकी। निगाहो मे सतकता आयी। क्लक को विदा करके साथ हो लिया था 'वडी ऐसा कैसा प्रायवेट पढ गया साई " व बाहर आ चुके थे। कन्नो ने कहा, बोलला ?" आगे कुछ कहे, तभी रेल डिब्बे से मोठे बुआ निकल गया था, "कैसा है कन्नो साई ? "

कन्नो जैसे सिटपिटा गया, अरे, राम राम दादा। भात बढिया है सब्ब। तुम्हारी किरपा है साई।"

मोठे बुआ न अजित को देखा था पर कन्नो को। कन्नो के चेहरे पर घबराहट उग आयी थी। मोठे बुआ का इस तरह किसी से भी मिल जाना, उसे घबरा देन के लिए काफी था। मोठे बुआ अजित को ऐस देख रहा था जैसे कह रहा हो, "आगे ? '

अजित बोला तुम्ह जरा पाच मिनिट को हमारे साथ चलना पडेगा साई। एक काम है। बिजनिस का काम "

वडी बिजनिस के लिए तो जान हाजिर है नी। हुक्म करो भाई ई क्या करें एँ ?"

"हमारे साथ चलो!" इस बार मोठ बुआ ने कह दिया।

"आप लोक साथ साथ हैं क्या भाई ई ?"

'हा।" मोठे ने कहा, आगे हो लिया।

कन्नो ने सिटपिटाकर इधर उधर देखा। बुदबुदाया 'अब्बी हमारे को दस मिनट का इन्दर ही काम था दादा हुकूम होर तो उसको खतम करके चलू?"

"नही। समझ लेना कि काम खतम हो गया।" माठे ने कहा 'आजा।"

कनो चुपचाप पीछे हो लिया था। वातावरण अचानक इस कदर गभीर हो गया था कि रास्ते का शोर वे सुनकर भी नही सुन पा रहे थे। उनका खास तौर से कना का अपना शोर इस कदर बढ गया था, जिसने उसके सोच समझ, कान नाक सभी बन्द कर दिये। मोठे बुआ का सारा रुख जैस बार बार कह रहा था "कनो साई तुम खतरे मे पड गया भाई य ।' बीच म पूछ भी लिया था 'जबी बोलने का ना दादा वडी क्या हुक्म है हमारी खातिर र ।"

'बालेंगे-बोलेंगे।" मोठे बडबडाया 'तुम्हारे घर मे दारू है?"

'दारू अ? हा है ना साई। आप लोक की किरपा हैं भेंडा छे छे वोतल पडा है भाई ई। ' वह घिघिया उठा।

ठीक है। चले आओ।"

वे चलन गय। साफ हा चुका था कि कनो को कन्नो के घर ही ले जाया जा रहा है। शायद याद भी आया हो--मिनी ने कुछ कह सुन तो नही दिया। पर मिनी के कहने सुनन म कोई बडी मुसीबत आ सकती है, यह कन्नो ने कभी सोचा नही था। इसके बावजूद उसके तेज दिमाग मे यह सच कौंधते ज्यादा देर नही लगी थी कि जो मोठे कभी मिनी की सिफा रिश से उसे चाकूवाजो से बचा चुका था वही मोठे अब शायद उसकी ओर चाकू का रख मोडने वाला था। सिहर उठा था एकदम दरवाजे पर पहुचते पहुचते रुआसी आवाज मे कहा। उसने "वडी हमसे कोई गलती हुआ दादा अ? माफी देओ! वजी हम तुम्हारा बच्चा है—साई ई ये ई समझो नी।'

"ये ई समझते है कन्नो। बिलकुल येईच् समझते हैं।" मोठे बुआ ने जवाब दिया था। अजित ने बेल दबादी। दरवाजा खुल गया। मिनी मौजूद। उसके चेहरे पर भय उतर आया था मोठे बुआ अजित और कनो साथ! अजित की ओर भयातुर देखन लगी थी। कही कुछ गडवड न करवादे। फिर कनो का चेहरा गवाही दे रहा था। या तो पिट चुका है या पिटनेवाला है। व भीतर घुस पडे थे। सोफे पर एकदम से फैल गया

था मोठे बुआ। अजित ने ध्यान कर लिया था। ग्वालियर टाकीज पर ही उसके आदमी जमे हुए थे। देख भी चुके थे उन्हें। सतक हो गय थे। अजित ने अनुमान लगाया था। इद गिद ही होगे। घर के एकदम पास।

मिन्नी सिटपिटायी हुई एक ओर खडी थी। उसकी निगाहो मे अजित के प्रति चिढ, शका और भय समाया हुआ था। अजित लापरवाह। कन्नो बगलें झाकता कभी इधर, कभी मोठे बुआ की ओर। मोठे बुआ ने अपने भारी जिस्म को थ्री सीटर कुरसी पर जोर-जोर से हिलाते हुए कहा था, "यार साइ तुमने यह कुरसी तो मेन जोरदार ली है!"

'तुम्हारी किरपा है दादा अ। " कन्ना ने एकाएक हाथ जोड कर आखें बन्द की, छत की ओर देखा था, "सब्ब साइ झूलेलाल की मेहर है बाबा!"

'है, जरूर है। एकदम है!" माठे बुआ बडबडाया था, एक नजर मिन्नी पर उछाली 'कैसी हो मिन्नी?"

"ठीक हू, मोठे भइया। ठीक हू।" मिन्नी ने सहज होते हुए पूछा था "चाय लाऊ कि शबत?'

'नही नही मेरा शबत तो कन्नो साई के पास है।' मोठे बुआ ने कन्नो को घूरा था, "क्यो है ना सठ?"

"हा, है नी साई—है! " वह उठा था। एक घूरती नजर मिन्नी की ओर मुडी जसे सब कुछ कह दिया गया हो। मिन्नी किचिन मे समा गयी। अजित ने महसूस किया था वह तनाव तनाव मे कही ज्यादा डर था मिन्नी के भीतर। यह भी तो साफ साफ देखा था

कन्नो अलमारी से व्हिस्की की बोतल गिलास निकाल रहा था। मोठे बुआ अजित की ओर मुसकराया फिर दृष्टि बदली थी, 'अब?"

अजित न फुसफसाकर कहा था, मैं शुरू करूगा बात।"

"हू ' मोठे धीमे से बोला। कन्नो न बोतल गिलास टेबल पर सजाय।

मोठे ने कहा ' चीजें तुमन जोरदार इकटठी की है साई ससाला हराम का मान पचता खूब है। है ना पण्डित?" वह अजित की ओर मुडा, फिर खुद ही हो हो करके हसा। कन्नो हिनहिनाया। अजित मुसकराकर

रह गया। किचिन स मिन्नी की आवाज आयी थी 'अजित ? "

"क्या ?"

"इधर। भीतर आना जरा।"

अजित भीतर जा पहुचा।

नमकीन की प्लेट सजा चुकी थी। अण्डे उबल रहे थे। मिन्नी का जबडा कसा हुआ। वह चौंधती आखो से अजित को देखने लगी थी, "इसे क्यो ले आया तू ?"

अजित ने बडे गव से जवाब दिया था ' यह सब पूछने की तुझे जरूरत नही है। "

तूने यह नही सोचा कि तमाशा बन जायेगा ? " मिन्नी बडबडायी थी, "और और फिर तू क्या समझता है इससे मैं उसके पजे से छूट जाऊगी ?"

"समझ ले कि पजा छट गया।"

"पर अजित मैं तेरे हाथ जोडती हू उसे सम्हाल लेना कही ऐसा न हो कि '

"तू घबरा मत, सब ठीक होगा मैं समझाकर ही लाया हू उसे।" अजित प्लेट उठाकर बाहर निकल गया था।

वे उसी तरह बैठे थे। पैग तैयार। अजित के लिए भी। अजित न प्लेट रखते हुए कहा था, "नही, मैं नही लूगा।"

"क्यो ?"

"नही ! मुझे ड्यूटी पर जाना है।'

"अरे छोडो भी डयुटी व्यूटी साई ? सब्ब चलता है। भैंडा ये सरकार भी किसीका बरशती है क्या अ ? सब्ब तरफ चोर वसा है बाब्बा। अबी हम भी बहुत गोरमिन्ट की नौकरी किया है पर अच्छे से देख लिया है भाई, सब जगहा बईमान की कदर है। बैठो।"

अजित बैठ गया, "हा, देख रहा हू आपकी भी कदर थाडे है ?'

वह हसा। मोठे इस जार से हिलकर हसा था कि कुरसी हिल गयी। अजित बोला था, ' मैं नही लूगा !"

आवाज का दबाव कुछ ऐसा था कि न मोठे ने कुछ कहा, न

ने। चुपचाप अपने अपने पैग उठाय टकराये फिर कन्नो बोला, दोस्ती की खुशी मे भाई।

'हाअ ! " मोठे न गला तर किया। नमकीन खाया। बात शुरू की, "वह तुम्हारी जा पहली वाली हैना, बिसके साथ कैसा चल रहा है कन्नो सेठ ?"

'ठीक ही है साई भेंडा उससे हमारे को मोहब्बत नही था नी अबी मिन्नी हमार जीवन म बहार बनके आया है भाई। सब सम्हाल लिया !"

मोठे और अजित न एक दूसर को देखा फिर अजित बोल पडा था, ' मिन्नी तुमसे तलाक चाहती हैं साई ?"

कन्नो के हाथ का गिलास हिल गया चेहरे पर उखडाव तिर आया एक पल बाद बोल सका, ये-ये तुम क्या कहते हा भाई ? हम लाग की गिरहस्ती तो फ्रटियर मेल जैसा चलती है भेंडा, ये तल्लाक वल्लाक "

मोठे चुप था। सिफ अजित का चेहरा दखता हुआ।

अजित ने कहा था, 'बनो मत साइ। मिन्नी तलाक चाहती है और तुम बदमाशी कर रह हा। यह नही चलेगा। मत समझना कि वह अकेली है।

मोठे घूट लेकर एकदम बडबडाया था, 'हा वह इक्लीं नहीं है। समझ के रखो ! हमारे महल्ले की लडकी है। बिसके साथ कुछ आडा तिरछा हायेगा तो समझन का कन्नो सेठ तुम फण्टियर मेल की तरिया उपर जायगा। क्या समझा ?''

"पर पर ' कन्नो हडबडाया।

' लाऊ पिया ! मोठे बोला।

कन्नो ने घबराकर कई घूट उतार लिये।

मोठे बुआ न पैग बनाया। बोला 'हम लोक तुम्हारे को येईच् बताने आया है कि घडमड नही होना। अच्छी तरिया समझ लेन का कि मिन्नी हमारा बहिन है बिसको तुम कोई मस्तीबाजी करेंगा ना तो हम तुम्हारा बक्कल उतार लेंगा।

"पर भगवान जानता है नी साई हम उसके साथ कोई गडबड नही किया है।" कन्नो घिघिया पडा था—दोनो कान पकड लिये थे उसने, "विसकी तो हम पूजा करता हू बाब्बा !"

"पूजा ? " अजित अचानक चीख पडा था, फिर दात भीचकर एकदम से चिल्लाया था झूठ बोलत हो तुमने उसको मारा है। उस बेचारी का मुह सूज गया है हाथ म घाव हो गया ह और तुम कह रहे हो कि पूजा कर रहे हो। शम आनी चाहिए कन्नो साई। "

कन्नो इस बीच दूसरा पैग उतार चुका था गले म। चेहरा तनाव से घिर आया था। लगा था कि अजित और मोठे उसके और मिन्नी के बीच बोलकर सीमातिरेक कर रह ह। अनायास उसके भीतर पति जाग्रत हो उठा था। आवाज रूखी करके बाला था, 'देखो भाई हम तुमको जानता है। पर हमको तुम कोई ऐसा वैसा मत समझा नी। हमारा भी समाज दुनिया मे इज्जत है। फिर घरवाला घरवाली के बीच भेडा तुम काहे को टिर-टिर करता है माई ?"

"अबे आ मुर्गी के !' अचानक गिलास टेबल पर रख दिया था मोठे बुआ ने अजित कुछ बालना चाहे इसके पहले ही उसन गिरहबान थाम लिया था कन्नो का, 'आवाज दबा के रख। दबा के रख। तू किसको आख दिखाता है हरामजादे ? हमारे को ? ये जा स्माले तेरी आख है ना—इसको निकाल के अपनी कसम सूअरो को खिला दूगा। क्या समझा ?" इसके साथ ही मोठे बुआ ने इस जोर स उसे झकझोर डाला था कि वह गिडगिडा उठा "छाडो दादा। भेंडा हम कौन सा गाली दिया हू। सिरफ इत्ता बोला हू साई ई कि मद औरत मे तो झगडा होता ही है भाई। "

"तो बस। ठीक से बात कर !" एक झटके से पीछे धक्का देकर मोठे ने उसे छोड दिया था। वह हाफ आया। भयभीत। कभी अजित को देखता, कभी मोठे बुआ को। एक नजर पूरे घर मे घुमायी थी। यह समझना कठिन नही रहा था कि वह बुरी तरह फस चुका है।

अजित ने कहा था, "हम मारपीट करने नही आये है कन्नो साई, सिफ यह कहने आय ह कि तुम जो कुछ कर रहे हो, उसके लिए खबर

ने। चुपचाप अपने अपने पैग उठाय टकराय फिर कन्नो बोला, "दोस्ती की खुशी म भाई।

हाश ! ' माठे न गला तर किया। नमकीन खाया। बात शुरू की "वह तुम्हारी जो पहली वाली हैना, जिसके साथ फँसा चल रहा है कन्ना सेठ ?"

'ठीक ही है साई भैंडा उससे हमारे को मोहब्बत नही था नी अभी मिन्नी हमार जीवन म बहार बनके आया है भाई। सब सम्हाल लिया !"

माठे और अजित न एक दूसर को देखा फिर अजित बोल पड़ा था ' मिन्नी तुमसे तलाक चाहती हैं साई ?"

कन्ना के हाथ का गिलास हिल गया चेहरे पर उखड़ाव तिर आया एक पल बाद बोल सका येन्य तुम क्या कहते हो भाई ? हम लोग की गिरहस्ती तो फ टियर मल जसा चलती है भैंडा, य तल्लाक वल्लाक "

माठे चुप था। सिफ अजित का चेहरा देखता हुआ।

अजित न कहा था, "बनो मत साईं। मिन्नी तलाक चाहती है और तुम बदमाशी कर रह हो। यह नही चलगा। मत समझना कि वह अकेली है।'

मोठे घूट लेकर एकदम बड़बड़ाया था 'हां, वह इकल्ला नहीं है। समझ के रखो ! हमारे महल्ले की लडकी है। जिसके साथ कुछ आडा तिरछा होयेंगा तो समझने का कन्नो सेठ तुम फ्रन्टियर मल की तरिया उपर जायगा। क्या समझा ?''

"पर पर " कन्नो हडबडाया।

' दाऊ पियो ! मोठे बोला।

कन्नो ने घबराकर कई घूट उतार लिये।

माठे बुआ न पैग बनाया। बोला, "हम लोक तुम्हारे को येईच बताने आया है कि घडभड नही होना। अच्छी तरिया समझ लेन का कि मिन्नी हमारा बहिन है जिसको तुम कोई मस्तीबाजी करेंगा ना तो हम तुम्हारा बक्कल उतार लेंयेंगा। "

"पर भगवान जानता है नी साई हम उसके साथ कोई गडबड नही किया है।" कन्नो घिघिया पडा था—दोना कान पकड लिय थे उसने "विसको ता हम पूजा करता हू बाव्वा !"

"पूजा ? " अजित अचानक चीख पडा था फिर दात भीचकर एकदम मे चिल्लाया था झूठ बोलत हो, तुमने उसको मारा है। उस बेचारी का मुह सूज गया है हाथ म घाव हो गया है और तुम कह रहे हो कि पूजा कर रह हा। शम आनी चाहिए कन्नो माई। "

कन्नो इस बीच दूसरा पैग उतार चुका था गले मे। चेहरा तनाव से घिर आया था। लगा था कि अजित और मोठे उसके और मिन्नी के बीच बोलकर सीमातिरेक कर रहे है। अनायास उसके भीतर पति जाग्रत हो उठा था। आवाज रूखी करके बोला था "देखो भाई हम तुमको जानता है। पर हमको तुम कोई ऐसा वैसा मत समझो नी। हमारा भी समाज, दुनिया मे इज्जत है। फिर घरवाला घरवाली के बीच भेडा तुम काहे को टिर टिर करता है माई ?"

"अबे ओ मुर्गी के !" अचानक गिलास टेबल पर रख दिया था मोठे बुआ न अजित कुछ बालना चाहे, इसके पहले ही उसन गिरहबान थाम लिया था कन्नो का, आवाज न्या के रख। दबा के रख। तू किसको आख दिखाता है हरामजाद ? हमारे को ? ये जो स्साले तेरी आख है ना—इसको निकाल के अपनी कसम सूअरा को खिला दूगा। क्या समझा ?" इसके साथ ही मोठे बुआ ने इस जोर से उसे झकझोर डाला था कि वह गिडगिडा उठा 'छोडो न्दादा। भेंडा हम कौन सा गाली दिया हू। सिरफ इत्ता बोला हू साई ई कि मद औरत म तो यगडा होता ही है भाई। "

'तो बस। ठीक स गात कर !" एक झटके से पीछे धक्का देकर मोठे न उसे छोड दिया था। वह हाफ आया। भयभीत। कभी अजित को देखता, कभी मोठे बुआ को। एक नजर पूरे घर मे घुमायी थी। यह समझना कठिन नही रहा था कि वह बुरी तरह फस चुका है।

अजित ने कहा था, 'हम मारपीट करने नही आये है कन्नो साई, सिफ यह कहने आये है कि तुम जा कुछ कर रहे हो, उसके लिए खबर-

दार रहो। तुमन मिनी पर हाथ उठाया ठीक है, पर आगे कभी "

"नही नही, ऐसा कैरा हायेंगा ?" मोठे बुआ जैस एकदम पन पटकता हुआ बोल पडा । अजित का भय लगा। कहीं चढ न जाये। चढ जान पर इसे कैस सभाला या रोका जा सकेगा वह तीसरा पैग भर चुका था। उसन कुछ घूट लिये थे। गिलास टेबल पर रखकर हथेली से मुह पोछा। कहा, "नही। य नई होयेंगा। होईच् नई सकता। तुमन बिसका मारा है ? ' उसन सवाल किया।

कन्नो साइ न असहाय, पिटी आवाज म सिर स्वीकार म हिलाया था, 'हा भू। गलती हुआ साई। आगू से '

"किधर मारा है ? काहे म मारा बिसको ?" मोठे न सफाई सुनी ही नही, सवाल दज किया।

अजित न देखा, मिनी घबरायी हुई किचिन के दरवाजे से टिकी थी। इस तरह कि कन्ना न देख सके। उसकी समझ म नहीं आ रहा था कि मोठे का कैस थाम। लग रहा था कि वह उत्तेजित होता जा रहा है पर थामना होगा किसी भी तरह थामना होगा कहा, "सुनो मोठे, जो हो गया। सो हो गया आग से '

"अरे, चुप कर यार। "मोठे भनका। आखें सुख थी। चेहरा पथ रीला, "तू भी कमाल करता है। ये स्साला उस लाचार पे जुलम करता है। सोचता है कि उस बचारी का काई नही ? ऍ ? पन इसको आज बतला के जाना है हम है बिसके। मिनी मे घडभड करेंगा तो तो इस स्साले का भुडकस बना देंगे। " वह पुन कन्नो की ओर मुड गया। करीब करीब चीखकर सवाल किया था, ' किधर मारा उसे ? काहे से मारा बिसको ? बोल ? जल्दी बोलने का।

"वडी गुस्सा काहे होता है साई ? हम मारा नही था उसको, बस छुआ। ऐसे छुआ ! " कन्नो न हौले स मोठ की जाघ को छआ और मोठे ने बिजली की तरह दाय हाथ का जोरदार झटका उसकी कलाई म दिया, "पर हट ! स्साला पजामा करता है हमारा ? ' वह जोर जोर के सासें लेन लगा था अचानक कहा था, "तो तूने बिसको छुआ ? क्यो ? '

था ना ? ' वह उठा—एक छोटा मोटा टीला उठा। फिर टीला सरका। मिनी के करीब जा पहुचा। कनपटी देखी। एक जबडे भिची सास ली। फिर कलाई पर नजर डाली अजित की ओर मुडकर कहा, इस स्साले न इसका छुआ ? और छूने से इसको घाव हुआ अन इदर जबडा सूज गया विसका ! एँ ? "

कुछ सन्नाटा सा फैला रहा। मिनी एकदम रो पडी। तेजी से भीतर चली गयी। पर मोठे ने पुकारा उसे, "ए य मिनी ! इदर आने का ! इकडी य ! आन का !"

कन्ना के चेहरे पर सन्नाटा अधेरे मे बदलने लगा था अजित को लगा कि मामला हाथ से निकला जा रहा है। कापती, सुबकती मिनी पास आ खडी हुई। मोठे न एक नजर उसे देखा

अजित न प्रार्थना जैसी की, 'मोठे ! दो मिनिट तसल्ली से बैठ यार। बात हो रही है "

पर मोठे बुआ सुन ही नही रहा था। उसन इशारे के साथ कन्नो से कहा उटठो कन्नो सेठ। इदर इदर खडे हो जाओ। "

पन दादा हम माफी मागा नी। अबी सोचा भाई हजबैंड वाइफ के बीच मे चार बात होता ही है "

उठने का ! वह चीखा।

कन्नो एकदम खडा हो गया। भयभीत।

'इदर ! इदर खडा हाओ।' मोठे ने मस्त किया।

तुम क्या करता है भेडा ? " कापते स्वर मे बुदबुदाता कन्नो उस जगह जा खडा हुआ।

मोठे उसे देखता रहा देखता रहा अचानक उसने आधी की तरह एक जोरदार तमाचा कन्नो के जबडे पर कसा। एक तेज चीख उभरी और कन्नो उछलकर धरती पर जा गिरा

मोठे ने तसल्ली स कहा, "हम भी तुमको छुआ। " घृणा से उसने फुसफुसाहट की, 'बस ! बस छुआ !"

कन्नो तिलमिला गया था। आवाज इतनी जोर स हुई थी कि लगा

या किसी टेबल पर घूसा मारा गया हो मिन्नी ने फटी आखो से देखा। अजित उठा, पर तभी कन्नो की ओर निगाह गयी उसके होठो से बाहर खून आ गया था

अजित ने हडबडाकर कहा, "यह क्या करते हो मोठे, तसल्ली से बात "

अब होयगी बात तसल्ली से। बरोब्बर होयेगी!" उसन झुककर कन्ना का कालर से उठाया और कुरसी की आर खीच ले चला। कन्ना बाह से लहू पोछ रहा था अजित को लगा कि एक दो दात उखड गय शायद। डर और बचैनी से वह स्वय घबरा उठा। कुछ स्पष्ट होते हुए मोठें स बाला था, 'यार। यह कोई बात है? वह बचारा माफी "

'दे रहा हू ना माफी। " एकदम अक्खड ढग स बोल पडा था वह, "पन, माफी क्या फोक्ट मे मिलती है? " उसने कन्ना का कुरसी मे धसा दिया था।

सामने बैठ गया। पैग बनान लगा। निश्चिन्त। लग रहा था जसे इस थप्पड के बाद उस गहन सन्तोष मिला हो।

मिन्नी गिडगिडा उठी थी, 'मोठे भइया, यहा य सब '

"इदर ज्यादा नही करना है—इतनाच। बस! इसने तेरे को छुआ, अन हमने इसको छुआ। हो गया बरोबर। पन अगर हम बाहर करेंगा ता इस स्साले का आतडी निकाल के इसके खीसे मे डाल देंगा। समझो क्या?"

कोई कुछ कहे, इस बीच बौखलाया, अपमानित कन्नो जैसे समूची शक्ति से दहाडने लगा था, "देखो मोठे! अबी भौत हा गया। तुम चले जाओ यहा से! भेडा तुम हमारा बेइज्जती किया है इसका नतीजा तुम देखेंगा। अबी हम भी कोई ऐसा वैसा नही हू नी!"

माठे बुआ न गिलास एक ही बार मे गले उतारकर अडे का एक टुकडा मुह म डाला। सन्तोष से उठ खडा हुआ। 'ता स्साले। तुम मेरे को नतीजा दिखाएगा? एँ?"

अजित समझ चुका था। एकदम लपका, माठे! बस करो यार! और तुम भी साई चुप नही रह सकते क्या? तसल्ली स बात '

"अरे ! तुम हमसे बात करता है भेंडा। दो पैसे का कन्डक्टर ?" गरजता ही जा रहा था कन्नो। आवाज गुस्से के मारे फटन लगी थी, "समझता है हम छोड़ देगा ? अरे, हम तुम्हारे को नौकरी से धक्का लगवाकर बाहर करेगा नी। क्या समझाय तुमने को ? अब्बी तुमका दुरुस्त नही किया साई, तो हम भी खिल्लूमल का बेटा नहा, कुत्ते का मूत कहना नी !"

"आ हरामजादे ! " अचानक अजित को इतना तेज धक्का लगा कि वह मिन्नी स जा टकराया "कतरनी बन्द कर। ' मोठे बुआ ने कुर्सी मे धसे कन्नो का गिरहबान थाम लिया था।

'अरे जा। "अचानक कमीज मे घुटते गले के बावजूद वह दायी हथेली मोठे की ओर फैलता हुआ सिन्धी म कुछ बडबडान लगा था अजित जानता है—यह गाली देन का सिन्धी तरीका है "तुम गुन्डा लोग से हम डरनेवाला नही हू भेंडा ! सुबेरे देख लूगा तुम दानो को। "

'सुबरे तो तू हमारे को तब देखेगा कुत्ते, जब सुबेरा तेरे को दिक्खेगा ?' मोठे न एक जोर का झटका दिया और गीले कपडे की तरह उसे खींच निकाला। फिर तेजी स बाहर की ओर घसीटने लगा। अजित को चिल्लाकर कहा था, ' चटखनी खाल पन्डित। जल्दी। सारा सामान खराब हो जायेगा इधर का !" मिन्नी और अजित दोना मोठे का रोक रह थे, "इस छोड दा मोठे भइया !'

यार, छोड इस। बात खतम कर !" मोठे स उसे अलग करने की कोशिश करता अजित चिल्लाया था। आवाज कापने लगी थी उसकी अपनी।

कन्नो हाथ-पैर फेंक रहा था। जबान ज्यो की त्या चल रही थी। "हज्जार बार बालता है साई तुम्हार को दखूगा। समझूगा !"

सहसा एक हाथ स उसे घसीटते हुए ही माठे न चटखनी खाल डाली थी। फिर वह घमीटता हुआ ही कन्ना को सडक पर ले आया। बात की बात म कई स्तब्ध लोग सहमे खड़े रह गये। सडक पर आन जानवाले छिटक गय ! इधर-उधर मौजूद मोठे के साथी लपके चले आये थे मोठे

न सहसा जोर से सडक पर उछाल दिया था उसे।

"नही।" मिन्नी चिल्लायी। कनो जोर से रिरिया पडा। भागने की कोशिश की, पर तब तक भूरे, बख्तावर आदि कई लागो ने घेर लिया। इस जोर से लातें-घसे बरसने लगे थे कनो पर कि वह अधमरा हो गया। धरती पर पडा सिफ हाफता, सिसकिया लेता रहा। दुकानदारो मे सन्नाटा फैल चुका था। मिन्नी जोर-जोर स अजित को गालिया देने लगी अजित भौचक्का।

"मैंन तुझे बुलाया था क्या! तू क्या आया था यहा? किसलिए?" उसका चेहरा किसी अगार की तरह तेज हा गया था। सुलगता हुआ। वह कना क बसुध हा चुके शरीर पर जा गिरी थी। कपडे कई जगह से फट चुके थे। दाया बाजू लटक गया था। जबडे और मुह पर सूजन उभरने लगी थी। पूरी तरह धूल धूसरित

सन्नाटा धीमे धीमे खुला था लोग सहम सकुचे मोठे को देख रहे थे। अजित न कानो के पीछे कुछ खुसफुसाहटें भी सुनी थी कोई बोला था, "क्या बेरहमी मे मारा है बेचारे को!"

"अरे चुप रहा। अपनी भी गत बनवानी है क्या?" किसी न गुर गुराकर डपट दिया था 'यह मोठे दादा का मामला है! चुप करो!"

"मोठें कौन है इनमे?"

"वह, जो एक तरफ खडा है—माटा भैंसे जैसा। स्साले पर चार छह लाठी का तो असर ही न हा।"

मिन्नी रो रही थी।

अजित बुरी तरह सकपका चुका था। समझ म नही आ रहा था कि क्या कहे, क्या करे?

बहोश कनो को रात हुए जार जोर से झकझार रही थी मिन्नी। माठे ने सहसा एकत्र लागा का एक घोषणा करके सूचना दी थी, 'काई हरामी पुलीस के पास जायेंगा ता बिसका छाडूगा नई।" कहकर वह सहसा एक आर चल पडा था। मिन्नी के करीब से गुजरते हुए कहा था उसन, 'अच्छा, मिन्नी मैं जाता हू। आगू कभी ये स्साला धडभड नइ करेगा!"

'तुमसे यहा किसने था कि तुम लोगो के बीच आओ ? तुम अपने आपको बडा तीसमारखा समझते हो ? किसने कहा था ये सब करने को ?" वह गरजी, फिर जोर जोर से सिसकने लगी

मोठे विस्मय से कभी उसे और कभी अजित को देखने लगा अजित को उस सबका गहरा अफसोस था।

कुछ लोग घन्नो को उठाने लगे थे

मोठे ने नफरत से नाक सिकोडते हुए कहा ' ठीक है। आगू से नई पडेंगे ! बीच में। पन याद रखन का मिन्नी, ये घरवाला नही है आद मीच नही है स्साला। तू नही होयेंगी तो ये तिसरी लाकॅ धधा करेंगा। ये तो दल्ला है हरामी !" फिर वह साथियो की ओर मुडा, 'चल ये भूरे !

वे चल पडे। अजित खडा रह गया था। उनके जाते ही कई लोग सिमट आये थे। अर रे बेचारे को घर मे ले चलो! जल्दी !"

"बेहोश है !' कोई चीखा।

'अरे साहब गुडो से यारी करेगा तो यही होगा ये साई भी कम थोडे हैं ?' कोई टिप्पणी आयी थी।

मिन्नी सिसक रही थी। कुछ लोगो ने उसे उठाकर तागे मे डाला था। एक आवाज आयी थी ' पुलिस स्टेशन। "

नही !" मिन्नी ने कहा था, "पहले अस्पताल।"

हा हा, अस्पताल। अजी पुलिस क्या करेगी उसका ? कुछ नही होने वाला। अपने आदमी के पुरजे सम्हालो—बस !' मिन्नी जल्दी से कुन्डी चढाकर ताला लगा आयी थी फिर कुछ लोगो के साथ तागे मे सवार हुई और कन्ना के घायल शरीर को लेकर अस्पताल चली गयी। अजित की ओर देखा तक नही था उसने।

बुरी तरह उखडा हुआ लौटा था घर। ठीक नही हुआ। जब मोठे को सम्हालने का वश नही था तब उसे ले जाना ही भूल थी। पर जिस

मिन्नी के लिए यह सब किया, उसने तो अजित को उलटे कोसा ? यही नहीं, अस्पताल जाते समय बात तक न की ? एक अजब सी तकलीफ महसूस की थी उसने।

क्या होता है ऐसा ? बहुत सोचा था, पर समझ नहीं सका था तब। क्या यही कुछ वटनिया को लेकर नहीं हुआ था अजित के साथ ? वह सहसा अजित को उपदेश दे गयी थी पराया कह दिया था उसे !

पर वही 'पराया' कहनेवाली वटनिया एक दिन इतनी बडी उलझन पेश कर देगी—अजित को क्या मालूम था ? पता ही नहीं पडा था कि कब उसकी तसवीर कमरे से चुरा ले गयी ? उस तसवीर ने जो गुल खिलाया वह भी अजित का एक अनुभव।

पर वटनिया का गणित था वह। गणित में भी भूल-सुधार। यह भूल सुधार भी गलत हो गया था

एक दिन की बात है अजित को एक रजिस्टी लिफाफा मिला था। लिफाफे म थी एक चिट्ठी और चिट्ठी के साथ वटनिया के घरवाले का समझ न आनेवाला अजब सा रुख अजित का फोटो साथ भेजा था। *लिखा था,' यह फोटो गलती स मेरी पत्नी के सामान म चला आया था सो* भेज रहा हू। बाकी सब कुशल-मगल है। "

भौचक्का रह गया था अजित कैसे गया वह फोटो ? एसी गलती वटनिया से हो ही कैसे सकती थी ? अजित का सामान ऊपर है, वटनिया का सामान उसके भाई के घर रहता है निचली मंजिल। फोटो कैसे चला गया ? लगा था कि गलती नहीं है। कोई बात है, जो समझन म छूट रही है।

पर बहुत दिनो यह उलझन, *उलझन ही रही थी ठीक उन्ही उलझनो* की तरह, जो गली म कई-कई नाम चेहरे लेकर मौजूद थी। धीरे धीरे सुलझती हुई। कई कई बार अजित सुलझाव को भी नहीं समझ पाता था, उसी तरह जैसे उलझाव नही समझता

फिर धीरे धीरे बहुत कुछ साफ होन लगा था। मिन्नी के केस मे बन्नो *का गया हाथ टूट गया था।* काफी चोटें आयी थी। जो जख्म लगे थे, उनम कई टाके भी जडे गय। पुलिस केस बन गया। बयान हुए तो बन्नो

बोल गया था माठे बुआ का नाम। साथ ही बोला। गवाही म अजित का लिखवाया था उसन। बडी उलझन।

अजित बहुत भन्नाया था माठे बुआ पर, "तुमस कह दिया था यार, कि मामले को बिगाडे मत पर तू तो कभी होश म रहता ही नही है।" अजित बहुत घबराया हुआ था। पुलिस का नाम सुना है उसने। पुलिस को लेकर बहुत सी कहानिया भी सुनी थी। उससे ज्यादा पढी हैं। अखबारा म अक्सर क्रातिकारियो स लेकर चार उचक्का और नेताओ तक की कहानिया आती हैं। इन कहानिया म पुलिस की कारगुजारियो का चक्कर होता है और कभी कभी उनकी शैतानी भरी हरकता का भी।

अजित उसका चेहरा देख रहा था, पर माठे निश्चित। अजित बड बडाया था मालूम है पुलिस केस "

"अबे मालूम है सब! किसलिए इतना टरटराता है तू!" माठे न खीझकर जवाब दिया था, जो पाखाने जाता है लाटा साथ ले जाता है—समझा!"

अजित ज्यादा ही चिढ गया था। यह आदमी दिमाग स लेकर शब्दा तक म सिफ घटिया सोचता है, घटिया बोलता है। उबलकर कहा था, "क्या भाडी बातें करता है तू? पुलिसवाले तेरी सालिगराम की तरिया पूजा नही करेंगे!"

विनको मैं जानता हू। वो मुझको जानते हैं—बस खल्लास!"

'क्या मतलब?'

'मतलब ये पडित, तू अपना काम कर।'

'और ये जा गवाही म कानो ने मेरा नाम लिखवा दिया है—उसका क्या होगा?" अजित क चेहरे पर बेबसी और परेशानी थी 'अदालत के कटघरे मे खडा होकर मेरी तो हवा ही खिसक जायेगी। फटाफट सब कुछ उगल दूगा और फिर तू गया साल भर को!"

जात से बाम्हन है ना स्साला डरपोक! माठे बुआ न अजित की आख चेहरा, टोन सभी कुछ देखकर समझ लिया था—क्या होगा? एक पल होठ भीचकर कुछ सोचता रहा था फिर बोला, 'उस दिन तू गोल मार जाना। बाकी मैं सब समझ लूगा!

अजित कानूनी दाव पेंच जानता नही। बडी घबराहट हो रही थी। उसी पल हो गयी थी जब अदालती बुलावा आ पहुचा था। केशर मा ने तो माथा ही पीट लिया था। सारे महल्ले मे चीखती फिरी थी सोने सा लडका था! इस मोठे के चक्कर मे बिगड गया। आज थाने कचहरिया होने लगे हैं। " अजित पर भी बहुत भनकी थी पर अजित ने थाम लिया था। ऊपरी साहस बटोरकर कहा था, "तुम बेकार ही घबरा रही हो। सब ठीक हो जायगा। सब!" और फिर सोचता रहा था—कैसे होगा? समझ जवाब दे चुकी थी। साफ साफ कह भी दिया था मोठे बुआ से।

बोला था, 'समझ ले मैं गोल मार गया फिर? बाद मे पुलिसवाले नही ढढेंगे।'

'नहीं।"

'पर कैसे?' जरा तेज बौखलाहट मे सवाल किया था उसने। और मोठे ने उसे स्नेह से समझाया था, 'देख ये जो पुलिस डिपाटमेंट है, चाकू बाजी लाठीबाजी, जूतेबाजी है? ये सब मेरा डिपाटमेंट है। तू पढ अखबार, सिनमा देख, छोकरियों से बातें कर और वह जो तू कलमघिसी करता है ना? करता रह! मेरे को अपना डिपाटमेंट सम्हालने दे। समझा! तेरे को जरा बरोबर फिक्रि नही करना है कि मैं कैसे ठीक कर लूगा—समझा?'

'मगर यार "

"इसमे मगर, हाथी घोडे को लाने का नईं है सिरफ चुप मारके गवाहीवाले दिन गायब हो जाने का है। तेरा इतनाच् काम! क्या?" मोठे ने उसकी ओर देखा था।

अजित चुप हो रहा था, पर चिन्तित।

मोठे बडबडाया था 'किस स्साले कनो को तो मै जागू और देखूगा किसका बाडी का पाट स खोल के अगर किसके खीसे म नईं डाला तो मेरा नाम मोठे नही कुछ और दे देने का। "

अजित ने ज्यादा बहस नही की थी। मोठे की बडबडाहट यू ही नही थी। इस बडबडाहट ने कनो पर भी असर किया था। कैसे, किसने

खबर दी थी—नही मालूम, पर यह अचानक ही गली म देखा गया था। अजित बैठा था रेशमा के यहा। कई दिनो से बुलवा रही थी वह कभी सुरगा खबर देती, कभी वैष्णवी। अन्त म यह खबर छोटे बुआ लाया था। बोला था यार पण्डित। वो रेशमा भाभी है ना, भौत दुखी है, बिसके पास घडी दो घडी चलन का।'

'हा मुझे भी बुलवाया था पर क्या करू, ड्यूटी म एसा फस जाता हू कि मिल ही नही पाता।'

'आज किसी भी तरिया बिससे मीटिंग करन का।' छोटे कहे गया था 'जिसके बहिन बहनोई है ना, बिमके साथ ज्यादती कर रहे है। बिनको थोडा बहुत कहना होयेगा।'

'पर अपन क्या कह सकेंगे?'

मानें न मानें बिनकी मरजी पर अपुन कह तो सकते है।"

'ठीक है।" अजित ने मान लिया था। उसी योजना के अनुसार रेशमा के पास पहुचे थे। डिपो से लौटते ही छोटे को बुला लिया था। दोनो शभू नाई के मकान पर थे।

बाहर के बरामदे म ही पडी रहती थी रेशमा। आने-जानेवालो को टुकुर टुकुर देखा करती। गोरे चेहरे पर जैसे हमेशा के लिए फटे फटे बादलो जैसा बदरगपन उभर आया था। आखें धसी हुई। सिर के सुनहरे बालो का एक बडा हिस्सा घाव के कारण सिर्फ एक धब्बा बनकर रह गया था। इस धब्बे पर बाल नही थे। अब कभी उगेगे भी नही। अजित जानता है। बचपन म उसकी गर्दन के पास बिलकुल बालो को छूता हुआ एक फोडा हुआ था। ठीक हो गया मगर उतनी जगह पर बाल नहीं उगे।

बेचारी। वे बरामदे म जा पहुचे थे। रेशमा अब भी ठीक तरह उठ बैठ नही पाती। दीवार से सटी चारपाई पर तेलिया सिरहाना इस तरह टिका दिया जाता है कि वह लगभग घिसटती हुई उससे जा टिके। कुछ यही मुद्रा होती है। स्थिति म सिर्फ इतना ही बदलाव आता है।

अजित की आखो मे सहानुभूति छलक आयी थी। रेशमा ने बुदबुदाकर कहा था, आओ, आओ भइया। बठो।' उसने इधर उधर देखा था— बैठने को कुछ था नही। एक उदासी और बेबसी उसके चेहरे पर झलकने

लगी थी। गहरी सांस लेकर बड़बड़ायी थी, 'ऐसी गति न हुई होती तो तुम्हें यों खड़ा रहने देती?' फिर जोर से चीखपड़ी थी वह—"अरे। चुन्नी जीजा? अरी गुनमती? अरे रे कहां मर गये। अब क्या ऐसी कंगाली आयी इस घर में कि आने जानेवालों की खातिर चार पटे भी नहीं रह गये?"

न चुन्नीलाल का जवाब आया था, न गुनमती का। गुनमती रेशमा की बहिन चुन्नीलाल बहनोई। कभी रेशमा ने ही उन्हें अकेलेपन से मुक्ति के लिए बुला भेजा था पर अब रेशमा उनकी उपस्थिति के बावजूद कहीं ज्यादा अकेली हो गयी थी। पूरे घर सामान चीज वस्त पर चुन्नी गुनमती का कब्जा था। महल्ले के हर घर में अब उन्हींका अस्तित्व। रेशमा धीमे धीमे अपना अस्तित्व ही खोने लगी थी। अजित को लगता था कि कहीं न कहीं अस्तित्व के इस विलीनीकरण का दर्द भी रेशमा को साल रहा होगा।

छोटे बुला उस बीच पास के कमरे से एक टाट ढूंढ लाया था। कच्ची धरती पर बिछाते हुए बोला था 'तुम चिंता मत करो भाभी! हम लोग इधर बैठ जायेंगे! आ पंडित!' और अजित भी लपककर वहीं जा बैठा था।

रेशमा की तकलीफ ज्यादा बढ़ गयी थी। "हाय-हाय। मेरे फूटे करम। तुम लोगों को बैठने के लिए एक आसन भी नहीं दे पा रही हूं मैं अभागिन! पापिन!' वह रुआसी हो उठी।

अजित ने एकदम कहा था, उसकी चिंता छोड़ो भाभी, बस ये बतलाओ क्या बात है? किसलिए बुलाया था हम लोगों को?

'बात तो साफ है।' "रेशमा ने जवाब दिया था पूरबजनम की कोई पापिन हूं रंडापा तो झेल ही रही थी, अब अपाहिज भी हो गयी। एक गिलास पानी पिलानेवाला कोई नहीं है भइया। पेट जाई बहिन ही जब निरमोही हो गयी तो किसीसे क्या कहूंगी? बस, यही कहना चाहती हूं। चुन्नी और गुनमती को समझाओ। चार घड़ी मेरी तरफभी ध्यान दे दिया करें। अपना बस चलते कौन टट्टी फराखत तक से लाचारी झेलता है भइया?" वह रोने लगी थी, 'अब देखो। देखो ये कपड़े ही देख

तो वह कह के थक गयी। प्यार से डाट से, मनुहार करके पर दो चार दिन ठीक तरिया चलता है फिर वही। कल बहुत देर पशाब रोके रही भइया, गुनिया को सौ बेर बुलाया, पर नही सुना! ऊपर ही थी। मैं उसकी आवाज सुन रही थी यहा पडी पडी पर उसने नही सुना। आखिर को आखिर का यही गद्दे म छूट गयी। " एक हाथ से आख मूदकर वह भर्रायी आवाज मे बडबडाये गयी थी, "पाप करम। पूरबजनम मे किसीको बहुत तकलीफ दी होगी, अब भोगना पड रही है अग अग से पाप फूट निकले है। पूरे तीन घटे गीले गद्दे मे पडी रही मैं लाचार!" सहसा वह जार-जोर मे सिमकने लगी थी। अजित और छोटे बुआ सुनने भर से रुआसे हो गय। समझ मे नही आ रहा था कि क्या कहें? क्या करें? हडबडाये से बैठे रह, जैस माटी के दो लौदे धरती पर थोप दिये गये हा।

वह बिना कुछ कहे थोडी देर सिमकती रही थी सहसा छोटे बुआ ने कहा था "भाभी, जरा सबर करन का हम लोक चुनी से बात करेंगे। बिसको समझायगे आखिर तुम्हारी जिनगी है ही कितनी? " और बाल, तभी अजित ने उस घूरकर दखा, जसे कहा हो 'यह क्या कह रहा है? ऐसे किसीसे कहा जाता है क्या?"

वह एकदम मायूस हाकर चुप हो रहा। फुसफुसाया "कुछ बोल न तू?"

'हा हा' और अजित बोलने लगा था, फिकर मत करा भाभी। हम बात करेंगे आप बिलकुल चिन्ता मत करो। " बात खत्म करके अजित ने टहोका मारा था छोटे बुआ को, मतलब था— उठ पडो! वे एक दम से उठ गये थे।

रोना थामती हुई रेशमा एकदम बोली थी ता तुम जरूर जरूर बात करा भइया। उससे कह दो कि अब ज्यादा दिन नही जिऊगी। फिर मैं मरी ता सब बिनका ही है और कौन बैठा है मेरा?"

"हा हा, जरूर-जरूर।' बडबडाते हुए दाना उतर आय थे नीचे। गली की ओर बढे, तभी मन्दिर के पास खड गुनमती और चुनी सामने आ गये थे। चुनी ने हाथ जोडे थे। कहा 'राम-राम भइया। "

राम राम। 'दाना थम गय। छोटे ने एकदम बात शुरू कर दी थी चुन्नी यार, तुम्हारे बा' बिसका रेशमा भाभी का ख्याल रखना चाहिए ना ? बिचारी "

जानती हूं छोटे भइया !" जवाब गुनमती ने दिया—हाथ नचाती हुई कहने लगी 'तुमसे भी राड रोना रोयी होगी ?"

अजित ने बात काट दी कुछ रूखेपन से कहा,' राड रोना नहीं, अपना दुख कह रही थी। अपाहिज औरत है फिर तुम तो उसकी सगी छोटी बहिन हो गुनवती। आखिर सोचना चाहिए ना वह तो बेचारी बिना सहारे टट्टी पेशाब को भी नही जा सकती ! " गुनमती ने झुंझलाकर जवाब दिया ' अभी तुम गये थे। देखा ना—कहीं टट्टी-पेशाब मिली ? हम लोग उस न ले जाते हाेंगे तो कौन ले जाता होगा ? सोचनवाली बात है। वह क्या ऐसे ही झड़े पुंछे पड़ी है ?"

फिर भी " सहसा अजित को महसूस हुआ था कि कहीं उसका तर्क कमजोर हो गया है

' असल बात जे है अजित भइया !" इस बार संवाद चुन्नो ने सम्हाल लिया य रेशमा जिज्जी पड़ जाती हैं इकली अब गुनिया भी बाल बच्चोवाली है। कोई हर-हमेशा तो उसके हजूर में बैठी नहीं रहेगी। मैं रेलवई की नौकरी भी करती हूं। सुबरे जाना पड़ता है। मुझे भी रोटी पानी लेके जाना होता है। जे बेचारी अलस् भोर से जगती है। चूल्हे चौके में लगी, फिर बाल गोपाल जगे। उन्हें भी सम्हाला, इस सबमें से चार घड़ी का बखत निकला सो जिज्जी की सेवा करी ? अब तुम जानो आखिर को इस जमाने में सभी कुछ करना पड़ता है भइयाजी ? "

अब जिज्जी चाहें कि उसी के पास हर घड़ी बैठे रहें सो तो हो नहीं सकता !' बात गुनिया ने सम्हाल ली थी, वह तो मिलट मिलट पर अवाजें देती रहती है ओरी गुनिया, मुझे मुतास लगी ओरी गुनिया, पानी दे जा। अरे दौड़ियो चुन्नी, कमर दुख रही है अरे, मेरा चद्दरा बदलो अरे मेरा जे करो, वह करो "

"करने को कौन नाहीं है ?" चुन्नी पत्नी से ही उलझ गया था

"आखिर का यहा आय किस लिए है ? सवा करने के लिए ना ? पर सब काम तसल्ली से होता है । आखिर दुनियादारी घरबार बालबच्चे नौकरी सभी चीजें हैं चार मिनट का धीरज भी तो रखना चाहिए आदमी को। पर जिज्जी तो बस ! " सहसा वह रुआसा हो गया था, ' पर साब ! वह तो इत्ती उगली करती है कि सिरु भगवान जानते हैं, मैं गुनिया, छुनी रामजी सब उछल-उछल के गेंद की नाइ बन गये हैं "

अजित और छोटे एकदम स चुप हो चुके थे। निस्सन्देह गुनमती और चुनीलाल के भी अपन तक थे "फिर भी जितनी बन सके, खयाल रखो भाई। तुम्हारी तो वह अपनी ही है अपाहिजो की सेवा करने से तो यो भी पुण्य लगता है "

"हाजी, मा क्या हम नही जानत ? ' चुनी बोला था। वे चलने को हुए, तभी कन्नो सामने आ खडा हुआ था। दोनो चौक गय। कन्नो ने बडी विनम्रता से कहा था ' भाई नमस्ते लो ना साई ? राम राम्म। "

"नमस्ते !" अजित न एकदम बेरुखी दिखायी थी।

आपसे दो घडी बात करने का है अजित भाई जी ? " कन्नो न मिमियाकर निवेदन किया था।

दोनो ने एक-दूसरे को देखा। कहा, 'आज्ञार। ' फिर व बाजार की ओर चल पडे थे। कन्नो ने उन्ह रस्तोरा मे बिठाया था। बात शुरू कर दी थी, "भेंडा आप लोग झगरा काहे को बढाते है साईं ई ?

"झगडा ? कैसा झगडा ?"

'अबी सब शहर म माठे बुआ बोलता है कि कन्नो को आगू जान से हलाल करेंगे। ऐसा काह को भाई ? दक्खो। हम है व्यापारी आदमी। इदर सक्खर स आया है। हिन्दुस्तानी भाई को अपुना भाई माना है "

'तुम क्या पाकिस्तानी हो या ईरानी हो ?" चिढ गया था अजित। जब जब कोई सिन्धी पजाबी उसे या और लोगो को हिन्दुस्तानी कहता है, तब तब उसे क्रोध आता है। क्या य कम्बख्त हिन्दुस्तान से अलग हैं ? '

"वडी बात समझन का नी साइ ?" कन्नो वडबडाता गया था, ता हम्म बोला कि सक्खर म आया हू। हम लोक के साथ भेंडा भौत ज्यादती हुआ नी भाई ई? मुसलमान लोक कत्तल किया, हमारी मा भैण की इज्जित बिगारा अब आप लोक भी हमको प्यार नही देगा भाई तो इस दुनिया म कोन देगा भेंडा—जरा सोचने का नी ?"

अजित को यह समझते देर नही लगी थी कि मोठे बुआ की धमकी असर कर रही है। छोटे चुप था। अजित बोला, 'वह सब ठीक है साई। हम लोगा ने कौन सा अन्याय किया है तुम्हारे साथ? तुमको प्यार, इज्जत मौका क्या नही मिला है यहा? पर तुम इस तरह दलाली करोगे तो नही चलेगा। माठे मे झगडा तुमन बढाया है। मैं उसी वक्त कह रहा था कि चुप हा जाओ चुप हो जाओ, तुम माने नही। अब मोठे को तो तुम जानते ही हो? फिर वह भी बेचारा तुमसे यही तो कह रहा था कि मिन्नी को तग मत करो मगर तुम खैर "

'खैर उस सबका माटी म डालो नी साईं!" सहसा कन्नो न बात काट दी थी हम माठे भइया की इज्जित करता हू। भेंडा उसको अपुना वडा भाई मानता हू पन हमको इस तरिया धमकी काहे को देता है ?"

'क्यो तुमन भी तो उसकी रिपोट की है? कोट म केस करवाया है? अजित को जसे एकसाथ कई चिऊटियो ने काट लिया था। अब तुम चाहते हो कि वह चुप बठा रह? सा तो होगा नही। वह है दादा आदमी। उसका कुछ नही बिगडेगा। महीन दो महीने जेल काट आयेगा, पर कहता है कि तुम हिन्दुस्तान के किसी भी कोन मे रहो—पर वह तुम्हारी खबर जरूर लेगा।'

"हा!" छाटे ने एकदम स कहा था, "तुम चाहते हो कि तुम उसे फसाए रहो और वह फसन क बाद चुपचाप बैठ जाये। ऐसा नईं होने का साईं। जमाखातिर रखो, भाऊ तुमको पीटेंगा जरूर।'

कन्ना का चेहरा पिट गया। लगा जसे अभी रा पडेगा।

अजित न कहा, "अब यह तुम भी जानते हा साइ, कोई इस केस में उसका फासी ता हो नही जायगी? एक न एक दिन लौटेगा। उस दिन तुम्हारी खटिया खडी कर देगा।"

"अरे नही नही भाई ई। हम झगरा थोडे ही चाहता हू। हम तो हाथ जोडने को तैयार हू साई अब जो हो गया सो गया ! हमसे भी गलती हुआ पर मामला खतम करो नी ?"

"खत्म तो वही कर सकता है।" अजित न जवाब दिया था, 'हा, हम वह जरूर सकते है। पर तुम एक काम कर लो। पहले अदालत मे दरखास्त दे दो कि तुम्हारा उसका राजीनामा हो गया है। फिर बात सम्हल जायगा।"

"ठीक है पन अब तुमको सब देखना है साई ? कल को कुछ ऊचा नीचा हुआ नी तो हम गरीब आदमी मारा जाऊगा भाई। "

"और मिन्नी का क्या कर रह हा ?' अजित ने सवाल कर दिया था। लगा था कि कन्ना इस वक्त हर शत मानन तैयार है।

कन्ना ने जवाब दिया था 'वह मामला भी खतम ही समझला भाई ई। अब वह सब नही करूगा नी। हम उसके साथ माहब्बत स रहूगा।'

'पर वह ता तुम्ह छोडना चाहती है ? '

' उसको समझाता हू, पन आगू उसकी मरजी भाई ई। हमार भाग म अगर अल्लग होना ही लिखा है साई तो कौन राक सकता है भेडा ? वह ता बात खत्तम हो के रहगी नी ? आज नही तो कल्ल ? हे ना छोटे भईया अ ?"

हू।' छोट गुरगुराया।

कन्ना बिल अदा करके चला गया था। बार बार कहता हुआ कि वह केस खत्म करवा रहा है अजित मोठे का सम्हाल ले।

दो चार दिना म ही मोठे बुआ ने खबर दी थी—"उसने केस वापिस कर लिया है।" अजित का उससे कही ज्यादा सन्तोष हुआ था। मन ही मन एक खुशी भी—कैसा भय लग रहा था इस कल्पना स कि अदालत म जाकर गवाही देनी होगी ! बला टली !

नौकरी उसी गति स चल रही थी। महल्ला भी उसी गति से। महल्ले के सब पात्र भी। शामलाल फिर से धार चला गया था। मुरगो कभी उस और कभी भाग का कोसती रहती थी। हर रोज अखबार खबरें लाते। खबरो के अनुसार देश म निर्माण बढ रहा था। निर्माण के साथ साथ टैक्स

बढ रहे थे। टैक्सो के साथ साथ महगाई। जिन्दगी की रफ्तार कुछ ज्यादा तेज हो रही है— अजित महसूस करता

इसके साथ ही कई बातें महसूस होती। यह भी कि लोगो के बारे म अब उस तरह मोचने समझने की रफ्तार नही है, जैसी पहले थी। साचने के लिए दायरे भी बदलते चले जा रहे है दायरे फैल भी रहे है जिन्दगी गली से बहुत बाहर, ज्यादा ही बाहर जाकर शहर पार करन लगी है

वह खुद भी शहर बाहर ही जाता था मुरेना, अम्बाह, पोरसा, उसेदघाट। छोटे छोटे कस्बे, गाव, कस्बनुमा शहर

राशन नौकरिया, सरकारो और उनसे आगे एक तरह से जिन्दगियो शहरा के फैसले दूरदराज दिल्ली मे होने लगे है लगता है जैस इसान अचानक किसी तालाब स निकलकर समुदर मे जा गिरा है। आदि अत दीखना बन्द हो गया है। रियासतो के तालाब से जनतन्त्र का समुद्र।

है। शहर बदलता रहा है। माहौल, हवा, सोच, कपड़े सभी कुछ बदलते जा रहे हैं। ये बदलते रहने की प्रक्रिया भी जीवन के विकास की तरह अनत। कभी खत्म नही होती।

उन दिनो ये रहस्य मालूम ही नही हुआ था कि बदलाव सिर्फ अजित के आगन, गली और चौबारे तक आ पहुचने मे नही है बल्कि ये बदलाव और-और तरह और-और स्तरो पर सबके साथ हो रहा है इन्सानो से लेकर जड पत्थरो तक।

चुनमुन का ब्याह कर दिया था सुरगो ने। लडका खोजकर। वही लडका लाया था जो चुनमुन को अग्रेजी पढाया करता था। चुनमुन गली से विदा हो गयी थी। दान दहेज भी ठीक ही दिया था शामलाल ने। चुनमुन का पढानेवाला लडका मास्टर, अब चुनमुन से छोटी गोविन्दी को पढाने लगा था। गोविन्दी का बदन भी खिलने लगा था। अजित ने ध्यान ही नही दिया था। पर ध्यान तब आया, जब वैष्णवी को मैनपुरीवाली से बतियाते सुना। दोनो औरतो ने सिन्धी टोपनदास के यहा से साझे मे एक दिन का गोबर खरीद लिया था। ढोते-ढाते जब थक गयी थी, तब वही बैठकर बतियाने लगी थी। अजित नलवाला को लाया था नल ठीक करने। उन दोनो को ध्यान ही न था कि अजित सुन पा रहा था

वैष्णवी बोली थी—' वह बेचारा महाराजपुरा का लडका क्या फसा है, बस फसकर रह गया है। चुनमुन के ब्याह मे डेढ हजार लगाये इस मरी सुरगो की लतरिया-पतरिया को पाला और अब सुरगो ने उस पर नया जाल डाल दिया है। गोविन्दी जो तैयार हो गयी है।"

'अब तो बाई इस गली मे रहने का मन नही करता। तुम्हारी सौं, सीतला बाई, जी ऊब गया। पोस्ट मास्टर साहब का तबादला हो जाये तो राम जाने कैसी सासत मिले [illegible] इस गली मे—कौन सोचता था।" मैं[illegible] रही

'ठीक बात है ' [illegible] की [illegible]

थी—सहसा वह भारी स्वर [illegible]

जे है मैनपरीवाली, [illegible]

घाय [illegible] पैदा [illegible]

घार शहर मे जा बैठा है । सुनते हैं कोई करली है

"करली है ? सुना तो मैंने भी है पर लगता नही है बहना !" मैनपुरीवाली एकदम फुसफुसा उठी थी—"उसके हाड पजर तो निकल रहे, नयी औरत का क्या करेगा ?"

"अरे सो मत पूछो। मद की जात। नीयत एसी होती है कि बस्स। पातर दीखनी चाहिए, कुत्ते की नाई झपट पडेंगे सुना नही है तूने—कतल-खून हो जाते हैं ऐसी बातो पर। पर मरद मरद ठहरा ! अन्टी म चार पैसे हा तो कूदे नही—ऐसा कैसे हा सकता है ? कहते है, स्यामलाल उसी की अगिया मे धरा रहता हे। हमन तो सुनी।'

"सुनी तो हमने भी पर '

"पर क्या, पक्की ही है अब तुम जानो मैनपुरीवाली, ऐसी बातें काई छिपती हैं ? खुद सुरगो ही रोती फिरती है। पाडे जी से वह रही थी कि जिस तरिया हाये, स्यामलाल का तबादला करवादें यहा अब तुम जानो वहना, बिचारे पाडेजी अपनी ही दालरोटी मे लगे हैं। हम कहा फुरसत ? '

"सही बात है। बिलकुल सही बात है। अब वह जमाना नही रहा !" मैनपुरीवाली न जवाब दिया—'आदमी बिचारा सुबरे से लेके स्याम तलक धिन धिन करके नाचता है तब बालबच्चे पलत हैं '

"वही तो पाडेजी ने तो साफ-साफ कह दिया कि उनके बूते का कुच्छ नही। फिर जे है ऊचा मामला बडे अफसर लोग ही कर सकत हैं।" सीतला बाई वैष्णवी का स्वर।

"ठीक किया। ठीक किया। बात सफा हानी चाहिए। उसम ब्यौहार ठीक नही रहता कि लल्ला पुच्चो की बातें करदो फिर कुछ न हा पाय। है कि नही ?'

'सो ई तो !"

और अजित नल सुधारते मजदूरा पर नजर गडाय, सुनता रहा था बहुत-सी जानकारिया

श्यामलाल ने कोई करली है। जब करली है ता एक बडी राशि उसी

पर खच कर देता होगा। यहा सुरगो और लडकिया परशान हैं अजित साचता एक पल को दुख होता पर समझ मे न आता कि वह क्या कर सकता है? कोई कुछ नही कर सकता। सब अपने-अपन लिए कर रह हैं। यही अपने लिए कर पाना चौवार की नियति।

सबन ता यही किया था। सुरगो न अगली बार शामलाल के आन पर पाटोर की रजिस्ट्री अपने नाम करवाली थी। महल्ले म पचायत हुई थी उस दिन। सुरगो ने पति पर आरोप लगाय थे और शामलाल न तुनककर पूछा था— 'ठीक है। अगर तू यही कहती है ता समझ ले कि ठीक है। अब बोल, क्या चाहती तू?"

सुरगो बोली थी— कुच्छ नही। अब मुझे ता ये कयाए पार लगानी हैं। इनकी गारन्टी चाहिए सा ये पच परमेसुर मौजूद हैं।"

सबने साचा था, सुरगो की बात सही। शामलाल न गारटी के बतार मकान टासफर करवा दिया था उसके नाम। धार लौट गया।

सुरगा कुछ आश्वस्त भाव से जिन्दगी चलान लगी थी

यही कुछ निश्चितता बटोरी थी सुनहरी न। ठेकेदार न उस किसी दूर गाव म मास्टरी पर रखवा दिया था। लाग हैरत करते— मिडिल पास वह भी खराब नम्बर पर सुनहरी चिपक गयी ऐजुकेशन डिपाटमट मे—कैसे हुआ?"

बतलानवाल हसत। कहते, यह जमाना नया आगया ह। अब हुनर— हुनर नही हैं, इलम—इलम नही। अब तो बस, पौवा ह। जिसका हागा, वह आसमान पर लटक जायगा! देखा नही, जिस गगाराम को प्राइमरी म छह साल लग गये थे, अब ऐजुकेशन डिपाटमेट का मिनिस्टर है। सब जनततर की लीला!

एक दिन केशर मा ने पूछा था— एक बात बता अजित?'

'क्या?"

'य जनतन्त्र कैसे सीखते हैं?"

हसा था अजित, 'तुम भी खूब हा मा। भला जनतन्त्र भी कोई मन्त्र या तन्त्र है क्या?"

"जो भी है बेटा। तू सीख ले।"

हक्का-बक्का होकर अजित केशर मा का चेहरा देखने लगा था। वे सहजता से बोली थी। एकदम गंभीर। अजित ने एकदम से हंसकर सवाल किया था—"क्या सीख लू ?"

"यही जनतंतर। काम आयेगा। अब नये जमाने में कहते हैं कि इसी तंतर से सब चलता है। पूरा वशीकरण।"

और देर तक हंसता रहा था अजित। बड़ी कठिनाई से उन्हें समझा सका था कि जनतंत्र कोई तंत्र या मंत्र नहीं है। कहा था—'यह एक तरीका है मा, जिससे सरकार चलता है और कहते है सबसे बढ़िया तरीका यही है। इससे जनता ही अपनी सरकार चुनती है और देश को चलाती है।'

मगर केशर मा सन्तुष्ट नहीं हुई थी। कुछ हैरत से बोली थी—'यह कैसी सरकार चलती है ? तू कहता है कि इस तंत्र से सबसे अच्छी सरकार चलती है, पर सब तरफ तो चोरी, बेईमानी, झूठ दीखने लगा है ?"

"शुरू शुरू में ऐसा ही होगा मा पर जब सब लोग समझ जायेंगे ना कि भाई ये जनतंत्र है। अपना देश है, अपनी सरकार है। अगर हमी ये सब करेंगे तो देश न डूब जायगा। फिर सब ठीक हो जायेगा। पर '

"पता नहीं कब ठीक होगा।' उनके स्वर में निराशा थी— 'अभी तो सब बिगड़ता ही जा रहा है "

"नेहरूजी कहते हैं कि धीरे धीरे होगा अब कोई एक ग्वालियर रियासत तो है नहीं कि चलाली। ऐसी सैंकड़ो रियासतों से मिलकर ये देश बना है—बहुत बड़ा। सब खराब पड़ा था। अब धीरे धीरे सब सुधरेगा "

और ज्यादा ही दुखी होती जाती वह। कहती "पता नहीं तेरे नेहरू आजाद क्या कर रहे हैं हमें तो ये दीख रहा है कि राशन मिलना भी कठिन हो गया है। इससे तो अंगरेजी राज अच्छा था। कम से कम वे भूखा तो नहीं मरने दे रहे थे लोगों को। '

अजित जवाब नहीं दे पाता। लगता कि जो कुछ दिया है, उसमें भी

बहुत दम नहीं है। कुछ भी तो ऐसा नहीं हो रहा है, जिससे भविष्य की किसी आश्वस्ति का अहसास होता हो ? नौकरियां मिलती हैं, पर या तो पौवा चाहिए या फिर रकम यह दोनों न हो तो आदमी और सर्टीफिकेट दोनों व्यर्थ है। छत सुधरवाने के लिए सीमेंट चाहिए थी। दो रुपया ब्लैक में मिली। केशर मां ने माथा पीट लिया था। कहा था "अब मट्टी पर भी चोरी करने लगे लोग। कैसा जमाना ?"

और बाद में मिलनी ही बन्द हो गयी। इसके विपरीत अजित ने यह भी देखा कि जिन दिनों सीमेंट नहीं मिल रही थी, सुनहरी ने ठेकेदार से कहकर दस बोरियां मंगवा ली। सारे घर की मरम्मत करवायी। दूसरों की क्या कहे अजित। खुद भी तो सिफारिश से ही काम मिला था उसे ? मिल भी गया तो बाध्य हो गया कि चोरी कर न करने पर घर बैठना होगा। सब गड़बड़ !

और अजित रिकार्ड चोरी करने लगा है। सोचता है अगर यही व्यवस्था रहनी है तो नौकरी इसी तरह चलेगी। सब समझाते है—"अति सर्वत्र वर्जयेत। किसी दिन काम छूट जायगा !"

अजित का जवाब होता है— 'छूट जाय स्साला। मेरे पास इतना पैसा जमा है कि दे लेकर दूसरा ले लूंगा !"

अजित निश्चिन्त है। सोचता है कि एक टाइपराइटर के पैसे जुट जायें। वे पैसे जोड़कर टाइपराइटर खरीद लिया जायगा, फिर कहानियों की प्रतियां हाथ से नहीं करनी होंगी। वक्त भी बहुत खर्च होता है, मेहनत भी बहुत। एक ही बार चार प्रतियां निकालेगा। चार अखबारों को भेजेगा। कहीं न कहीं तो छपेगी। शेष तीन जगहों पर नाही लिख दिया करेगा। ऐसे ही राह खोजनी होगी टाइपराइटर जरूरी !

मगर टाइपराइटर तक नौबत नहीं पहुंची थी। उसीसे पहले छूट गयी थी नौकरी।

सारे डिपो में हल्ला हो गया था। अजित की गाड़ी चैक हो गयी। फ्लाइंग स्क्वाड ने पकड़ी। बयालीस विदाउट टिकिट सवारियां भर रखी थीं। डिपो लौटते ही अजित को जोशी साहब ने बुलवा लिया था शीट

पर ट्रैफिक इस्पक्टर न रिमाक दिया था। जोशी साहब भनभनाये बैठे थे। आशा के अनुसार अजित के कमर मे प्रवेश करते ही उन्होने शीट उसके मुह पर फेंक मारी थी "लो, अपनी करतूत देखो। "

"जी, मैं जानता हू।' अजित बोला था, "इसीलिए इसीलिए मैं रेजिग्नेशन साथ ले आया हू साब।" कहकर अजित ने त्यागपत्र टेबल पर सरका दिया था।

जोशीजी जैसे जबडे कसकर रह गये थे। चुपचाप त्यागपत्र पढा था। बोले थे, "तुम्ह तो डिसमिस कर दिया जाना चाहिए। पर उम्र और कैरियर देखते हुए डिपो मैनजर से कहूगा कि यह मजूर कर लिया जाय। "

अजित सिर झुकाये खडा रहा था।

"नाव गेट आऊट। " वह एकदम से चीखे थे। अजित बाहर निकल आया, बहुत निलज्ज भाव से। बाहर कई कडक्टर-डायवर मौजूद थे। हर आख मे उत्सुकता। रहमान मिया ने आगे बढकर सवाल किया था, 'क्या रहा पडतजी?'

"कुछ नही। वह मुझे निकालें, इसके पहले ही मैंने रिजाइन कर दिया।" अजित निश्चिन्त भाव से आगे-आगे चलता हुआ बाला था।

वे सब पीछे। कुछ फुसफुसाहटें हुई थी। बदरी ने पास आकर कहा था "इसीलिए कह रहा था भइया कि सब्जा मे "

'अरे यार। सब्जी म नमक का ख्याल तो वह रखे, जिसे जिन्दगी भर बावर्ची रहना हो। हुह! हम सलामत रहे हजार बरस नौकरी हजार हमार लिए। "

"वाह वाह। क्या बुलन्दखयाली है।" कोई कुढकर बडबडाया था।

रहमान मिया सचमुच चिन्तित थ। पूछा था 'अब क्या करोग?'

'वही महाराजवाडे पर रोज सुबेरे कबूतर उडायेंगे।" अजित अजब-से द्वद के बावजूद कह जा रहा था। इस तरह जैस उसे परवाह नही है। पर अपने आपकी तरह वह भी समझ रहा था, वे सब उसके प्रति

दुखी हैं। जसे तैस वह निकल सका था उस माहौल से।

इस उखडाव को वहा जाकर मिटाया जाये? उसन सोचा था और अर्से बाद एक बार फिर मिन्नी याद हो आयी थी। उसीके यहा जाना होगा। वहा थोडी दर गप्पे मारकर भूल सकेगा पर कनो?

वह हो, तब भी ठीक। न हो तब भी ठीक। अजित चल पडा था।

यह एक और मिन्नी थी। बदली हुई। एकदम अलग। एक तीसरी मिन्नी। अजित अचरज से उसका चेहरा देख रहा था। न बिन्दी न मगलसूत्र! घबराकर पूछा था, 'क्या हुआ?"

"मैं कुवारी हो गयी!" वह हसी थी।

अजित अपनी उलझन भूल गया। कुछ पलो तक चुपचाप बैठा रहा। कमरा भी काफी कुछ बदला हुआ। फर्नीचर वही, सामान भी ज्यो का त्यो, पर एक परिवतन सारे माहौल म लग रहा है पता नही क्यो? शायद मिन्नी के बदलाव के कारण।

वह उसके सामने बैठी मुसकरा रही थी। कहा, "इत्तीसी बात नही समझा? मैं दूसरी बार कुवारी हो गयी हू।"

'यानी "

'हा, कनो स छुट्टी ले ली मैंन। अब वह पटना म ही रहता है। वही घरवाली और बच्चा को भी ले गया है।"

'अब क्या करेगी तू?"

'क्या? अब क्या नही है करने को? सब तो है। शादी कर सकती हू। फिर से घर बसाना चाहू तो बसा सकती हू न चाहू तो मस्ती है। कुछ भी न करू।" लगा था कि वह बहुत खुश है निश्चिन्त। खुले आकाश की तरह मुक्त।

'चल अच्छा हुआ!' अजित न पैर फैला लिय थ साफ पर। बीडी निकाली। बोला 'आज से मैं भी आजाद हो गया हू तेरी ही तरह कुवारा!" फिर वह हसा था। अनायास ही उसे महसूस हुआ जैस हसने

की कोशिश करके भी हस नही पाया है कुछ कुछ रोया है शायद।

उसका मुह खुला रह गया 'क्या मतलब ?"

अजित ने बीडी सुलगाकर कहा, "मतलब यह कि मैं नौकरी छोड आया हू।"

"नौकरी छोड आया ? क्यो ?" वह लगभग चीखी।

"क्यो का जवाब यह कि बस, मन हुआ—छोड आया।"

"मजाक मत कर अजित !"

"तुझे विश्वास नही हो रहा ?"

'हा कैसे होगा ? क्या मैं जानती नही, अच्छा खासा काम और फिर वहा वह साहब जोशीजी उनका भी तो सहारा है तब "

'उन्होने सहारा दिया था काम करा लिए मैंने किया। पर काम को सहेजे रखने के लिए मैंने कुछ नही किया। चोरी करना जरूरी था। मैंने की, पर सोचा कि जब चोरी करना ही मेरा काम है तब कसकर क्या न कर डाल। मैंने कर डाली। नतीजा यह कि त्यागपत्र देना पडा है "

वह गभीर हो चुकी थी। काफी कुछ समझ चुकी थी। एक पल के लिए खामोशी बिखरी रही, फिर मिन्नी न कहा "अब क्या करेगा तू ?"

"सोचूगा यो भी मुझे इस काम मे लिखने पढने का बिलकुल भी समय नही मिलता था। " अजित पूर्ववत लापरवाह था।

'तेरी मा तो बहुत बौखलायेंगी अजित।" मिन्नी की आवाज मे सहानुभूति घुल गयी थी।

'हा '

वे फिर चुप हो गये थे। मिन्नी ने उसे चाय पिलायी थी। अजित जानना चाहता था कि कन्नो ने किस तरह पीछा छोडा पर पूछ नही सका था। बार बार वह न चाहकर भी काम के बारे मे सोचने लगता। क्या होगा अब ? काश ! उसने बदरीसिंह का कहना माना होता। खर्च की भी आदत पड गयी है। उसे निबाहना भी कठिन होगा। सबसे बडी बात होगी—केशर मा का क्लेश ! मालूम होते ही सारा घर सिर पर उठा लेंगी। अजित को इतना कोसेंगी कि वह पागल हो उठेगा।

एक बार फिर से जिन्दगी बिना खूटे की हो गयी है। किसी थान से छूटी गाय की तरह अजित सारे सारे दिन शहर में भटका करता कभी डाक्टर जैसिंह के यहां और कभी बिसेसरदयाल के यहां।

मिन्नी के यहां ज्यादा देर नहीं रुक सका था। जाने क्या चाहकर भी नहीं रुका। लगता था कि हर माहौल में अनफिट हो गया है माहौल नहीं, शायद अजित खुद।

नौकरी इतना क्यों साल रही है? वह अपने से ही पूछता। लगता कि जवाब नहीं है। सिवा इसके कि अजित के भीतर कोई जगह देर तक भरी रहने के बाद अचानक खाली हो गयी है न सिर्फ वही जगह खाली हो गयी है बल्कि उसने अपने साथ साथ दूसरे बहुत से खाने भी खाली कर दिये हैं। अजित के अपने खाने खाने, जिनमें उसने टाइपराइटर का भविष्य जुटा लिया था। खाने जिनमें वह खुश, मुसकराती और आशीष देती केशर मा को जुटा लिया था खाने—जिन पर विश्वस्त अजित कम से कम एक चिन्ता से मुक्त था कि कोई उसे सुझाव नहीं दे सकता। उसके भविष्य को लेकर सहानुभूति व्यक्त नहीं कर सकता। उसे दया का पात्र बनना कभी अच्छा नहीं लगा।

उसकी उदासी में दर्द घुल जाया करता पर एक सन्तोष भी। यह न होता तो शायद अजित यही कुछ करता रहता। इसीमें उलझा हुआ। और उसका वह इरादा अजित ने कहीं पढ रखा है। जीवन के जितने रंगों से लेखक गुजरता है—समृद्ध होता जाता है। अगर अजित कण्डक्टर न रहा होता तो कैसे पता पडता कि एक कण्डक्टर ड्रायवर और बसों से जुडी हुई जिन्दगियां कैसी होती हैं, कैसे कटती हैं?

अजित ने कुछ खोया है पर काफी कुछ पाया भी तो है? वह अपने भीतर सन्तोष जुटा लेता। इस सन्तोष के बावजूद वह उस कडवाहट से मुक्ति नहीं पा सकता था जो अनायास ही उसके जीवन में पहले से कहीं ज्यादा तीव्रता के साथ आ घुली थी।

जोशी साहब न सब कुछ कह सुनाया या केशर मा को। सुनकर माथा पीट लिया था उन्होन। जोशीजी बाले थे, मैं कुछ भी नही कर सकता या वहिनजी। कम्बख्त को इतना समझाया-बुझाया था, पर उसन कभी कुछ नही सुना।"

"अपना दाम खोटा तो परखनवाले का क्या दोष, भइया!" केशर मा रुआसी होकर बडबडाती रही थी— सब भाग का खेल है। तकदीर ही अच्छी होती तो ये कपूत क्यो पैदा होता? इसके पिता क्यो मरते? पर सब लिखा बदा `। *आपन जितना कुछ किया है, उसे याद कर रखूगी।'*

जोशी साहब भी चार बातें कहकर चले गय थे। केशर मा ने अजित से बात करना बन्द कर दिया था अजित सार सार दिन शहर मे भटक-कर घर लौटता। घर लौटकर खुद रसोई मे जाता। जैसा जो कुछ मिलता, उसे गले मे ठूसकर कहानी लिखने लगता या लिखी कहानी की प्रति बनाकर पोस्ट करने जाता। कुछ सरकारी अखवार निकलत थे शहर मे, उनमे एक-दो कहानिया छपी थी। कुछ पैसे भी मिले, पर बेमतलब!

महल्ले मे भी एक ना दिनो तक अजित का काम छूटने पर प्रतिक्रिया हुई थी। अजित न उन्हे हर परत स महसूस किया था। लगा था कि अनुभव है। उसे लगता था कि वैष्णवजी, सुरगा, चन्दनसहाय आदि सब ऊपरी सहानुभूति दर्शाते है। चार घडी केशर मा के पास बैठकर उनकी हा मे हा करते और अजित की बिगडी आदतो पर अफसोस व्यक्त करते। कभी अजित स बात होती तो कहते तुम्हारी डुकरिया का तो बोलते रहने की आदत पड गयी है भइया। फिर सच बात तो यह है कि बूढा आदमी जरा ज्यादा ही चिढन बौखलाने लगता है। बदन म दम नही रह जाता ना? छोटी छोटी बातें भी बर्दाश्त नही होती। पर सब समय सुधरते ही ठीक हो जायेगा।'

अजित का मन होता उन्हे दुत्कार। कहे "तुम लोग दोमुहे हो। ' पर चुप रह जाया करता। आखिर यह सब करने से लाभ भी क्या होगा? सिवा इसके कि वह अपन आपको ज्यादा ही चर्चा का विषय बना ले। उसन महसूस किया था कि चर्चा का विषय बनन से कही ज्यादा व अजित की बातें करके या तो समय काटते हैं, या फिर एक अजब-सा हिंस्र

आ ाद महसूस करते है। ऐसा क्या होता है भला? अजित और उसकी मा ने ता इन लोगा का न कभी अहित चाहा है न अहित किया। तब भला ये अजित और उसकी मा का लेकर ऐसी छिछली बातें क्या करते है? मन क्षोभ स भरने लगता।

पर ये करते है और उनकी बातें गवाही देती हैं अजित न खूब देखा सुना है। उस दिन ता बहुत साफ साफ सुना था, जिस दिन रात ग्यारह बजे लौटा। मरन्यिा र न्नि थे। अजित देर स आता है इसलिए रवाजा खुला छोड रखता था चन्दनसहाय। अजित जब भी लौटता, दरवाजा बन्द करता। उस दिन भी यही कुछ करना था। अजित न सामान्यत देर स लौटने का नियम बनाया। इस तरह केशर मा के व्यंग्य बाणा से मुक्ति मिलती है। घर से बाहर रहकर जितना वक्त कटता है वह भूला रहता है कि उसकी कुछ जरूरतें हैं जिम्मेदारियां हैं दुख हैं, बेबसी है।

य बातें कर रहे थे वैष्णवी बैठी थी चन्दनसहाय के यहा। इसी तरह आसपडोस के घरा म जा बैठती है। पाडे—उसका पति—अक्सर बहुत रात गये काम से लौटता है। अजित सीढियो पर ठिठका रह गया था। अपना नाम सुना था उसने

वैष्णवी बोल रही थी ' अब सच बात तो ये है भइया', कि अजित नहीं बिगडा इनके पूरबजनम के पाप निकले हैं। ये डुकरिया किसी को गिनती नहीं थी पण्डितजी महल्ले मे किसी से बात नहीं करते थे। अब उन्हीकी औलाद का ऐसे घूमना पड रहा है सब करमदड!'

सच कहती हो भौजी।" चन्दनसहाय ने हाक लगायी थी, 'अब तुम देखो जब से इस घर म आया हू। सुबह शाम काई बखत हो केशर मा की आवाज पर गुलाम की नाई खडा रहता हू और श्रेय कुछ भी नहीं। उलटे दा दिन किराया लेट हा जाय तो छह बार पुछवाते हैं—भइया किराया देने की मरजी है कि नहीं? "

वही तो! जित्ता जित्ता गरीब का दिल दुखाया है उत्ता उत्ता दीख रहा है। अब तुम जानो मैं तो बहुत खुस हू। भगवान देर करता है, अधेर नहीं करता। "

किसी अखबार मे। शहर मे सब लिखने-पढनेवाले जानते हैं कि अजित लिख सकता है। न सिर्फ लिख सकता है, अच्छा लिखता है। पर अखबार नही हैं। जो है व व्यर्थ से। होकर भी नही के बराबर। उनकी हालत यह है कि बीस रुपये का विज्ञापन भी दिन मे पा जायें तो गनीमत समझते हैं। वे भला अजित को क्या दे सकेंगे ?

अजित उन सबम लिखता है। मुफ्त। उसके एक दो साथी भी लिखते हैं। वक्त कट जाता है। अखबार वाले के घर से कभी कभी चाय भी मिलती है। अजित कम्पोजीटरो के बीच यहा वहा की बातें करके वक्त निकालता है। वक्त कट रहा है। पर इस तरह वक्त कटना किस कदर अर्थहीन है अजित जानता है। उस सबसे ज्यादा जानता है, अपनी असमर्थता। वह किसी भी बी० ए० पास से कही ज्यादा योग्य है, किन्तु हर योग्यता कागज के एक पुरजे की मोहताज होती है। वह पुरजा नही जुटाया है अजित न। जो जुटाया है, वह कीमती होते हुए भी नौकरी पाने के लिए व्यर्थ।

कलम बनर्जी कहता है तेरा सारा भविष्य सिर्फ लिखना है। सिर्फ जूझना। तू भागवान है।"

अजित फीकी हसी म हसता है। भीतर ही भीतर शब्द उगल लेता है ' भागवान।

कौन है भागवान ? अजित के सामने नये पुराने भगवानो की एक कतार लगी हुई है। यह कतार बढती जा रही है बढती जा रही है

भागवान कौन हुआ ? कितने कितने चेहरे उभरने लगते हैं उसके सामने ? कनो सिन्धी ? सुनहरी ? सहोद्रा ?

या फिर इस चौवारे के लोग ? कितने ही। बहुत स। जिसे अखबार मे वह आकर बैठता है उसके सम्पादक को बारहखडी नही आती, पर वह सम्पादक हैं। एक पुराने रियासती सरदार के सेवक। रोज शाम उनके घर जाकर पैर दबाते हैं। उन्होंने प्रेस लगवा दिया है, अखबार निकलवा दिया है। इस अखबार क जरिए सम्पादकजी मिनिस्टरो स मिलते हैं, छुटपुट ठेके लेते हैं, सरदार साहब की जमीन जायदाद भी बचा

रह है कितने भागवान ?

डाक्टर जैसिह भी भागवान हैं। प्रायवट कालिज खुलवा लिया है। खु' प्रिंसिपल बन गये ह। यूनिवर्सिटी स एफीलिटेट भी करवा रहे है उस। एक दिन वह रह थे 'यह काम हा जाय तो तुम नागा के साथ जुट कर बाड आफ स्टडीज मे कुछ काम करें। तुम्हारी किताबें कास म लगवा दूगा चार पैस तुम भी बनाना, मैं भी !" उनकी राय है कि हर काम एक ग्रुप की शक्ल मे हाना चाहिय। कहा था, "सघे शक्ति कलौयुगे। "या भी कहत है कि अकेला चना भाड नही फोडता। देश समाज सगठन स आगे बढत हैं। शायद बढ भी रह ह।"

कलम बनर्जी और अजित चुपचाप सुनते रह थे। लगा था कि समझ की बात कर रह ह। यह समझ की बातें करत करत उन्होंने पूर प्रात की साहित्य सभा पर अध्यक्षीय कब्जा कर लिया है। साहित्य सभा को बड़े अनुदान मिलते हैं। सरकार से लेकर बिरलाजी तक के। इन अनुदाना से साहित्य और साहित्यकारो का भला होना है। और डाक्टर जैसिह एक कालिज के प्रिंसिपल भी ह साहित्य की समझ भी ह। जब ये दा बातें हो ता साहित्यकार क्या नही हुए ? कुल मिलाकर भागवान आदमी। अजित या कलम बनर्जी का रचनाए छपती हैं तो डाक्टर साहब पीठ थपथपाते हैं। कहते हैं, 'तरक्की कर रहे हा किय जाआ !"

सब भागवान।

अजित छपन लगा है। कुछ अखिल भारतीय अखबारो म भी रचनाए छप गयी है। तरक्की ता कर रहा है, पर भागवान नही है। यह साबित। इसलिए भी कि उस सबको करना असभव जो भागवान लोग जानत हैं, करत है, कर रह हैं कर सकते हैं।

इसलिए अजित का काम की तलाश है थोडा बहुत भागवान हा ले तो चल जायेगा। अन्यथा बडा कठिन।

भटकन जारी है। निरतर जारी हे जितनी ऊब और उखडा हट होती है, उतना ही सन्तोष भी। एक अजित ही ता नही है जो भटक रहा हो ? सब भटक रहे हैं।

एक दिन कलम बनर्जी बोला था, इसी तरह कुछ राह मिलेगी

यार। आखिर हमे जिस चीज की तलाश है, वह बिना कुछ दिय तो नही मिल सकती ? सरस्वती हमारी भूख ले रही है "

हस पड़ा था अजित। यही तो हो सकता है जवाब यही दिया था।

बात आयी-गयी हो गयी थी। इसके बावजूद अजित को विश्वास है, एक न एक दिन वह राह खोज लेगा। कितना कितना तो लिखता है, कितना कितना भोगता है कितना-कितना देखता है शायद यही है अजित की पूजी ! लगता है जैसे यह जो देखना-भोगना है—इसी पूजी की शक्ति पर वह लिख पाता है। यह न होता ता भला कैसे वह कहानी लिखता ?

दूर कही अधेर से अचानक रोशनी की एक किरण खोज लाता है अजित। यह किरण, जैसे मरते-मरत जिला देती है। यही किरण है, जिसकी ताकत पर वह वे दिन भी काट लेता है जब चाय पीने के लिए पैसे नही होते। दिन बिना चाय के गुजर जाता है !

कितन दिन नही हैं जा गुजर गये ? सावकर राहत मिलती है। केशर मा कहती हैं, ' इतना गुजर गयी, थोडी सी बाकी रही है, सा भी गुजर जायगी ! "

"वह भी तो दिन गुजार रही हैं ?

मिन्नी भी। बहुत दिना बाद फिर मुलाकात हो गयी थी उससे। अजित हमेशा की तरह महाराजबाडे पर आधीरात गुजारकर लौट रहा था। दौलतगज म वह अचानक ही मिल गयी। कोई अजनबी साथ था ' अर अजित ? तू—इतनी रात कहा स आ रहा है ?"

चौंक गया था अजित। मिन्नी को देखा, फिर उस युवक को घूरा। वह भी उस घूर रहा था। मिन्नी परिचय कराने लगी थी उसका। कहा था, ' ये हैं वन्दना केमिकल्स के प्राप्रायटर हरीमोहन और हरीमाहन जी, य—अजित शर्मा।"

बडी देर मूड खराब रहा था अजित का। फिर जैसे वह चिढकर अपने को ही धिक्कारने लगा था। किसलिए माथापच्ची करता है उस लेकर। भाड मे जाये ! अब उसके यहा कभी जायगा भी नही! कभी-कभी मास्साब के घर के सामने से निकलते हुए वह भी याद हो आती, जया मौसी भी। और बहुत कुछ याद आ जाया करता। मास्साब,कुन्दन, भाडे बुआ वगैरा सभी मिल जाते। भाडे बुआ जानवरी अस्पताल मे कपाउडर हो गया था। काफी कुछ बदला हुआ। मास्साब वाले थे, "मिनी तो हमारी तरफ से मर गयी। इन लडकियो ने तो मुझे कही का नही रखा बेटा !

जो हुआ था कह डाले, " अब उनकी उपयोगिता नही रही ना ! इसलिए उनका जीना-मरना क्या मतलब रखता है ?'

'दसिया जगह उसका नाम आता है तो शर्म से सिर झुका लेता हू।" मास्साब बुदबुदाय गये थे, 'ऐसी औलाद होते ही '

ज्यादा कुछ नही सुन सका था अजित। मन हुआ था कि ढेर खरी खोटी सुनाये पर व्यर्थ। अजित का क्या लेना देना !

भाडे बुआ भी यदा कदा जिक्र छेड बैठता। कहता, "भगवान ने सब दिया है यार ! ये जहर की पोटलिया न दी होती जिंदगी स्वर्ग होती !'

कौन जहर की पोटलिया ? अजित समझ रहा था कि वह किन्हें कह रहा है, इसके बावजूद पूछा। तय कर लिया था कि अच्छी तरह सुना देगा ! और भाडे बुआ ने कहा था, ' यही मिन्नी और जया मौसी ! सारे समाज मे थू थू करवा दी। उसने मुह कुछ इस तरह सिकोड लिया था जैसे आसपास गहरी बदबू आ रही हो।

अजित चाहकर भी रुक नही सका। कडवाहट के साथ पूछा, तेरा तो मुह बिगड रहा है भाडे बुआ ? "

"बिगडने वाली बात है प्यारे। ' बडी दर्दनाक आवाज मे वह बोला, देख नही रहा, मिन्नी किस कदर बदनाम हो चुकी है। सारे आफिस मे, यहा तक कि स्साले जमादार लोग तक मुझे इस तरिया देखते हैं जैसे मैं भडवा हू। '

अच्छा। अजित ने जैसे खुश होकर जवाब दिया, "भडवा।

यह तो खूब अन्दाजा किया है तेरे बारे मे ?"

वह कुछ समझा नही। थोडी देर उसी तरह मिन्नी के चरित्र पर लेकर दुख बिखेरता रहा, फिर चला गया। जाते जाते बडबडाता गया था, "अब सहन नही हो रहा है। समझ मे नही आता कि उसकी गरदन घोट दू क्या करू ?"

अजित स्तब्ध खडा रह गया था मैनपुरी वाली का बेटा महेश याद हो आया था। अपनी छोटी बहिन को प्रायमरी म भरती करवाने के इरादे स गया था मिन्नी के यहा वहा जो कुछ देखा था अजित मोठे, छोटे सबको सुनाया था कहा था, 'जो भी हो भइया ! मिन्नी हमेशा सबकी मदद ही करती रही है लोग कुछ भी कहे—पर दिल की भली लडकी है !"

मोठे बुआ ने उपेक्षा से जवाब दिया था "रहने दे ब ! बजरबट्टू स्साला ! तेरी बहिन का दाखिला दिला दिया होगा तो उसकी रामायण गा रहा है, वरना गालिया बकता। "

'नही नही, वह बात नही है दादा। बात य है कि जिस बखत मैं पहुचा, वहा भाडे बुआ बैठा था मिन्नी का भइया !"

सब उत्सुक हो गये थे। भाडे बुआ ? छोटे ने उलझन पेश की थी, 'पर वह तो मिन्नी से बात भी नही करता। वह किसलिए पहुच गया उसके घर ! कहता है, बहुत बदनामी हुई है मिन्नी की वजह से।'

हरामी है स्साला। वहा तो ऐसे बोल रहा था जैसे मिन्नी देवी हो। साक्षात भगवती। पालनहार !" महेश ने कहा था। फिर वह सब कह सुनाया जो देखा था।

महेश पहुचा तो मिन्नी ने कहा था, 'बैठो दो मिनिट।' फिर वह भाडे बुआ से बातें करने लगी थी, जो पहले से ही वहा बैठा हुआ था। उसे बडे भइया कहती थी वह खुश थी।

पर भाडे बुआ गभीर। कुछ सकोचग्रस्त भी। कुर्सी मे घुसा हुआ

हथेलिया मसल रहा था।

'इतन सुबेरे सुबेरे तुम आये बडे भइया, तो मैं बहुत घबरा गयी थी " मिन्नी ने कहा था, "लगा था कि कही पापा पम्मी मे से किसीकी तबीयत तो खराब नही। तुमन बतलाया तब जान म जान आयी " वह खुश थी। महेश एक ओर चुप दानो को देखता हुआ।

"हा, अब बालो ! तुम्हारे लिए चाय बनाऊ या शबत ?" वह उठी थी। महेश से पूछा, 'तेरे लिए ?"

"मैं तो चाय हो पियूगा मिन्नी दीदी !"

"ठीक है "

' मैं कुछ नहीं पियूगा मिन्नी। बस, चलूगा "भाडे बुआ कुर्सी पर से उठन की मुद्रा मे बोला था, "तुम्हारे पास एक जरूरी काम से आया था पर "

क्या बात है ?"

"खास बात नही है " भाडे बुआ ने होठ भींचते हुए कहा था, "वह जो वेटरनरी म मैंन दरखास्त दी थी, वहा आठ सौ से ज्यादा दरखास्त और हैं। खन्ना साहब कहते हैं कि काम तो हो जायेगा पर " वह बालते बोलते थम गया था।

' पर क्या ? " मिन्नी गभीर थी।

"आजकल हर डिपाटमट की हालत खराब है मिन्नी !" भाडे बुआ न गहरी तकलीफ के साथ कहा था, 'पता नही इस देश का क्या होगा।' फिर वह चुप हो गया था।

खन्ना साहब क्या चाहते हैं ?" मिन्नी ने किया।

"कुल पास्ट कितनी हैं ?" मिन्नी ने उसे रोका था।

"पाच !"

"हूँ " वह एक पल चुप रही थी, फिर बोली 'तुम बैठो बड भइया। मैं आती हू।" कहकर वह भीतर चली गयी। दो मिनिट बाद लौटी। पाच सौ रुपये हाथ म थे। भाडे बुआ की तरफ बढाती हुई बोली थी, "दे दो। कह देना कि काम जरूर होना चाहिए। "

'पर तू तू क्यो मैं—मैं करूगा कही स बन्दोबस्त !" भाडे बुआ रुपय ले चुका था, पर कहने के लिए जैस कह रहा था।

मिन्नी हसी थी, "मुझमे और तुममे कोई फरक है क्या बड भइया ?"

एक गहरी सास लेकर भाडे बुआ उसकी ओर आदर से देखता रहा था, फिर मिन्नी ने कहा, "मैं चाय "

'नही नही, मैं तो चलूगा। सुबह घर पर ही मिल जाते हैं खन्ना साहब," वह तेजी स बाहर निकल गया।

मिन्नी किचिन मे समा गयी थी।

और वही भाडे बुआ, उसी मिन्नी को ल नेकर डीगें हाक रहा था। अपन को अपमानित महसूस कर रहा था।

अजित कुढता रह गया था। मगर यह नयी बात नही। सभी जगह, कुछ इसी तज मे तो हो रहा है। बिलकुल इसी तरह । सुनहरी तो काम कर ही रही है, पर जमनाप्रसाद को भी काम स चिपकवा दिया है। एक दिन बोला था,"बडा मस्ती का काम है अजित भइया। सुप्रिन्ट के दफ्तर के आगू बैठा-बैठा चिल्मम लगाता रहता हू। मिलन-जुलनवाले रुपय-दो रुपय दे ही जात है। चल रहा है "

'और सुनहरी जीजी ?"

'उसका क्या ? मजे म है !" जमनाप्रसाद निलज्ज भाव स बतलाने लगा था, 'ठेकेदार ने यारी की तो निभाई भी है। मैंन तो कह दिया सुनहरी स। देख कुतिया। अब उस निबाह, जिसने तुझे भी निबाह !"

लिया है, मुझे भी। उसी न तो काम दिलाया है मुने। चुगी सुप्रिंडट क दफ्तर म फिट कर दिया।'

अजित का मन खराब हो गया। चलना चाहता था, पर जमनाप्रसाद न बालना शुरू कर दिया— मैं ता जिसमे पहले ही कहता था कि तू मेरे नस पत्ते के आडे मतो आय। मरा तरा काई झगडा नही। वह किनारा कर गयी, मैं भी ठीक स हू

हा।'' अजित यान्त्रिक ढग से कह गया था अब ता सुना है कि जीजी के कुछ हानेवाला भी है?'

जमनाप्रसाद हसा था "सब उसकी माया है।' कहकर चल पडा। देर तक स्तब्ध खडा देखता रहा था जमना को। अजीब बात है। वह सहज है। लगा था कि यही रहस्य है सच का सच जानकर सहज भाव से ग्रहण कर लेने ना एक अजब सा सुख। यह सुख, दुख की इस तह पर पहुचकर ही मिलता है शायद।

कुछ ऐसा ही सुख किसी और तरीके स रेशमा ने खोजा। सुबह मालूम हुआ कि रेशमा जा रही है

कहा?' अजित जल्दी से स्लीपर पहनकर गली मे पहुच गया था। देखा कि रेशमा को उसके बहन-बहनोई—गुनमती और चुन्नी—सहारा देकर तागे मे लिटा रहे हैं। महल्ला भर एकत्र। रशमा छलछलायी पर खुश निगाहो से विदा ले रही थी

'कहा चली?' यह पूछन की जरूरत नही पडी थी। महल्लेवालो की बातचीत से ही पता चल गया था। सुरगो बडबडा रही थी—"अच्छा हुआ जी। यहा य गुनमती और चुन्नी सडा सडा के मार लेते, अब कम स-कम भाई के घर प्यार ता मिल जायेगा। चैन की नीद मरेगी।'

तागा रवाना हो गया। मोड पर सहसा तागा रुक गया था क्या हुआ? सब आगे बढ गय थे। अजित भी।

देखा कि रशमा की आखें शमू नाई के मकान को पहले सिरे स लेकर दूसरे सिरे तक देख रही है उसने सकेत से गुनमती को पास बुलाकर कहा था, 'देख बहिना, इसकी ऊपरवाली मजिल मे पानी आता है एकाध बोरा सीमेंट लगवा देना।'

वतमान। अजित पास के कमरे मे घुसा सुने गया था। सुरगो बोली थी, "आज पाटौरें वदलवाने को आदमी लेने गया है। एक बोरा सिमेंट का भी रख गया है अब बेचारा हारा थका आयेगा तो उसके लिए रोटी बनानी है। घी नही था। एक कटोरी दे दो तो लड़के को सासत मिलेगी।"

केशर मा न भुनभुनाते हुए एक कटोरी घी दिया था। सुरगो से पूछा भी था, "अरी तू नौ दुर्गा कर रही है?"

"हा, बुआ।" उसने लजाते हुए जवाब दिया था, "भगमानजी को मानती नही थी। मेरा तो विसवास ही उठ गया था, पर तुम जानो! जे दुरजोधनसिंह क्या आया है, हमने तो भगमान जी पा लिये। इसीकी खातिर व्रत रखे है!" वह चली गयी थी।

"राडें!" केशर मां भुनभुनायी थी, "अपना खसम भगवान नही दीखता और इस पराये मे ईसुर दीख रहे हैं। कैसा जमाना आया!"

यह भी सहज। अपनी तरह, अपना गणित, अपना हिसाब। सुरगो अपनी बेटिया भी किनारे लगा रही है पाटौर ठीक करवाने की इच्छा भी पूरी करली बस, एक बेटे की चाह शेष।

सब कहते हैं कि ये दुरयोधन सह खूब फला है उसे। क्या मालूम इसके पैर पड़े से सुरगो बेटा भी पा जाये? दामाद तो पा ही चुकी।

सुबह सबेरे ही आ पहुचा था छोटे बुआ। अजित चकित—जागते ही सवाल किया था, "क्या बात है छोटे?"

छोटे एक बुझी हसी मे हसा था, "यार ट्रासफर हो गया!"

"कहा?" चौंककर अजित ने पूछा।

"शिवपुरी।"

सन्तोष हुआ था अजित को। बहुत दूर नही है। फिर कह दिया था, 'चल, पास ही है।"

मगर छोटे उदास था, "पास तो है पर एक चक्कर है"

"क्या?"

'सोचता हूं, अब घर का क्या होगा ? मोठे भाऊ को तो तू जानता ही है। बिसस घर तो क्या सम्हलेगा हालत और भिगड जायेंगी। '

अजित को भी लगा था सच है। मोठे बुआ आय दिन कोई न कोई हुल्लड करेगा। घर पर होगी सिफ महिलायें।

'वैसे काका कहते है बिसको गाव भेज देंगे। खेती पाती सम्हा लेगा।''

''वह जायेगा ?''

''जायेंगा नही तो। बिसको जानाच पडेंगा। फिर बिसका ब्याह भी कर रहे है। वहिणी आन का पाछू जरा सम्हल जायगा।''

''हा हो सकता है।'' अजित ने कुछ न समझ पाकर जवाब दिया था।

छोटे चला गया था। अजित उदास हो रहा। महल्ले से दोनो ही साथी चले गये पर जाते नही तो करते भी क्या ? यह बिछडना भी ता सच है। धीरे धीरे सब सहज हो जायेगा। उसने अपने को धैय बधा लिया था। शाम की बस से मोठे चला गया। अजित उस बस अड्डे तक छोडकर आया। उसके विदा होते समय जाने क्यो अजित को लगा था कि रुलायी आ रही है ? फिर उसने खुद को थाम लिया था। कठोरता से। अपने को ही डपटते हुए, ''अब क्या बचा है अजित ? '

दूर तक खिडकी से झाकता रहा था मोठे। तब तक जब तक कि बस मोड पर पहुचकर ओझल न हो गयी।

और एक दिन मालूम हुआ था कि मोठे भी चला गया। गाव। खेती पाती सम्हालेगा। अजित का अकेलापन गली से बाहर भी बढ गया था। उस दिन किस कदर ऊबा रहा था अजित ?

दो दिन के लिए अजित के बहन बहनोई आ पहुचे थे। घर मे खासी चहल पहल रही थी। केशर मा ने अपना दुख रोया तो अजित के बहनोई बोले थे 'मैं बडे भइया से बात करूगा। हो सकता है कि पुलिस लाइन म अजित को कोई काम मिल जाय ?''

और अगले ही दिन उन्होने अजित को बुलाकर सूचना भी दी थी—'तुम्हें कल ही पुलिस लाइन जाकर आर० आई० साहब से मिलना है,

वहा आफिस मे टाइपिस्ट की एक जगह खाली है। हो सका तो एस० पी० साहब से कहकर दिलवा देंगे। "

अजित ने सुना। चुप रहा। केशर मा न चीखकर कहा था 'सुन लिया ना तन? अब जायेगा कि नही?"

'जाऊगा।" कहकर अजित बाहर निकल आया था। कितना अप मान महसूस होता है जब इस तरह बोलती है मा? पर सहना होगा। अजित की इस समय यही स्थिति।

असल मे गलतिया उसकी अपनी भी तो कम नही हैं। कभी पढने को महत्त्व दिया ही नही। हमेशा लिखने की बात सोचता रहा। अगले दिन आर० आई० साहब के सामने जा खडा हुआ था। बहनोई के सगे बडे भाई। काम मिल गया था। अजित ने कुछ राहत महसूस की थी। मा ने भी। बहिन बहनोई लौट गये।

चार छह दिन मे ही आफिस का काफी कुछ काम देख-समझ लिया था। माहौल भी। जुटकर काम करता। कुछ दिनो के भीतर ही एस० पी० साहब ने बुलवा लिया था। बोले थे 'कल से मेरा निजी टाइपिस्ट छुट्टी पर जा रहा है। तुम करोगे काम?'

'जी।"

अजित ज्यादा सतर्क हो गया था। काम के लिए एक केबिन मिला। ढेर स्टेशनरी। खाली वक्त म अपनी कहानिया टाइप करता। बडा सन्तोष। लग रहा था कि बहुत कुछ सभल गया है। केशर मा भी खुश खुश बोलती। अजित न दो महीने के भीतर ही कुछ कपडे भी सिलवा लिय थे। काम ठीक चल रहा था।

सात

"बटनिया का घरवाला आया है लखनऊ से।" केशर मा ने सूचना दी थी—"तुझे पूछ रहा था।"

"मुझे?" अजित को अचरज हुआ था। दो तीन बार आ-जा चुका है। अजित से सिफ राम राम हुई है, इसमे आगे कुछ नही। याद हा आयी थी वह चिट्ठी। फाटोवाला चक्कर। जरूर कुछ है। अजित के भीतर एक खलबली फैल गयी थी। बटनिया फोटो क्यो ले गयी? बेकार ही अजित को चक्कर मे उलझा दिया। अब बटनिया का घरवाला आकर अजित को पूछ रहा है। मालूम नही क्या घपला हुआ। हल्की सी घबराहट भी हुई थी। कही ऐसा न हो कि बटनिया ने कुछ बकवास की हो, वह जान बूझकर कुछ नही करती—करना ही नही जानती, मगर मगर भोलेपन मे—बक सकती है।

भोलापन या मूखता? बौखलाया हुआ अजित कमर मे आ लेटा था। केशर मा ने हिदायत दी थी, 'कही जाना मत। वह मिलने आयेगा।"

अजित बाला नही। मन हा रहा था कि भाग खडा हो। दो चार दिन के लिए शहर से ही कही चला जाय। पर यह भी उलझन। बटनिया का घरवाला यहा क्या चक्कर चला जायगा—कल्पना नही।

सोच-सोचकर पसीने आन लगे थे अजित को। लगता था कि जरूर कुछ ऊलजलूल हुआ होगा। बटनिया ने कही कह ही न दिया हो उससे? उसने किस तरह अजित से सम्बन्धो का दोष साफ किया था? प्राचित करके। कम्बख्त बटनिया! वह भुनभुनाता हुआ उस पल को कोसता रहा था, जिस पल बटनिया के चक्कर मे उलझा!

पर अब कुछ नही हो सकता। बटनिया के घरवाले, यानी गोविन्द

काटता हुआ। एक गहरी सास लेता है कहता है बडा गजब हो गया होता अजित बाबू। बैनवती इस कदर सीधी हो सकती है बेवकूफी की हद तक आज के जमाने मे विश्वास नही होता पर यह सचाई है।'

'जी हा, बहुत सीधी और भली है वह।" अजित बुदबुदा उठा। जान क्यो बटनिया के जिक्र के साथ उसके भीतर कुछ काप उठा है शात जल को हचमचाता हुआ क्या है—वह नही जानता।

गोविन्दसहाय कहे गया "जी हा यहा म गयी तो फोटो सहजेकर बक्से मे रख रखा था। मेरी बहिन शान्ती बहुत तेज मिजाज है बहुत गरम दिमाग और झगडालू पता नही कैसे फोटो उसकी नजर मे आ गया। उसने पूछा होगा और बस हो गया महाभारत। '

अजित स्तब्ध, उससे कही ज्यादा सहमा और डरा हुआ सुनता जा रहा है बटनिया ने क्या कहा होगा—कल्पना करना कठिन नही। शायद सब कुछ बोल गयी होगी

गोविन्दसहाय बुदबुदाय जा रहा है आवाज कुछ भीग गयी है। पता नही अपने दद स या बटनिया के प्रति सहानुभूति से

उस दिन जो कुछ बटनिया को लेकर सुना था उस पर सहसा विश्वास नही कर सका था अजित उसस भी ज्यादा अविश्वास हो रहा था गोविन्दसहाय को देखकर यह आदमी भी क्या कम अजीब है ? बटनिया अब उसकी पत्नी है। यह सब जान समझ लेने के बावजूद वह अजित से बात करने आया है ? और इस तरह कर रहा है जैसे उसे अजित स तनिक शिकवा-गिला नही है ?

नही नही। अविश्वसनीय, बल्कि असभव !

मगर यह सच था ! एक ऐसा सच जिसे अजित कभी नही भूल सकेगा। उसी तरह जिस तरह जीवन मे आया कोई बहुत बडा हादसा नही भूला जा सकता ! गोविन्दसहाय होगा या नही—आज अजित नही जानता। अगर होगा तो हो सकता है कि वह आखें खो चुका हो बूढा

जजर हो चुका हो

उस समय भी तो कैसा लगता था गोविन्दसहाय ? अजित उसे देखता रहा था। वह हसकर पूछ बैठा था, 'क्या देख रहे हो भाई ?''

'जी, कुछ नही। ऐसे ही '' अजित सिटपिटा गया था।

उसने कहा था ''जानता हू, तुम क्या सोच रहे होगे ? '' बातें करते करते कब वह आप से तुम पर उतर आया था—न अजित को याद, न शायद उसे। कहा था 'तुम सोच रहे होगे कि वैनवती के साथ चलते वक्त मैं या तो जेठ की तरह लगता होऊगा या फिर बाप की तरह। यही ना ?''

''नहीं-नही '' एकदम घबराकर अजित बोला था, ''जी नही आप गलत समझ रहे है गोविन्दसहाय जी भला ऐसी बात भी सोच सकता है कोई ?''

गोविन्दसहाय की आवाज ज्यादा भारी हो गयी थी। किसी गोल डब्बे से आती हुई। घरघराहट और खराश से भरी हुई। कहा, ''सच यही है। अभी नही तो पहले कभी सोचा होगा या फिर बाद में सोचेंगे पर यह सच है। मैं खुद इस सच को खूब जानता हू।' उसने गर्दन झुका ली थी।

पर उस सबसे कही ज्यादा चौंकानेवाला वह सच, जो वटनिया को लेकर गोविन्दसहाय ने सुनाया था। सब कुछ कहकर बोला था—''बतलाइए तो ऐसा कभी होता है ? इतना बचपना ?''

अजित का मन हुआ था, कह दे—''आप इसे उसकी ईमानदारी क्यों नही कहते गोविन्दसहाय जी ? वह तो पूजा करने लायक औरत है।'' पर ऐसा न करके बोला था—'मैं इसे बचपना न कहकर उसकी एमी ऊचाई मानूगा गोविन्दजी, जिसे छूना तो दूर, सोच पाना भी आज की दुनिया में मुमकिन नही है।''

'मैं भी यही कुछ मानता हू और इसीलिए उस दिन शान्ती से कह दिया सचाई यह है कि फोटो गलती से आ गया और अगर आ गया है तो इस बात का तूल देने की जरूरत क्या है ?' ''

अजित चुप। बदन में खून की रफ्तार कम होने लगी थी यही कुछ

लगा था सुनते-सुनते।

गोविन्दसहाय ने कहा था— 'पर मेरी बहिन भी गजब की कलहा और झगडालू है साहब। एकदम स बोली थी—'ठीक है। आ गया है ता अभी वापस करगाओ। ' " उसने सिर चका लिया था—"उसी वखत इसीलिए आपको फाटो रजिस्ट्री से भेजना पडा था।"

वह चुप हो रहा था

अजित भी चुप। इस चुप के बावजूद एक खास तरह की सनसनी और कालाहल महसूस करता हुआ इस कालाहल म गाविन्दसहाय की सुनायी कहानी जैस घटत देख रहा था

शान्ती का असल नाम कुछ और पर बचपन म राती कम थी, इसलिए शान्ती कहन लगे सब। 'सुन्दरी' स शान्ती।

और तज तराक दिमाग के साथ साथ बकवासी स्वभाव न उस जिद्दी बनाया। जिदें पूरी हाती रही तो वह उस तरह आदी हा गयी। अब सुन्दरी यानी शान्ती घर पर पूरी तरह हावी।

उम्र मे छोटी होते हुए भी एक अजीव सा भय खाते है सब। बटनिया भी खान लगी थी

तूफान की तरह घर के किसी भी काम, मामले और आदमी को हच-मचा डालती। यही शान्ती का स्वभाव। आदत भी।

बटनिया विदा के बाद पहुची ता शान्ती न फुरसत पाते ही पूछा था—"क्या-क्या लायी हो भाभी ?'

बटनिया न सामान बतला दिया था साडी, ब्लाउज, रुपय, अगूठी सब।

"देखू ता ?" कहकर वह बटनिया का बक्सा खीचकर देखने लगी थी। सारा सामान बाहर निकाल डाला। कपडो के भीतर साडी की तह म रखा था अजित का फोटो। साडी खोली तो एकदम से उछलकर बाहर आ गिरा। चौंककर शान्ती ने फोटो उठालिया। चेहरे पर नासमझी के भाव

थे बुदबुदायी थी "यह कौन है ?" उसकी पतली पतली अगुलियो म अजित का फोटा दबा हुआ था। आखो मे अचरज से कही ज्यादा कुरेदन।

बटनिया ने कह दिया था, 'हमारे मकानमालिक थे ना वह ता रहे नही। यह उनके लडके का फोटो है। जमीदार थे बडे अब भी खूब खाते-पीत लाग हैं '

" तो तुम्हार नाते रिस्तेवाला नही है कोई ना ?" शान्ती का आखे सहसा अथपूण हा उठी थी। कालिज की तेज लडकी। माहौल ने हर स्थिति का एक अथ लगाना सिखा दिया था।

ना ना। बटनिया न साफ साफ कह दिया था—"नाते रिश्त का हो कैसे सकता ह ? यह ह व्राम्हण, हम कायथ। ' वह एकदम सहज थी। न कभी ऐसी निगाहा के अथ पढे, न ही कभी पैदा हुए।

हू अ। ता यह वात है। " शान्तो का चहरा तमतमा आया था, 'तुम्हारा आशिक है ? क्या ? '

बटनिया ने आशिक का अथ नही समझा। नासमझ ढग से ननद का चेहरा देखन लगी।

शान्ती अब असली उद्देश्य छाडकर उस फोटो का लिए उठ पडी थी—आखें नचाती हुई कह रही थी— 'भाई मानती हागी ? क्या ? '

'न न ' बटनिया सकपकाकर बोली थी।

तव ?' शान्ती न इठलाकर सवाल किया था—"तब कौनसा मुहबोला रिश्ता पाला है—एँ ? '

कोई रिश्ता नही बस, खब पहचान है हमारी।' बटनिया न और ज्यादा सहज हात हुए उत्तर दे दिया था।

कल्पना ही नही थी कि शान्ता अथ के पार कल्पनाआ म जा पहुची है। कल्पनाए भी गहरी और वीभत्स किस्म की बडबडायी थी, ' वही तो मैं सोच रही थी उन्तीस तीस साल की लडकी—एक तरह स औरत ही होती है पूरी बिना कही मुह मार कस बठी रही ? ता, यार पाल रखे थे तुमन ? क्यो ? '

अब बटनिया समझी अर र, उसकी वात का क्या मतलब निकाला

जा रहा है। घबराकर बोली थी—"नही नही, बहिन जी वह बात नही है। छि छि ऐसा तो सोचना भी पाप है "

"तब ये फोटो किसलिए लायी हो? आरती उतारने?" एकदम से तेज हो गयी थी शान्ती की आवाज।

सुनकर बटनिया की जेठानी जेठ और सास भी दौडे आये गोविन्द सहाय बैठक मे पिता स बातें कर रहा था। वह भी लपका हुआ दरवाजे पर आ खडा हुआ। बटनिया ने घूघट खीच लिया था शान्ती चीख रही थी—"हाय हाय। कैसा अनरथ है? मै तो पहले ही कहती थी कि तीस साल की औरत होगी तो ऐसे कोई दूध की धुली तो होगी नही, पर मेरी मानता ही कौन है? अब भोगो।' बडबडाते, चीखते हुए शान्ती न अजित का फोटो एकदम से जेठ जेठानी के मुह पर फक मारा था, "यारो के फोटो साथ रखके घूम रही है हमारी भौजीरानी।"

वे सब स्तब्ध।

सबने एक दूसरे को देखा। अजित का फोटो उठाया। जेठ बोले—"यह तो शायद चन्दनसहायजी के मकानमालिक का बेटा है क्या नाम है इसका?'

नाम ठीक तरह किसी का याद नही था, बस शादी मे देखा गया था अजित को।

"ये तो एक फोटो है दादा? किस किस फोटो के नाम ढूढते फिरोगे? पता नही कैसी कुलच्छनी औरत है कम्बख्त।'

शान्ती! एकदम स चीख पडे थे बडे भाई। बटनिया के जेठ। गुस्से से भरकर कहा था—'जरा दिमाग और जबान का रिश्ता कायम करना सीख। बेकार ही मामले को बढा रही है? "

'ठीक है। मेरे पास तो न दिमाग है, न तमीज की जबान। " शान्ती न अगुलिया नचाकर जवाब द दिया था—'अब तुम लोग ही पूछ लो। खुद मुह से कह रही है सब फिर भी अगर अकल घास चरन गयी है तो बात अलग " वह तेजी से बाहर निकल गयी थी आगन म।

यह सब सुन जानकर गोविन्दसहाय के होश उड गये थे। थूक के घूट निगलता कभी बडे भाई की अगुली म थमा अजित का फोटो और कभी

घूघट मे लिपटी बटनिया को देखता एकदम बुत।

बडे भाई को भी विश्वास नही हो पा रहा था। फिर यह तो बिलकुल ही अविश्वसनीय कि बटनिया—वैनवती खुद मुह से अपनी चरित्रहीनता का ढिंढोरा पीट सकती है ? नही नही, काई गलतफहमी हुई है। यही सोचा था। यही सोचा जा सकता था।

जेठानी आगे बढी थी, पर जेठ ने रोक दिया था। कहा—'तुम जरा बाहर आओ।"

इस सारे काड से वह भी हडबडा गयी थी। आगन म शान्ति अब भी चीखपुकार मचा रही थी बडे भाई ने उस ओर ध्यान नही दिया था सकेत से गोविन्दसहाय को बुलाकर कहा था—"जरा पूछ तो उससे, कैसी बचपन की बात कर रही है ?"

'जी।" कहकर गोविन्दसहाय अपने कमरे म चला आया। दरवाजा बन्द करके पत्नी के पास जा बैठा था एक पल चुपचुप उसका घूघट म बन्द चेहरा देखता रहा था जैसे विश्वास करने की चेष्टा कर रहा हो कि अभी-अभी जो सुना, कहा गया है—सच है। उसने कापते हाथो वैनवती का घूघट उतारा था। आंसुओ से चेहरा नहाया हुआ था उसका। नाक मे सुडके खीच रही थी बार बार चेहरे पर ललामी ज्यादा ही बढ गयी थी पति का सामने देखकर एकदम रो पडी—खूब हिलक हिलक कर

बुरी तरह हडबडा गया था गोविन्दसहाय। उसकी समझ मे नही आ रहा था—क्या कहे, क्या करे ? किस तरह बात शुरू करे ? ऐसी बात किसी औरत से—भले ही वह पत्नी क्या न हो ? पूछना सहज है क्या ?

उस सबसे पहले बटनिया का चुप होनी जरूरी। य आसू गवाही दे रहे हैं कि बात को बिना समझे तूल दिया गया है। बटनिया सरल है, यह पहली भेंट म ही समझ चुका था गोविन्दसहाय। एसे सरलता स जवाब दिया होगा कि शान्ती अर्थ का कुअर्थ ले बैठी। धीरज बधाते हुए कहा था—'चुप कर वैनवती। चुप हो जा। "

जैसे-तैसे वह चुप हुई। गोविन्दसहाय ने कुछ सकोच क साथ हिचकती आवाज म सवाल किया था—" य य क्या मामला है ? शान्ती

किसलिए ? फोटो ? "

"अजित अजित नाम है उसका।' बटनिया नाक पोंछ रही थी, हल्के-हल्के सिकसकती भी जाती, "हमार—हमार मकान मालिक का लडका। बहुत अच्छा है पर, पर वैसी बात नही है। कोई पाप वाप की बात नही ! बहिनजी तो ऐसे ही " फिर वह रोने लगी।

गोविन्दसहाय उसे सात्वना दे रहा था बीच बीच मे पूछता भी जाता—"तो तो फोटो कैसे आ गया तेरे पास ' उसने दिया ?"

"नही।" उसने हिचकी ली।

"तब ?"

"मैं—मैं ही ले आयी " बटनिया का जवाब।

गोविन्दसहाय परेशान हुआ, "क्यो ?"

'वह बस शुरू से हमारे साथ रहता रहा था ना ? बहुत अच्छा लडका है।"

फिर घोटाला। पर इतना स्पष्ट कि बटनिया के मन मे न कुछ था, न किसी के भीतर कुछ होगा—यह जानने का सामर्थ्य। गोविन्दसहाय हक्काबक्का हुआ सा बैठा रहा था। चुप।

वह धीमे धीमे सहज होती गयी थी। गोविन्दसहाय सोचता रहा था कि मामले को किस तरह सभाला जाये थोडी देर बाद बोला था—"अब तू मेरा कहा मानेगी ?"

"हू—हा। और किसकी बात मानूगी ? तुम—तुम मेरे वो हो !" उसने गरदन झुकाकर कहा था।

"ठीक है। तब तुमसे कोई कुछ पूछे तो कहना कि मकानमालिकन के यहा तुम लोगो का घरोबा है। एकदम घर जसा गलती से कपडो मे चला आया होगा। और कपडे उनके घर मे लगे थे " गोविन्दसहाय बुदबुदाया था।

"पर पर यह तो मैं लेके आयी हू। " बटनिया ने सहजता से कहा था—'और किसी का फोटू कोई रक्खे तो क्या गलती होती है ?"

"हा, होती है "

"क्यो ?"

झल्लाकर गोविन्दसहाय बोला था— 'जैसा कह रहा हूँ, इस वखत सिर्फ वैसा कर बाकी बात बाद मे करेंगे।"

बटनिया न स्वीकार म सिर हिला दिया था। गोविन्दसहाय ने उसे फिर फिर सारा जवाब समझाया, बाहर आ गया था। बड़ी पटुता के साथ अभिनय भी किया। एकदम भाई के सामने जा बैठा। मुह बनाकर कहा था— "हद हो गयी। इस शान्ती के दिमाग मे भी पता नही कितनी खिचड़ी पकती रहती है। बात न बात, हगामा बरपा कर दिया।"

"क्या मामला था ?' भाई सन्तुष्ट हो गय थ। गोविन्दसहाय ने जवाब दिया था— 'अजी, गलती मे सामान म वह चला आया। शान्ती न पूछा तो तो उसस कह दिया कि कौन है ? यह भी बतलाया कि उसका इसका कोई महबोला रिश्ता भी नही है। सिवाय इसके कि मकान मालिक का लडका है मगर शान्ती तो बात का बतगड बनान की आदी है बकार ही सुबह सुबरे दिमाग खराब कर दिया।

'पगली कही की। अभी देखता हू" कहकर तज चाल म बडा भाई महिलाओ के बीच जा पहुचा था। शान्ती का दसियो बातें सुनादी थी। कहा था, 'जरा बात करने से पहले पूरी तरह समझ तो लिया कर। औरतें इस तरह लापरवाह नही रहा करती कि तेरे हाथ फोटो लग जाये और फिर मुह स कह कि जिसकी फोटो है, वह उसका प्रेमी है। बकवास। गलती स आगया है फोटो।"

शान्ती फिर भी जिद्दी। अपन खयाल स अडिग। कहा था, ठीक है। *गलती से आगया है तो भेजा वापस। हमसे उसस क्या मतलब ?'*

यह बात अलग है।" कहकर मामला खत्म कर दिया गया था, पर गोविन्दसहाय के दिमाग मे मामला शुरू हो गया। उसे सुलझाये बिना सन्तोष नही। इस पत्नी का सभाल पाना तो बहुत कठिन होगा ? वह चिंतित हो उठा था। इतनी सीधी औरत कहा ठग न जायगी या ठगवा न देगी क्या सोचा जा सकता है ? तय किया था कि सारी बात जानने के बाद उससे सब कुछ पूछेगा, फिर समझायेगा

यही किया था। रात सोते वक्त बात शुरू की थी। पूछा था सुबह तूने बडा पागलपन किया। अगर उस तरह, उस लडके के फोटो का

तक्र वात न बढाती तो क्या हर्ज था ?'

'पर पर मैं झूठ क्यो बोलती ?' बटनिया न तर्क की थी।

गोविन्दसहाय को गुस्सा भी आया था रहम भी। मुसकराकर सवाल किया था, "अच्छा सच बता बैनवती तू उस लडके का फोटो क्यो ले आयी ?"

लजा गयी थी बटनिया एक पल की खामोशी के बाद बुदबुदायी थी, "सच कहू ?"

'हा, कह।" डरते डरते गोविन्दसहाय पूछ रहा था। मन मे प्रार्थना। हे भगवान! बैनवती के मुह से कोई ऐसा सच न निकले जो गोविन्दसहाय को आहत कर डाले। अगर ऐसा हो तो थोडी देर के लिए उनकी सरस्वती को झूठ कर देना। अपनी कमियो से खूब वाकिफ था वह एक अजब-सा डर भी महसूस करता था। बटनिया की उम्र शरीर सौन्दर्य सभी गोविन्दसहाय के लिए चुनौती। भला उसे बटनिया जैसी लडकी पति रूप मे सहेगी क्यो ? पर लोभ था इसीलिए शादी कर बैठा मगर एकातो मे लगातार यह अहसास काटता है कि बैनवती के साथ बहुत ज्यादती की

और क्या अपने साथ नही ? यह खयाल भी डरा देता है। इस पल भी यही डर सहमी नजरो से देख रहा था उसे

बटनिया कहती है, 'धरम की किताबो मे लिखा है कि जो औरत घरवाले से झूठ बोलती है, नरककुड मे गिरती है मैं तुमसे झूठ नही कहूगी। सच्ची-सच्ची बात कहती हू" एक पल थमी थी वह।

गोविन्दसहाय के चेहरे पर डर घना हो गया था उससे कही ज्यादा गाढा।

बटनिया ने कहा था, ' जब तुम मुझे देखने आये थे ना, तब मुझे बिलकुल भी अच्छे नही लगे अजित मुझे अच्छा लगता था। उससे मैंने कहा था कि मुझे कही ले चल। मैं जिन्दगी भर उसका साथ निभाऊगी, पर वह डर गया। और फिर तुम्हारा मेरा ब्याह हो गया फिर भी अजित मुझे अच्छा लगता है। मैं उसकी तसवीर ले आयी थी साथ कोई बात नही है।"

गोविन्दसहाय को महसूस हुआ था जैसे उसे कोड़े मारे गये हों और हर जगह से खाल उतरी चली आयी हो। रुआसी आवाज मे कहने लगा था, 'गलती मेरी ही थी बैनवती। तेरा-मेरा जोड ही नही था। मैंने तेरे साथ बडा जुलम किया।"

'हा सो ता किया!" बटनिया बोली थी। गाविन्दसहाय एकदम जैसे पटखनी खाकर धरती पर आ गया था कुछ बोले तभी बटनिया आगे कह गयी थी—' पर अब जो हो गया सो हो गया "

"नही-नही बटनिया, तू चाहे तो अब भी मैं तुझे आजादी दूगा ' गोविन्दसहाय का लगभग रोना आ गया था। हीनभावना ने सारे मस्तिष्क को न सिफ चकझोरा भूल के एहसास ने उस पराजित समपण के लिए भी बाध्य कर दिया। अनायास ही उसे ध्यान हा आया था कि उसकी और बटनिया की उम्र मे पन्द्रह साल का अन्तर है बटनिया सुन्दर है, गाविन्द उतना ही असुन्दर इस सच ने जैसे थप्पड मारकर याद दिला दिया है उसे कि वह क्या है ?

आगे कुछ कह, तभी बटनिया ने उसके होठ दबा लिय थे,"राम राम ! यह कैसी अधरम की बाते कर रहे हो तुम ? यह तो ब्याह से पहले की बात थी। अब ता धरम से तुम मेरे सुहाग हो। अब तुम मेरे भगवान। जब औरत ब्याह दी जाती है तब य सब बातें नही सोची जाती। पाप लगता है।"

और गाविन्दसहाय का मुह खुला रह गया था। बटनिया सामने उसकी पत्नी। सरल, निर्दोष और बच्चे जैसी पवित्र। जैसी बाहर, उससे कही ज्यादा सुन्दर और चमकदार भीतर।

"एसी बात साची या कही तो मैं आगे के जनम म जान कौन सी जानि पाऊ बटनिया बुदबुदा रही थी—"चौरासी हजार जोनि होती हैं। शास्तरो म लिक्खा है कि मानुस जोनि बडी मुश्किल से मिलती है। मुझे मिल गयी है तो क्या मैं ये सब पाप करम सोचके उसे गुमा दूगी न न, एसी बात कभी मत कहना!"

और गोविन्दसहाय स्तब्ध था। टकटकी बाध हुए उसे देखता हुआ। सहसा उसकी आखें भर आयी थी। नजर चुराली। लगा कि बहुत बूढ़ा

हो गया है। बेहद बूढा।

बटनिया सहज भाव से बोले गयी थी "एक बार एक पाप लग गया था। तुम्हें पता नही मैं कैसे रोयी ? तब तक चैन नही पडी थी, जब तक कि पिराचित नही कर लिया।"

"कैसा पाप ?" यू ही पूछ गया था गोविन्दसहाय।

और बटनिया ने सहज ढग से जवाब दिया "न न वह पाप कहन से भी पाप लगता है औरत जात को।"

पर गोविन्दसहाय के भीतर अजब सी डर भरी उत्सुकता पैदा हा गयी थी। बडे सलीके स पूछा, "अपने घरवाले को कोई बात बतान से पाप थोडे ही लगता है ?"

बटनिया कुछ पलो तक जैसे सोचती रही थी फिर कहा था, 'वह अजित है ना, कहानी लिखता है उसकी कहानी अखबार मे भी छपती है। उसका नाम भी छपता है एक बार मुझसे बोला कि उसे कहानी लिखने के लिए " बटनिया लजा गयी थी, "मुझे सरम आती है मैं नही कहूगी।" मुह फिरा लिया।

गोविन्दसहाय बहुत गभीर हो उठा था कल्पना डरावनी ही नही, क्रोधित होन लगी थी। बोला, "उधर मुह करके ही बतला दे क्या बात थी ?"

जैस तैस वह बोल सकी, " उसे कहानी लिखने के लिए एक आधी नगी औरत देखनी थी बिलकुल कमर से नीचे तलक। और बस, मेरे पीछे पड गया अब मैं नाही भी नही कर सकी। मैं उस चाहती भी थी ना ब्याह स पहले की बात है "

'हू फि—फिर ?" गोविन्दसहाय की आवाज कापन लगी थी। बदन पर पसीना उबल आया था उसने अपने आपको बेहद कमजोर महसूस किया।

'फिर मैं क्या करती ? उसकी बात माननी पडी "

"मानी तू तूने '

'इसीसे तो कहती हू कि पाप लगेगा। ब्याह के बाद भला ऐसी बात कही सुनी जाती है। "

गोविन्दसहाय की आवाज ही गायब हो गयी कुछ देर के लिए। सिर्फ हरकत करती पुतलियां। सूखी, बरौशन, बेचैन।

' पर तुमसे छिपा भी नही सकती। उससे भी कहते है पाप लगता है। झूठ नही बोलूगी मुझसे पाप हो गया। विचार अर्जित से भी। '

'अच्छा अच्छा तू अब चुप हो जा। बहुत हो चुका!" सहसा पागलो की तरह बडबडा उठा था गोविन्दसहाय।

वह हक्बकाकर देखने लगी थी—ऐसे जैसे गोविन्दसहाय पागल हो गया हो। कहा था ' इत्ता बुरा क्यो मान रहे हो, फिर हम दोना ने पिरा चित भी तो किया था? पूरे नौ दिन तलक। बिना नमक मिरच मसाले का

दोनो हाथो से कान मूदकर हाफने लगा था गोविन्दसहाय, "उफ! तू चुप होगई कि नही? पागल कही की!"

वह अबूझ नजरो म उसे देखती ही रह गयी थी। गोविन्दसहाय घर के बाहर निकल गया था देर तक यू ही भटकता रहा। लग रहा था कि बटनिया के शब्द अब भी उसके कानो म गूज रहे हैं वह किसी खौलते कढाव मे पडा है आधी रात तक पार्क मे बैठा रहा था—व्यर्थ। इधर उधर खोयी नजरो से देखता हुआ। लगा था कि कुछ ज्यादा ही सोच रहा है बटनिया को लेकर जिसे लेकर उसने इतनी विक्षिप्तता महसूस की है उस बटनिया ने तो सहज भाव से उस सबको आत्मसात कर लिया है। प्रायश्चित के नाम पर बिसरा दिया है उसके लिए यह सब बिलकुल गभीर नही था, जबकि गोविन्दसहाय पागल होने लगा था

बटनिया दोषी कहा हुई? वह अपने से ही उलझता रहा था। लगता था कि दोषी वही है। दोष को जानता है वह। बिसराने की शक्ति सामर्थ्य और ईमानदारी नही है उसम। बटनिया उसकी तुलना मे कही ज्यादा समर्थ, पवित्र और ईमानदार। यह न होता और अगर वह सचमुच हल्की औरत होती तो इस तरह कहती?

कभी नहीं। इसलिए कि दोष को उसने जिस स्तर तक दोष माना था, दोषमुक्ति भी उसी सहजता स कर डाली। नौ दिन नमक मिरची न

खाकर। गोविन्दसहाय को लगता जैसे वह एक पागल लड़की को ब्याह लाया है तनिक भी सामाजिक नहीं।

क्या सामाजिकता का नाम ढोंग है? झूठ और आडम्बर है? क्या बटनिया उस समय उसके लिए पवित्र होती, जब वह दोष का दोष मानकर छिपाये रहती? बल्कि लगता है पागल है गोविन्दसहाय। व सब जो दोष की निर्दोषिता को समझते नहीं या समझकर समय पान का साहस नहीं करते। गोविन्दसहाय का मन हल्का होने लगा था उसके साथ ही बटनिया के प्रति श्रद्धालु भी। लौटकर आया तो देखा था, वह रो रही है। गोविन्दसहाय ने पूछा था, "क्या बात हुई? रो क्यों रही है बैनवती?'

"तुम—तुम मुझसे गुस्सा होकर जो चले गये थे? कित्ती देर बाद लौटे हो।' वह शिकायत करने लगी थी। इस तरह जैसे किसी बच्चे का भरी सड़क हाथ छूट गया था भटकता हुआ बच्चा परेशान हो गया। गोविन्दसहाय को उस पल वह एकदम बच्ची ही नजर आयी थी। कई दिनों बाद धीमे धीमे सहज होकर उसने नयी स्थिति को स्वीकार लिया था बटनिया को भी समझाया बुझाया था। तैयार किया था कि उस सबको कभी जबान पर न लाये, जो उसने गोविन्दसहाय से कह दिया है।

बोला था, "भूल जा उसे। जो हो गया, सो हो गया!"

'मैं तो उसी दिन भूल गयी थी, जिस दिन पिराचित पूरा कर लिया?" वह हसती थी, "तुम्हीं नहीं भूल पा रहे हो "

लाजवाब देखता ही रह गया था गोविन्दसहाय।

और उससे कहीं ज्यादा लाजवाब होकर अजित गोविन्दसहाय को देख रहा था बटनिया तो जो है सो है, यह आदमी भी क्या कम विलक्षण है? अविश्वसनीय!

पर सच भी अविश्वसनीय होता है! उसने सोचा था।

गोविन्दसहाय ने कहा था, अजित बाबू। कभी सुना था मैंने कि

तपस्वी वह होता है जो कलुषहीन हो। बैनवती को देखता हू तो मुझे यही लगता है "

अजित चुप। मन होता था कहे, "तुम भी क्या कम बडे आदमी हो गोविन्दसहाय? बैनवती को सहेज रखनेवाला आदमी भी क्या कम कलुषहीन होना चाहिए? उससे कही ज्यादा ही।" पर आवाज नही निकली थी। क्या इसलिए कि अजित को लग रहा है—वह बटनिया के सामने ही नही, गोविन्दसहाय के सामने भी बहुत ओछा हो चुका है?

'वह आज भी आपकी बहुत इज्जत करती है शायद उसके मन म कही आप आज भी मौजूद है पर जानता हू कि एक न भूली जाने वाली याद की तरह। बस इससे ज्यादा कुछ नही। "

'यह यह सब आप क्या कह रहे हैं गोविन्दसहायजी?" कापती आवाज मे बोल उठा था अजित।

"ठीक कह रहा हू अब मैं हरदोई तो रहता नही—लखनऊ रहता हू। आपसे मिलने की बहुत इच्छा थी, इसीलिए आया। बटनिया आपके बारे मे पूछेगी भी जरूर और, और मैं बतलाऊगा भी। " बोलते बोलते उसकी पुतलिया चमकने लगी थी—हल्की आसू की परत—कहा था, 'आपका काम अच्छा चल रहा है। यह तो बतला ही दूगा पर लिखना लिखाना? अब तो आपकी कहानिया भी खब छपने लगी हागी?'

'जी? " अजित जैसे उसके सामने ठहर नही पा रहा था। बोला था, "जी हा। जी। काफी छपती हैं।"

'भगवान कर, आप खूब तरक्की करें। हम लागो का इससे खुशी ही होगी।' वह उठ पडा था। बोला "अगर बुरा न मानें तो मेर साथ चल सकेंगे महाराजबाडे तक?'

अजित ने पूछना चाहा था क्या, पर वह भी साहस न हुआ। उठ पडा था, "चलिए!"

दौलतगज पार करते हुए वह एक फाटो स्टूडियो पर रुक गया था, कहा, "आइए! एक फोटो हो जाय साथ साथ। याद रहगी!'

अजित यत्रवत् उसकी बात मानता गया था। इस तरह तो किसी के

कहने से चलता नहीं है अजित ' क्या हो गया उसकी इच्छाशक्ति को ? किस कदर कमजोर ?

उन्होंने साथ-साथ फोटो खिचवाया था। मुसकराने में अजित को तकलीफ हुई थी, पर गोविन्दसहाय सहज था। फोटोग्राफर ने चार घण्टे बाद का समय दिया था कापी के लिए। गोविन्दसहाय बोला था 'ट्रेन पर जाते समय लेता जाऊंगा। तैयार रखिएगा। मुझे अभी जाना है—रात ग्यारह की गाड़ी से।'

'आज ही जा रहे हैं ?' अजित ने पूछा। बाहर आ गए।

"जी।" उसने जवाब दिया था 'बस आपसे भेंट और इस फोटो के लिए रुका था। अब हरदोई तो रहते नहीं हैं हम लोग। शादी का भय नहीं। फिर मेरा-आपका साथ साथ फोटो है। अब तो कोई शाप नहीं दे सकेगा बैंतवती को।' वह हंस पड़ा था। अजित ने भी हंसने की कोशिश की थी, पर लगा था कि फिसफिसा कर रह गया था। उसके साथ घर लौटना भी जैसे बोझ बन गया था।

मास्साब के घर के सामने अजब सा शोर और चख चख थी। अजित अनचाहे ही रुक गया था। मायादेवी गैलरी में खड़ी रो रही थी। भाड़ बुआ के नाम गालियां बक रही थी 'उस मर का नाश हो। मुझे तो भरोसा नहीं होता कि मेरी औलाद है ?'

धीरज से काम लो, माया। जरा हिम्मत '

'हां, बहिनजी ' नीचे से कुन्दन चिल्लाया था ' ज्यादा घबराने की बात नहीं है। ज्यादा घायल नहीं हुई मैं खुद देखकर आया हूं'

'पर मैं मुझे देखे बिना सन्तोष नहीं होगा।

मास्साब बोल थे, ' नहीं। तुम्हें कोई नहीं जाने दिया जा रहा। गयी तो परेशानी ही बढ़ा दोगी चलो भई कुन्दन।'

वे चलने को हुए। पड़ोस के एक दो लोग और साथ। अजित तुरत आगे बढ़ गया था, 'क्या हुआ मास्साब ?'

अजित को देखते ही जैसे वह ज्यादा दआग हो उठे थे। चलते चलते ही बुदबुदाये गये थे, ' अरे मत पूछो बेटे। बड़ा गजब हुआ ! कहते हैं तेरे दोस्त ने ही मिन्नी पर तेजाब फिकवा दिया !"

तेजाब। अजित भी इसी तरह उछला, जैसे कुछ छींटे आ पड़े हों। गोविन्दसहाय को भूल ही गया था "चलिए। चलिए। मैं भी चलता हूँ। कहाँ है ?"

'अस्पताल में पड़ी है। " लगभग दौड़ते हुए कुन्दन ने कहा था, 'क्या बतलायें भाई, ऐसा बड़ा भाई भी किस काम का उस अपनी ही बहिन पर "

ज्यादा कुछ नही सुन सका था अजित। भाड़े बुआ ने तेजाब डलवा दिया। वह क्यो ? एकदम भुन गयी होगी मिन्नी ! पता नही चेहरे पर पड़ा था

' गनीमत हुई साहब, कि चेहरे पर नही पड़ा।" कुन्दन साथ चलने वालो से कहे जा रहा था, "पीठ का कुछ हिस्सा ही "

'राम राम ! भाई है या शतान !" किसी ने कहा था।

वे अस्पताल पहुचे। मिन्नी की पीठ पर पट्टियां बधी हुई थीं। लगभग चौथाई पीठ जल चुकी थी कन्धे से पिछला हिस्सा। मालूम हुआ आधे इंच तक जख्म हो गये हैं। बसुध थी। दर्द सह सके, इसलिए मार्फिया दे दिया गया था उसे।

वे सब देर तक बाहर रुके रहे थे। वही अजित को कहानी मालूम पड़ी थी। सबका एक अनुमान था कि हरकत भाड़े बुआ की है। दो दिन पहले खूब झगड़ा हुआ था। भाड़े बुआ ने मिन्नी को जान से मरवा देने की धमकी तक दे डाली थी। कारण था कि मिन्नी ने जानवरों अस्पताल के ही किसी डाक्टर से दोस्ती कर ली थी। उसके कारण भाड़े बुआ को आये दिन अस्पताल मे अपमान झेलना पड रहा था। याद आ गया था अजित को। भाड़े बुआ 'मिन्नी के कारण बहुत दुखी हूं'—कहता भी फिरता था।

मगर गनीमत थी। पुलिस तक यह बात नही पहुची। सभी ने दबा ली। अजित सोचता रहा था—ठीक हुआ या गलत ?

डाक्टर ने बाहर आकर खबर दी थी, "आप लोग बेकार ही रुके हैं।

पेशेन्ट कल सुबह से पहले नही जागेगा।"

मास्साब आखो मे आसू भरे उसके सामने जा खडे हुए थे "क्या मैं रुक सकता हू उसके पास ?"

"आप कौन हैं ?"

कुन्दन ने बीच मे ही कहा, "ये पेशेन्ट के पिताजी हैं साब !"

"ठीक है !" डाक्टर ने इजाजत दी, "पर आप गैलरी मे ही रहेंगे।"

"जी।"

कुन्दन बोला था, "मैं आपका सामान लिये आता हू।" वह चल पडा था। उसके साथ अन्य पडोसी भी। अजित रुका रहा था थोडी देर। जाने क्या मन होता था रुका रहे। भाडे बुआ पर बहुत क्रोध आ रहा था। अगर बस चलता तो इतने जूते मारे जाते उसमे कि

पर गलतिया मिन्नी की क्या कम है ? बिलकुल असयत हो गयी थी। पजवानी से उसे मुक्ति मिल गयी थी, मगर इसका यह मतलब तो नही कि वह एकदम वेश्या ही

छि छि। अजित का मन खराब हुआ था, पर दुखी भी। बेचारी। किस कदर जली होगी, जिस पल तेजाब जिस्म पर पडा होगा ? कल्पना भर ने सिहरा दिया है मन को।

मास्साब चुपचाप उक्डू बैठे हैं। खाली दीवार की ओर देखते हुए। व्यथ, निरुद्देश्य। सहसा बुदबुदा उठे थे, "पता नही अन्त समय पर क्या क्या देखना लिखा है भाग मे ? "

अजित का मन ज्यादा ही नफरत से भर उठा था। यह आदमी ही तो है, जिसने सबसे पहले मिन्नी के जीवन को नरकुड मे धकेला था ? कुछ सिक्के बटोरने के लिए ! अपनी बमतलब, अपाहिज, मृतवत् सासो की रक्षा के लिए ?

बहुत मन हो रहा था कि किसी तरह मिन्नी को जागता देखे। उससे दो चार बातें करे। क्या ?

उसके अपने पास जवाब नही है इस क्यो का। बहुत-सी बातें तो होती हैं, जिनका आदमी के पास कोई जवाब नही होता। वह सिर्फ अपनी शान्ति को खलबलाती हुई महसूस करता है।

अजित का ध्यान बट गया। मास्साब कह रहे थे, "एक काम कर सकेगा, अजित ?"

"जी ?"

"जरा घर पहुचकर अपनी चाची से कुछ पैसे लाने होंगे।" मास्साब परेशान आवाज मे कहते हैं, 'यही कोई सौ-पचास रुपये। मालूम नहीं, किस वक्त क्या जरूरत पड जाये ?"

"जी।" अजित चल पडा था। भाडे बुआ ने वैसा किया होगा ? महसा विश्वास नही होता। भला मिन्नी को जिन्दा लाश बनाकर उसे क्या मिल जाता ?

बहुत कुछ। उसने अपने भीतर ही जवाब पा लिया है। उपयोगिता का युग है। मिन्नी का जिस हद तक उपयोग हो सकता था, किया। अब वह जैसे जरूरत की चीज नही रह गयी है। अब शायद उसकी अपगता या लाचारी की जरूरत है। कितनी कितनी तरह की, कैसी कैसी जरूरतो मे जीने लगा है आदमी। उसने सोचा था। निराशा और तकलीफ की एक सिहराती ठडक महसूस की थी बदन मे। बीमार बना देनेवाली सद हवा !

बाजार लौट आया है। गन्दे नाले वाला रास्ता पार करके बडी सुविधा होती है—जल्दी पहुचा जा सकता है। वही किया था। महल्ले की छोटी-सी जिन्दगी मे जैसे हडकम्प पैदा हुआ है मिन्नी-काण्ड से। वही चर्चा का विषय। अब तक तेजाबवाली कोई घटना नही घटी थी सोचा था कि केशर मा से कहता चले। दोबारा अस्पताल पहुचकर लौटते हुए बहुत देर लग जायेगी।

गली मे समा गया था। सुरगो के चबूतरे पर औरत-मर्दों की भीड। इसी तरह यहा वहा, छोटे छोटे जुट बनाकर मिन्नीवाली बात हो रही है। देर से हो रही होगी। वह उनके पास से निकलकर घर की ओर बढा, तो पाडे ने पुकार लिया था, "अरे, अजित ? सुन तो ?"

वह मुडा।

"तुम अस्पताल से आ रहे हो ना ? " पाडे ने सवाल किया। सबकी निगाहे उसी पर टिकी हुई।

"हां।"

"कैसी है वह ?" पांडे का सवाल उछला।

पास खड़े पोस्टमास्टर भी बोल पड़े थे, "तेजाब का केस है पता नहा, क्या हो ?"

अजित ने गहरी सांस लेकर जवाब दिया था, "पीठ पर घाव हैं अभी वहां रखी गयी है।"

"यानी चेहरा वेहरा ठीक है ?" सुरगो ने जैसे हैरत से पूछा। अजित को वह चेहरा देखकर लगा था जैसे सुरगो की कल्पना—दुष्कल्पना बड़ी आहत हुई है खबर से।

"हां।"

एक पल खामोशी रही, फिर भाई बड़बड़ाया अच्छा हुआ! बेचारी!"

"मगर ऐसे भाई को जरूर सजा मिलनी चाहिए! वैष्णवी ने जैसे मिनमिनाकर कहा।

"हां। जरूर मिलनी चाहिए। मास्टर ने बकार ही उसको बचाया। फौरन स्साले को जेल भिजवाना था। औलाद ह तो क्या हुआ ? जुरम तो किया ही है।" पोस्टमास्टर की राय।

"वह तो सब ठीक है पोसमास्साब, पर भाड़े भी तो आखिर औलाद ही है।" पांडे ने निराशा से वैष्णवी को देखा। कहा, "मा बाप की परेशानी है। क्या करते ? एक हाथ को जलन से बचाने के लिए दूसरा हाथ तो लपटों मे झोंका नहीं जा सकता ?'

"हां—ऐसा तो है ही ठीक कहते हो भइया!" पोस्टमास्टर घर मे घुस गये थे।

अजित अपनी राह। केशर मा के कमरे मे भी रोशनी थी। वहां चन्दनसहाय और उसकी घरवाली बड़दत्ता मौजूद। वही जिक्र। जिस तरह चन्दनसहाय ब्यौरा दे रहा था, उसने अजित को भी रुचि लेने को बाध्य कर दिया था चन्दन कह रहा था, "असल बात तक तो कोई पहुंच ही नही रहा है मा जी!"

"वह क्या है ?" केशर मा पूछ रही थीं।

"बात यह है कि हम भी कायथ ह, वह भी कायथ है। नाम भल

होकर जवाब दिया, "लडकी ऊटपटाग काम करेगी, रात-बेरात गैरजातो के साथ सिनेमा बाजार घूमेगी तो मा बाप को ऐतराज नही होगा? उनकी इज्जत ता दो पैसे की करदी उस लडकी ने? आखिर वे बेचारे भी समाज मे रहते है "

"बाहरी इज्जत और समाज!" अजित चिढ उठा था, "यह समाज और इज्जत उस दिन कहा चले गये थे, जब मिन्नी यहा रहकर भी यही सब कर रही थी और घरवाले चुप ही नही खुश थे?"

चन्दनसहाय ने सहजता से जवाब दे दिया था, "दखो भाई, तुम अभी लडके हो। समाजवालो के मुह अकेली औरत जात का रहते घूमते देख कर खुलते है, पर वही जब घरवालो के साथ हो तो कोई स्साला मुह खोलकर बात नही कर सकता! पीठ पीछे भले बकता रहे!"

"वाह वाह! क्या शानदार तक दिया है आपने? यानी आप लोग चाहते है कि वह घरवालो के साथ रहकर वेश्यापन करे और अपनी चमडी बेच बेचकर इन कुत्तो को भी रोटी खिलाती रहे? " अजित एकदम उत्तेजित होकर बकने लगा था, "तो आपका समाज, जात बिरादरी खुश है, क्यो साहब? "

"अजित! " केशर मा एकदम चीख पडी थी—"तुझे होश है, तू कसी बातें कर रहा है? क्या तुझे बडो के सामने अब गालिया बकना भी "

"ठीक कह रहा हू, मा। ये चन्दन भाई साहब जा कुछ कह रह ह, वह खूब समझ रहा हू। इनसे ज्यादा मैं जानता हू मास्साब के घर की बातें।" अजित अचानक उबलता ही चला गया था भूल गया था कि मा ही नही, चन्दन, उसकी पत्नी—सभी उसके लिहाज की चीज रहे हैं। पर लग रहा था आज इस झूठे लिहाज और समाजी वाता के सडे जिस्म पर पडा कफन खीच ही डाले। गरज पडा था, "सच क्या नही कहते आप लोग कि मास्साब और भाडे चाहते हैं कि मिन्नी अपना जिस्म बेच-बेचकर इन पाजियो को भी पालती रह। य घरेलू बस्तियो मे रहनवाल दलाल हैं, और कुछ नही। "

"अजित! " अचानक केशर मा न सिफ चीखी थी, बल्कि पास

रखा तकिया खीचकर अजित पर मार दिया था, 'सत्यनासी। तेरे मुह को आग लगे! अब तू मइया बाप के सामने भी रडी भडवो की बातें करन लगा पाजी! जा, निकल जा यहा से। निकल।"

और अजित बुझकर रह गया था। थूक का घूट निगला। तेजी से बाहर चला आया। लग रहा था कि चन्दनसहाय के शब्द अब भी गूज रहे हैं हर शब्द तेजाब के छीटो की तरह ही जिस्म उधेडता हुआ!

सीढिया चढ आया, पर बरामदे का दरवाजा बन्द। अजित न जोर जोर से साकल पीटी थी

भीतर से आवाज आयी, 'कौन?"

"मैं—अजित!" अजित चीखा था, 'जल्दी खोलो!" फिर पल भर थमा। ये कुन्दन दरजी भीतर क्या कर रहा है? उसे अच्छा नही लगा।

"आते है। आते हैं भाई।" आवाज आयी, फिर हडबडाते हुए भीतर से कुन्दन न दरवाजा खोला। अजित एकदम भीतर जा पहुचा। कुन्दन के जिस्म पर बनियाइन और सिर्फ पाजामा। अजित भन्ना गया। ये कमीन। पर इस सबमे वक्त न देकर तेजी से भीतरी कमरे की ओर बढा, "चाची किधर हैं?"

कुन्दन घबराया हुआ, "क्या क्या बात है? मैं—मैं तो बस, सामान लेकर आ ही रहा था?" उसकी आवाज काप रही थी।

"सामान छोडो मुझे काम है।" कहकर एकदम भीतर जा पहुचा था अजित। देखा, मायादेवी नही है सवालिया नजरो से कुन्दन को देखा।

कुन्दन ने उसी तरह सिटपिटाते हुए बतलाया, 'वह वह तो सन्डास म है। बहिनजी का पट ठीक नही है" पर अजित उस चेहरे को देख रहा है। पिटा हुआ, घबराया, पसीना उगलता चेहरा

'मुझे सौ रुपय चाहिए।' अजित बोला था। जान क्यो वह जा

रखा तकिया खीचकर अजित पर मार दिया था, 'सत्यनासी। तेरे मुह को आग लगे ! अब तू मइया बाप के सामने भी रडी-भडवो की बातें करन लगा पाजी ! जा, निकल जा यहा से। निकल। "

और अजित बुझकर रह गया था। थूक का घूट निगला। तेजी से बाहर चला आया। लग रहा था कि चन्दनसहाय के शब्द अब भी गूज रहे हैं हर शब्द तेजाब के छीटो की तरह ही जिस्म उधेडता हुआ !

सीढिया चढ आया, पर बरामदे का दरवाजा बन्द। अजित न जोर जोर स साकल पीटी थी

भीतर से आवाज आयी "कौन ?"

"मैं—अजित !" अजित चीखा था, "जल्दी खोलो !" फिर पल भर थमा। य कुन्दन दरजी भीतर क्या कर रहा है ? उसे अच्छा नही लगा।

"आते हैं। आते हैं भाई। " आवाज आयी फिर हडबडाते हुए भीतर से कुन्दन ने दरवाजा खोला। अजित एकदम भीतर जा पहुचा। कुन्दन के जिस्म पर बनियाइन और सिफ पाजामा। अजित भन्ना गया। य कमीन। पर इस सबमे वक्त न दकर तेजी से भीतरी कमरे की ओर बढा, "चाची किधर है ? "

कुन्दन घबराया हुआ, "क्या क्या बात है ? मैं—मैं तो बस, सामान लेकर आ ही रहा था ?" उसकी आवाज काप रही थी।

'सामान छाडो मुझे काम है।" कहकर एकदम भीतर जा पहुचा था अजित। देखा, मायादेवी नही है सवालिया नजरो से कुन्दन को देखा।

कुन्दन ने उसी तरह सिटपिटाते हुए बतलाया, "वह वह तो सन्डास म है। बहिनजी का पेट ठीक नही है " पर अजित उस चेहरे को देख रहा है। पिटा हुआ, घबराया, पसीना उगलता चेहरा

'मुझे सौ रुपय चाहिए। ' अजित बोला था। जान क्यो वह जो

कुछ अनुमान कर पाया था, उसके बाद कुन्दन को ही नहीं -मायादेवी को भी पीटने का मन हो रहा है न सिर्फ पीट डालने का, बल्कि मारते-मारते बेदम कर देने का। ढेर सी गालियां बकते हुए चीखने का, "तुम लोग इस कदर उफ!" अजित महसूस करता है कि उस सबको जबान से बक भी नहीं सकेगा!

"मैं—मैं देता हूं" कुन्दन ने कहा था। "आओ, मेरे साथ।" वह बढ़ा। अजित मायादेवी की चारपाई पर बैठ रहा। चादर उठाकर एक ओर फेंक दी ब्लाउज, ब्रेसरी और साड़ी ?

कुन्दन बड़बड़ाने लगा था, 'वह, वह तो तब से लेटी ही थी तबीयत एकदम बिगड़ गयी"

अजित ने चारपाई पर बिखरे उन कहानी उगलते कपड़ों और फिर कुन्दन को देखा। इस तरह जैसे व्यंग्य से पूछ रहा हो—"सच ?"

कुन्दन ने थूक का घूंट निगला, "आओ अजित! मैं—मैं अपने घर से देता हूं पैसे।"

"नहीं, मुझे और भी बात करनी है।" अजित ने जानबूझकर कहा, स्नानघर की ओर नजर लगा दी—' मैं चाची के निकलने का इंतजार करूंगा।" तुरंत कुन्दन को देखा। जो, जितना समझा है—वह अंतिम पुष्टि चाहता है।

कुन्दन ज्यादा ही सिटपिटा गया। माथे पर पसीना साफ झलक आया लगा कि रोने को हो आया है।

अजित एक क्रूर, बयान से बाहर मजा लेने लगा है कहता है, "तुम भी बैठो।"

कुन्दन चुप। इधर-उधर देख रहा है बस, रोया !

चुप। कुन्दन, चारपाई, कपड़े और स्नानघर का दरवाजा। वे एक-दूसरे को देख रहे हैं कतरा रहे हैं, फिर देख रहे हैं

कुन्दन कहता है, 'मुझे बतला दो, क्या बात है ? कह दूंगा। तुम पैसा लेकर अस्पताल पहुंचो पता नहीं कब, कैसी जरूरत पड़ जाये ?"

"नहीं। वह चाची से ही कहने की बात है।" अजित का जवाब। वह आराम से चारपाई पर लेट जाता है, 'निकलने दो।"

रुपये जेब मे डालकर अजित मुडता नही। कहता है, "कुन्दन। अब हम लोग छोटे रहे है। यह समझ लो कि मोठे बुआ के आते ही तुमसे बात करवाऊगा।"

"प्प पर अजित? अजित भइया? सुनो तो?" कुन्दन घिघिया उठा है

अजित उसे देखता है। तुरत कुन्दन कुछ बोल नही पाता। दो मिनिट की खामोशी के बाद कहता है, "भगवान जानता है अजित, मेरा कोई कसूर नही है। शुरू मे ही मेरा कोई कसूर नही है और अब तुम बडे हो गये हो भाई, समझ सकते हो कि कसूर तो माया बहिनजी का भी नही है "

अजित क्या कहे? मुड जाता है इतनी तेज चाल, जैसे भाग रहा हो। हा, भाग ही जाना चाहिए। सच तो कह रहा है कुन्दन। उसका क्या कसूर है?

और मायादेवी का भी क्या कसूर है? एक बूढे से ब्याही गयी उस औरत को कैसे दोषी बना सकता है अजित? मिन्नी ने कहा था " सब हालात का कुसूर है अजित। "

अजीब चीज होते है ये हालात।

अजित ने बेईमानियां की थी। नौकरी से त्यागपत्र देना पडा। किसका था कुसूर? अजित का? रहमान ड्रायवर का? किसका?

ढूढना होगा कि कौन कुसूर कर रहा है? कहा है इस सबकी जड?

बडबडायी, "फिर तू पूछेगा, कौन है कुसूरवार ? "

"नही।" अजित ने जवाब दिया, "वैसी जरूरत नही होगी। शायद बिना बतलाये ही समझ सकू ?"

"अच्छा!" वह आश्चय से उसे देखने लगी थी, 'तू समझ सकेगा ? हो सकता है। पर मैं तो नही समझ सकी हू। सच तो यह है अजित कि जिसके साथ जो कुछ होता है, किया जाता है, उसका दोप सिफ वही नही होता कही दूरदराज उसकी जड होती है और जडो के झुड म भला यह कसे तय किया जा सकता है कि यह जड, उस जड से जनमी है ? हम, हालात, जिदगी और यह सब जो दीखता है—कुछ कुछ इसी तरह है। सबके कारण है, इसके बावजूद अकारण। " वह फिर से पैग ढालने लगी थी, मगर एकदम से बाह थाम ली थी अजित ने, "नही। अब नही। फिर तुम सुना नही सकोगी मौसी ? " अजित की आखो मे विनय के साथ साथ लोभ उतर आया था। कहानी का लोभ।

वह मुसकरायी। कहा, "मुझमे बहुत बर्दाश्त है रे। पर तू कहता है तो रुक जाती हू " उन्होने पलकें मूद ली। चेहरा इस कदर खिच-सा गया जैसे कही दूर मन से यात्रा पर चली गयी हो

अजित उन्हे टकटकी बाधे देखे जा रहा था अनायास वह चौक गया था। उसने देखा था—जया मौसी की बद पलकें खुली है फिर मुद गयी हैं और कुछ आसू ढुलक आये हैं वह बुदबुदा उठी थी, ' काश ! दिवाकर जी सकता अजित ? और, और काश वह मर ही सकता ! "

रहा नही गया था अजित पर, "मौसी तुम ?"

उन्होने पलकें खोल दी थी। आचल के छोर से आसू पोछ लिये थे। एक गहरी सास लेकर मुसकरा पडी थी, 'नही-नही मैं उसे लेकर रोऊगी नही। उसने कहा था—रोना मत। पर कम्बख्त खुद रो पडा था। " जबडे कस लिये थे उन्होने। बडबडाये गयी थी, 'वह बीमारी कितनी बुरी बीमारी। आदमी न जी पाता है, न मर पाता है।"

"क्या हो गया था उन्हे ?" अजित की आवाज म बेचैनी थी।

"फालिज। " जया मौसी बोली थी "वह बच बचा तो गया था अजित पर बचता तो शायद अच्छा होता। पर आदमी को जाने क्या क्या भोगना लिखा होता है। कहने लगा था, 'जया, डीअर हम कभी साच ही नही सकता कि इस तरह भी लाइफ बीतेगा। रियली, आई नेहर इमेजिन ? हम कभी नही सोचा था।' " बतलाते बतलाते उन्हें जैसे अपने आपको ज्यादा सभालना पड रहा था। बोली थी, "मैं उसकी हालत देखती तो एकदम रोना आ जाता था अजित अस्पताल से घर तो ले आयी थी, पर

"पर सारी राह गालिया बकता आया था एक हाथ काम करता था, दूसरा पैर जबान मे लटपटाहट आयी थी, मगर मगर इलाज के दौरान दूर हो गयी थी। लगता था कि वह पागल हो गया है उसे चुप करना चाहती थी। कडवा भी बोलती मगर हिदायत मिल गयी थी डाक्टरा से, खयाल रखना होगा मिस जया। किसी कदर मेन्टली हर्ट न हो। 'बस, मैं बेबस हो गयी ! मैं ही नही—डाली भी !"

वह चीखा था स्ट्रेचर पर लिटाते ही चीखने लगा था, "बास्ट ड्स। आई वान्ट टु डाई ! मैं मरूगा। मेरे को मार दो। फिनिश माई सेल्फ। " उसकी आखें उबली पड रही थीं, "हमको इस तरह लाइफ नही हाना ! नेव्हर। ' पर डाक्टर जसे बहरे हो गय थे। उन्हें बतला दिया गया था कि मानसिक रूप से कुठित हो चुका है। उसकी गाली, चीखा और बतमीजियो की परवाह न की जाये।

उन्होने परवाह नही की थी। उसे ढाकर ले चले थे एम्बुलेंस की तरफ। डाली और जया बदहवास-सी पीछे-पीछे चलती जा रही थी। लगभग दौडती हुई। वह हाथ-पैर फेंकता, पर डाक्टर फुरती से उसे दबोच लेत। वह गालिया बकता वे उसकी तरफ देखते भी नही।

ऐम्बुलेंस म रखे जाते समय वह एकदम रो पडा था। बच्चा की तरह, फूट फूटकर। उसने करीब खडे डाक्टर की " जोर से

थी। लगभग घिघियाते हुए प्रार्थना की थी 'प्लीज डाक्टर! आय वान्ट टु डाई। नाव आइ केन नाट इमेजिन टु लिव्ह। प्लीज मेरे जार का इंजेक्शन दो। गरदना दबा दो मेरा, पर इस माफिक जीने को मत बाला! लिसिन डाक्टर? प्लीज! फार गाड सेक! मरे को छुट्टी दो इस स्साला मुरदा लाइफ से। "

डाक्टर शंकरन दोस्त था उसका। उसने छलछलायी आंखों से उसे देखा था। हौले से अपनी कलाई पर जमे उसके हाथ को थपकी थी, "थोड़ा धैर्य रखो दिवाकर! यू विल बी आलराइट। तुम ठीक हो जाओगे। मेडिकली यू आर अन्डर कन्ट्रोल। ऐसा निराश मत हो।"

वह रो पड़ा। जकड़ ढीली हो गयी। स्ट्रेचर एम्बुलेंस में सरका दिया गया। जया और डाली उसके साथ रवाना हुईं।

इस सुबह सवेरे सीढ़ियां चढ़ते हुए अजित को अजीब सा लग रहा है डर, सकोच और बेचैनी मन के गिर्द घिरी है। लाखों आदमियों के इस जनसागर जैसे शहर में, कब कौन सा तिनका किस ओर बह गया होगा या बह रहा है—कोई नहीं जानता। याकि किसीको समय ही नहीं है, इसके बावजूद अजित को लगता है जैसे वह एक चोर है। हजार हजार आंखें उसे घूर रही हैं। देख रही हैं कि वह चन्दारानी के कोठे की सीढ़ियां चढ़ता जा रहा है

हर हल्की आहट चौंकाती है। भय चेहरे को सन्नाटे से भर देता है। अभी कोई पीछे से पुकार लेगा, "अरे, अजित साहब? इधर किधर?"

और अजित इस तरह लड़खड़ा जायेगा जैसे पुलिस ने जकड़ लिया हो—चोरी करते हुए। एकदम रंगे हाथ!

कोई सुबूत नहीं होगा कि वह चन्दारानी के कोठे पर नहीं, जया मौसी के घर आया था ग्राहकों के लिए नहीं—उनके बुलावे पर।

कौन मान सकेगा? और जया मौसी ही अगर अपना सच किसीको बतला दें—तब कौन मानेगा? कुछ मुसकानें तिरेंगी चेहरों पर। क्रूर, अविश्वासभरी मुसकानें। ये मुसकानें कहेंगी—ऐसी कहानियां हमने बहुत पढ़ी हैं? सब वही तो कहते हैं, जो हैं नहीं। यही कुछ बतलाना नियम भी है—नियति भी!

उन सबकी कहानियां भी यही होगी। इसी नियतिवाली। पर अपनी ही कहानियों का झूठा बनाना भी आदमी का स्वभाव है। नियति भी।

कुरते की ऊपरी जेब में खत है। जया का खत। लगने लगा है जैसे वह एक भारी वजन उठाये हुए है। मन में झल्लाहट। पूछेगा, "क्या तुम जानती नहीं मौसी कि इस तरह खत भेजकर मुझे बुलाना ठीक नहीं है। आखिर अब मैं वह अजित नहीं हूं जो कभी घर-आंगन और गली का अजित था? अब मैं एक दूसरा आदमी हूं। अजित म आगे एक लेखक सामाजिक जीवन जीनेवाला आदमी"

पर नहीं। यह नहीं कहेगा। इतना साहस जया मौसी के सामने करना सहज न होगा। यों भी वह शायद अजित से ज्यादा ही समझती हैं जीवन को। ठीक है कि लेखक के नाते अजित ने काफी मान कमा लिया है, पर जीवन जितना उन्होंने जिया है समझा है, उतना अजित ने नहीं। बहुतों के पास शब्द नहीं होते। हां तो बयान कर पाने का सलीका नहीं होता इतने भर से व क्या नासमझ हो जाते हैं? नहीं।

यह सब पूछने की जरूरत नहीं होगी। सीधा सा एक सवाल थोप देगा। '*जल्दी बताओ, क्या काम है? मुझे एक जगह जाना भी है।* तुम्हारी चिट्ठी मिलने के कारण ही आ गया तुमने लिखा ही इस तरह था?"

बस, जल्दी ही छुट्टी मिल जायगी

अजित आखिरी सीढ़ी पर था। दरवाजा बन्द है। एक पल के लिए अचरज हुआ था। इतनी सुबह जब सूरज सिर चढ़ आया है, सड़कों पर जिन्दगी रात की बेसुधी छोड़कर दौड़ने लगी है तब दरवाजा बन्द?

फिर लगा था कि मूर्ख है। भला उन गली वाली जया मौसी को लेकर क्यों सोचता है, जो इस वक्त आफिस के लिए निकलने लगती थी? वह खड़ा है चन्दारानी के कोठे पर। सारी रात जागता रहा होगा ये कोठा अब निंदियाया हुआ। ऐसे, जैसे कालिखभरी जिन्दगी सुबह होते ही मुंह छिपा जाये। कैसा अजीब अहसास होता है जब निलज्जता लज्जित होने का नाटक करे?

खट-खट-खट!

दरवाजा खुलता है। कस्तूरी सामने। मुस्कराती है। अजित के भीतर भय तेज हो जाता है। विश्वास नही होता कि इन योजनाबद्ध मुसकानो से लोग उलझ जाते हैं ? लगता है कि ये मुसकान थूक के एक लौंदे की तरह चेहरे पर आ गिरती है।

'मौसी ?'

"भीतर हैं।"

वह भीतर पहुचता है।

'आ ! आ जा !" वह कहती हैं। आदतन अजित दीवान की ओर देखता है। नही ह। आवाज आ रही है परदे के पीछे से। फिर वह बाहर आती हैं। आश्चय ! नहायी धोयी, उजली एकदम तरा-ताजा। विस्मय और अविश्वास से उनका चेहरा ही देखता रह जाता है।

'क्या देख रहा है ?' वह उसके सामने आ बैठी हैं।

"कुछ नही " वह हडबडाकर कहता है। फिर जैसे याद हो आता है उसे जल्दी से जल्दी विदा होना होगा। पूछता है, 'किसलिए बुलाया था मौसी ?

'बैठ—बतलाती हू।'

"नही मुझे जल्दी जाना हागा। एक जगह "

वह उदास हो जाती हैं एकदम, "तब तब तो, तू शायद मेरे साथ नही चल सकेगा।'

"कहा ?"

"तुली को रिसीव करन। "

तुली ? " वह एकदम से बैठ गया है कुरसी मे। तुली—नैनीताल की वह बच्ची ? सब कुछ भूलकर एकदम से उस नन्हें चेहरे के साथ जुड गया है। बरसा पहले का वह चेहरा स्वाय फिर स लपट लेता है उस। वह जायेगा। कहानी के आखीर को जरूर दखना चाहगा

"वह आयी हुई है आठ दिन रुकेगी।' जया मौसी कह जाती हैं "अब एक ही साल ता बचा है होस्टल मे। फिर उसे यहीं कहीं रखना होगा ' उनका स्वर मे चिन्ता घुल गयी है।

"यहा ? ' वह चौंककर इधर-उधर देखता है, फिर बुदबुदा पडता

है—"यहा "

"यही सोच रही हू बहुत परेशान हू, अजित। समझ में नहीं आता कि किस तरह, क्या करूगी ? "

"और अभी कहा रखोगी ?"

'अब छोटी नही है वह हायर सैकेण्डरी पास कर रही है सब जानती-समझती है। फिलहाल मैंने एक बन्दोबस्त किया है।" अभी वह कुछ और कह कि कस्तूरी उनके सामने चाबी ला रखती है। वह चाबी उठाकर खडी हो जाती है—'चल, वहा तक न चल सके तो नीचे तक तो चलेगा ही " वह आगे बढ गयी है। बडबडाती हुई, "मुझे भी बेकार ही परेशान किया अब भला मैं क्या समझू कि मेरी तरह जिन्दगी तो एक कमरे की है नही ?' सोच ही नही सकी "

नही-नही, कोई बात नही है। मैं चलता हू।''

'पर तेरे प्राग्राम का क्या होगा जो पहले से तय है ?" वह सीढिया उतरते हुए पूछती जाती हैं।

"उसके लिए मैं माफी माग लूगा। इतना जरूरी भी नही है "

वे फुटपाथ पर आ गये हैं। अजित सहसा फिर चोर हो गया है। कोई देख न ले ? चन्दारानी को तो सारा इलाका जानता होगा अगर कोई अजित को भी पहचानता हो तो

"तू मुझसे जरा हटकर खडा हो जा टैक्सी तो कोई दीखती नहीं ?" वह बडबडाती है।

"क्यो ?"

अरे मेरा क्या पर हो सकता है कि तुझे जाननेवाला कोई "

'अरे नही मौसी। " उसने एकदम कहा है। अपने आप पर आश्चर्यचकित है—इस कदर झूठ बोल सकता है वह ? क्या वह भी यही कुछ नही चाहता ?

वह सिर्फ मुसकराकर देखती है। सहसा टैक्सी रोक लेती हैं। वे समा जाते हैं। टैक्सी नयी दिल्ली स्टेशन दौडी जा रही है। अजित कितनी ही बार उन्हें देख चुका है वे एकदम बदली हुई है। कोई सोच भी नही सकता कि वह चन्दारानी एकदम असभव !

पर यह झूठ कितने दिनो निबाह सकेंगी ? अजित के भीतर एक सवाल उगा है और शायद यही सवाल उनके भीतर। बहुत गभीर बैठी-बैठी सहसा बडबडान लगी ह—" अब यहा आकर कालेज म एडमीशन लेगी तो किस तरह यह सब छिपाया जा सकेगा—समझ नही आता ?"

अजित खुद चक्कर म है, क्या कहे ?

वह बडबडाये जाती ह ' जब यह सब यह सभी कुछ छोडना हागा। मेरा खयाल ह कि दिल्ली भी छाडनी पडेगी "

अजित को लगता है कि ठीक ही है यही ठीक हागा। जया मौसी किसी और शहर म, और तरह जिन्दगी बिता सकेगी। तुली को किसी अच्छे घर पहुचा सकगी

' पर इस सबस भी क्या होगा ? " वह बुदबुदा रही हैं—' क्या और शहरो मे जान पहचानवाले नही मिल सकते नही नही, इस आइडिए मे बहुत दम नही ह " वह एक गहरी सास लेकर चुप हा गयी हैं।

अजित शान्त बैठा है। विडस्क्रीन पर आखें ठहराये। सब कुछ भाग रहा है। शहर, दुकानें, मद औरत बच्चे, जानवर उसके भीतर एक हसी उठ आया है। शोर करती, चीखती चिल्लाती यह भाग दौड किस किस आकडे का लिए चल रही है—कोई नही जानता ! पर चल रही है किसके दिमाग म कौनसा गणित है दूसरे को जानकारी नही। पर धरती के सफेद वर्कों को काला करते हुए हर आदमी दौडा जा रहा है सुबह का अखबार बतलायेगा इन भागते हाफ्ते लोगा म स कितने किसी बस, कार या थ्री व्हीलर से टकराकर शहीद हुए, या ठोकर खाकर मर गये और कितनो की लाटरिया खुल गयी ?

काई भी ता नही जानना कि अगले पल का आकडा क्या है ? इसके बावजूद सबके पास एक पूरा अथमटिक।

और जया मासी भी आकडे लगाये जाती हैं— वैस जरुरी तो नही है कि किसी और शहर मे कोई पहचाननेवाला निकल ही आये ? बेकार का वहम ! यही एक रास्ता है। तुली के लिए यही एक रास्ता "

अजित एक गहरी सास खीचकर सहसा तुली के बारे म सोचने लगा

है। बहुत खूबसूरत बच्ची। अब तो काफी बडी हो गयी होगी। लगभग जवान। लगता है जैसे जया मौसी का बचपन उतर आया होगा अक्स की तरह। कैसे लगेगा जब उसे देखेगा। बिल्कुल जया मौसी ही होगी शायद आवाज भी तो काफी कुछ मिलती थी। अब उम्र के साथ आवाज गाढी होकर एकदम मौसी जैसी हो चुकी होगी

'पर यही तो एक बात नही है—र। " अचानक जया मौसी जैसे फिर से कापती आवाज मे बडबडायी हैं— "कुछ समय बाद तुली के लिए लडका खोजना होगा तब यह झठ किस तरह टिक सकेगा? सोच कर कमकपी होती है जिस्म म "

अजित खामोश है। जया मौसी लगातार आकडे चलाये जा रही है। विडस्क्रीन के बाहर भीड दौडती जा रही है हम्माल रिक्शेवाले, सवारिया, कारवाले इस टैक्सी का ड्रायवर और शायद खुद अजित अजित का मन होता है। जया मौसी को याद दिलाये—" भूल गयी मौसी? तुम्हीन तो कहा था— उन सीढियो का लेकर सोचने माथा पटकने से क्या लाभ, जिन्हें चढकर तू कोठे तक आ पहुचा था? अब तो सच यह कोठा है—सामन।" पर बोला नही।

कौन मोच पाता है सिफ सामने को। दृश्य वतमान को। सब हिसाब लगाते है आगत के। जमीन पडती है विगत से। यही जीवन और यही ससार।

टैक्सी दौडी जा रही है

भीड भी

" कुछ और मोचना होगा "जया मौसी बुदबुदाती है। टेक्सी की स्पीड सहसा थम गयी है। व उतरते हैं। जया मौसी जैसे अजित को भूल कर तेजी से प्लेटफाम की ओर लपक पडी हैं पीछे पीछे अजित उसके दिमाग म है सिफ तुली। कैसी होगी? और उससे भी आगे—क्या घटेगा तुली के जीवन म?

शोर, भीड, आपाधापी इक्वायरी पर सवाल— 'बम्बई डीलक्स कब पहुचती ह बम्बई? '

सब आगत

' मैंने फिलहाल तो डिफेंस कालोनी में एक फ्लैट ले लिया है। सारा सामान लगवा दिया है। इस तरह कि उसे लगे, मैं वहीं रहती हूं। अभी, एकाध सप्ताह उसके साथ वहीं रहूंगी भी " जया मौसी कह रही हैं। निगाह ट्रेन चार्ट पर आनेवाली ट्रेनों का समय खोज रही है

अजित उस बदहवासी के माहौल को लगभग बदहवास होकर ही देख रहा है।

जया मौसी बुदबुदाती हैं— "ट्रेन तो सही वक्त पर आनेवाली है। लिखा था स्पेशल बोगी है लड़कियों की। जानकारी की जाये ?" और अजित के उत्तर से पहले ही इन्क्वायरी काउंटर की ओर लपक पड़ी है। पूछती हैं।

'आप के लिए खबर है मैडम।" काउंटरवाला जानकारी देता है— बच्चे जिस बोगी में है, वह मथुरा रुक गयी है। दो घंटे तक अगली ट्रेन से जुड़कर आयगी।"

जया मौसी स्तब्ध क्या ?"

बच्चे घूम रहे होंगे मैडम । कोई परेशानी वाली बात नहीं है।"

'ओह। " जया मौसी आश्वस्त हुई है। शरीर की सारी तेजी फुर्ती गायब। एक पल व्यग्र खड़ी रहती हैं। कहती हैं चल अजित, इस बीच किसी रेस्तरां में बैठेंगे।"

वे आराम से चल पड़े हैं पर स्टेशन की दौड़—ज्यों की त्यों है। एक लहर अगर किनारे का थप्पड़ खाकर कुछ पल के लिए अपनी गति रोक दे तो पूरी जीवन-सरिता की गति तो नहीं रुकती। वह उसी तरह तेज तेज बह जाती है

वे प्लेटफार्म पार कर आये हैं अचानक जया मौसी फिर बड़बड़ाने लगी हैं तू कुछ सोचा अजित ?"

'क्या ?"वह चौंक गया है।

वही, तुली के बारे में " वह कह रही है "मेरी तो समझ में ही नहीं आता कि किस तरह, क्या करना होगा ? "

अजित उत्तर में चुप है।

" कुछ न कुछ तो सोचना ही होगा।" वह कह रही हैं।

सहसा अजित कह डालता है, 'जो सोच लोगी, वही हो यह जरूरी नही है मौसी ? अब तक जो कुछ सोचा था क्या वही हुआ ? "

एक गहरी सास लेकर उ होंने जवाब दिया है "हा, तू ठीक कहता है रे। पर यह सोचना भी तो नही छूटता। " बोलते-बोलत थमी है, 'शायद यह सोचना, गणित बिठाते रहना भी तो हमारी नियति है, क्या ?"

अजित जवाब नही दे पाता। कौन दे सकेगा ? "

वह रास्ते भर बुत की तरह निर्जीव पडा रहा था। जिन्दगी के नाम पर कोई चीज वहम दती थी तो केवल यह कि वह किसी मासूम बच्चे की तरह दखने लगता। किसी बार जया को—किसी बार डाली को। कुछ आसू आते—बह जाते।

जया और डाली उससे निगाह बचाती। किसी और तरफ देखना चाहती। देखती भी थी। ऐम्बुलेंस से भागता शहर या शहर से भागती ऐम्बुलेंस। ढेर-ढेर आदमी कारें, बसें और आटोरिक्शे। वे देखती। पर लगता कि कुछ नही देख पा रही है। उन सबके ऊपर बार-बार दिवाकर उभर आता है। एक बडी छाया की तरह। धुए का गुबार बनता हुआ, जा सब कुछ होते हुए भी सब कुछ दबा लेता है। कम से-कम दखने वाले की नजर से गुमा दता है।

लगता था कि हर तरफ दिवाकर चम्पत हा गया है। हर स्थिति, हर खयाल और हर विचार से।

देखने के लिए वे दश्य बदलती। गरदन मुडती— इमारतो को फलागती हुई या तो आखें ऊपर और ऊपर—बिलकुल आसमान तक—चढती जाती या फिर नीचे उतरन लगती। इसके बावजूद दिवाकर दिमाग स नही टलता।

अपन आपको हटान के लिए अनायास ही व एक दूसर का दखन लगती। एसा लगता जैस दिवाकर अब दोनो के बीच, एक ही तरह, एक ही हालत मे मौजूद है। रुआसी हो जाती।

और अजाने ही एक बार—पल के किसी सौवें पचासवें हिस्से म ही सही—नजरें फिर से दिवाकर पर जा टहरती।

वही बुत। सिर्फ दाएं-बाएं ढुलकती पुतलियां। बच्चों-सा भाव। बवसी मे हिचकियो की तरह रिस रिस कर बहते आसू।

इसी तरह अस्पताल से फ्लैट तक आन का रास्ता काटा था या कट गया था। लिफ्ट से ऊपर लाया गया था उसे। सामान की तरह ही ढाकर बैडरूम म पहुचाया गया था। बिस्तर पर डाल दिया गया। उस दौर म भी वह न तो बोला था, न ही ज्यादा हिला डुला।

डाली उसके करीब बैठ रही थी। जया ने कहा था—' काफी बनाती हू।" किसी ने कोई जवाब नही दिया था। जया किचिन म आ गयी थी।

दिवाकर तब भी आखो के सामने से हटता नही। असल मे आखो म नही था दिवाकर। दिवाकर कब मन म बैठ गया था—जया को मालूम नही। बहुत खोजा था—कहा छिपा बैठा है? ढूढ नही पाती थी। मगर दिवाकर उसके भीतर कही था—यह तय था। यात्रिक ढग से गैस पर कॉफी चढाते हुए जया अपने से ही अनजाने कब और कैसे फफक फफक कर रो पडी थी—यह भी ना मालूम।

नाक सुडकती और कापती जया न प्यालो म काफी ढाली थी। प्याले ट्रे मे रखे थे और दिवाकर के कमरे म पहुचने से पहले अपने आपको कठिनाई से सभाला था!

सब कुछ उसी तरह शान्त था। बैड पर पडा दिवाकर और उसके सिरहाने कोहनी टिकाए बैठी मायूस डाली।

जया ने कॉफी की ट्रे टेबल पर रख दी थी। डाली और जया न एक-दूसरे को देखा था, इसके बाद दृष्टियो न ही आपस म बहुत कुछ कह-सुन लिया। डाली न प्लेट म कॉफी ढाल ली थी। जया दिवाकर के जिस्म के मुरदा हिस्से का सहारा देती हुई उसी बेड पर बैठ रही थी दिवाकर का सिर और पीठ जया की गोद से हाते जया के सीने पर।

जया के बदन पर बिजली कौंध जानी चाहिए! पर नहीं। वैसा कुछ भी नही। इससे अलग एक अजीब मुर्दगी का अहसास। [illegible] के

वदन का एक पूरा हिस्सा गीन कपड की तरह झूलता हुआ—करीव करीव मुरझा।

एक बार फिर अजान ही आसू झिलमिला आए ह आख मे डाली न काफी म भरी प्लेट दिवाकर के होठो तक बढा दी है। वह सुडकन लगा है। घूट घूट दिवाकर के गल उतरती काफी

इसी तरह थोडी सी कॉफी पी थी उसने। फिर बाला था—' नही ! अव नही।"

थोडी सी ही तो है—पी लो।' जया ने अधिकार से कहा था।

कहा ना—नही !' वह झुझला उठा था। चेहरा इतना विकृत जस मन ग दगी व अहसास स भरा हुआ हो।

डाली और जया न एक-दूसरे का दखा था, फिर जया न होले स उसका वदन अपनी गोद से हटाकर तकिय पर डाल दिया। उसने एक गहरी साम ली थी। आखें मूद ली।

व फिर एक-दूसरे को देखने लगी थी। कुछ कहते—कुछ सुनत हुए। उसके वाद उठ पडी थी वहा स। दूसरे कमरे म आ गयी थी।

कुछ देर उनक बीच खामोशी रही थी। मगर वोलती, चीखती हुई खामोशी, फिर डाली ने कहा था—'जया डीअर, अवी क्या करने का ?'

वही मैं सोच रही हू।" जया ने गुनगुनी आवाज म जवाब दिया था—फिर चुप। लम्बा चुप।

'मरे को प्रिस्क्रिप्सन दो। गिव इट टु मी।" डाली वडवडायी।

जया ने एक ओर पडा लेडीज़ पस उठाया। उसमे स चिट निकाल ली। डाक्टरा न कुछ दवाए लिख दी हैं। वही चलेंगी। हर दूसरे सप्ताह एक इजेक्शन लगेगा। मगर यह सब लाकर रखना होगा। चिट अगुलिया मे दबाए हुए सवालिया निगाह उठाकर जया न पूछा था 'पर पर तुम किस तरह अरेंज करोगी डाली ? "

आइ डा ट नो ! पन् हम करेंगा। डा ट वरी। डाली ने जवाब दिया था—हाथ वढाकर जया के हाथ स चिट ले ली थी। एक नजर उसे देखा। फिर गहरी सास लेकर चिट अपन पस मे डाल ली थी।

'पर ?' जया उलझन मे थी।

"बोल दिया ना—जब तक बनेगा—करेंगा।' डाली ने उत्तर दिया था। अपना अपना प्याला साथ ले आयी थी। एक दूसरे के सामने बैठ गयी। फिर से चुप उनके बीच फैल गया।

अजीब चुप। शोर से भरा हुआ। सवाल करता चुप। किस तरह, कैसे, क्या होगा? दवा खर्च रोटी सब! कुछ भी तो नहीं बचा था। दिवाकर की बीमारी में बहुत कुछ खर्च हुआ है। बिका है टूट भी गया है। अब फर्नीचर और कुछ बरतन। सारे वायदे भी बिक चुके हैं। अब वायदों में भी जान नहीं रही। उनका कोई बाजार भाव नहीं।

डाली फिर बोल पड़ी थी—"अबी हम बहुत कुछ कर सकता है जया! " उसका गला भरा गया था—'इसने भी हमारी खातीर भोत किया है। आई कैन नॉट फारगेट! "

"मगर डाली तुम "

'अबी तुम समझेंगा नहीं, जया।' उसने जवाब दिया था—इस आदमी ने अच्छा लाईफ गॉड को नहीं माना पन् हमारे को मालूम है—इसका भीतर गॉड है। नहीं होता था तो काय के लिए हमारी खातिर कुछ किया?"

जया ने हैरत से उसे देखा, जैसे पूछा हो—' क्या?"

डाली बोली थी—'भोत किया! हमारी इसकी मुलाखात भोत बरस हुआ—हुई थी। इसने भोत कोसिस किया किदरीच् हमारे को काम मिले। पन् स्साला तक्दीर! जिदर गया किदर सिरफ इस्क्ट का झिप खोलने काच् काम मिला। अबी कोई क्या कर सकताय जया—जबी तक्दीर खराप होय? पन ये भोत घुस्सा होता था। बोलता था—तुम काय कू जरा जरा प्रॉमिस पर झिप खोलताय। ऐसा बरन जायेंगा कि तुम स्साला झिप के मगर ही हो जायेंगा। पन् हम जल्दी जल्दी सीढ़ी चढ़ने को मांगता था ना? इसकू समझाच् नई। झिप इसका खातिर भी खोलता था पन् आ अलग बात।" बोलते बोलते कुछ पल थम गयी थी डाली उसके चेहरे पर संतोष था, जैसे बरसों सालता रहा सच होंठों पर आने के बाद राहत पा रही हो। कहने लगी थी—इसका खातीर कुछ करने में हमारे को अच्छा लगता था सिस्टर! पन् हमारा आ रुटीन हो गया ना—ओ

बदलाच नहीं। जरा प्रामिस मिलन का अन् हम क्षिप खोलन का ! भोन चला ! बरसा-बरस ! फिर एक दीन हमार का पत्ता चल गया कि हम सिरफ क्षिप खोलन वाच् हो गया है। हम तब किया कि अभी येई करेंगा ! जब हम यच करना सुरू किया तो दिवाकर हमको हमारा पमट किया ! खरोखर पमट किया ! अबी तक कितना किया होयेंगा—पत्ता नइ, पन् आ भोत होयेंगा—य नकरी है। अभी साल हुआय, हमारा मार्केट बिगड गयाय कभी-कबी तबीयत भी खराब होता है। अईसा बखत हमको दिवाकर साहब बिना काम के भी निभाया है। मधद किया है बोलता था—किसको अच्छा लगता है। डाली की आखो म आसू झिलमिला आए थे। उसन जस कहानी अनायास ही ताड दी थी—"बस, इसलिए हम तुम्हारे को बोलाय—घाबरन का नई। हम भी कुच करेंगा। "

"मगर डाली मुझे मालूम है, तुम बीमार हो और यह सब !' जया के मुह का स्वाद बिगड गया था—क्या कहे ? गन्दगी क्या है और सफाई क्या है डाली क लिए तय कर पाना कठिन।

'अबी किसका ले क करीड होन की काई जरूरत नही। य तो जिस्म है। है इसलिए अईमा नरम गरम चलताच् है। पन् इसका अच्छा क्या है अन बुरा क्या ? हमको अच्छा है—भात अच्छा लगता है। हम कुछ करेंगा। करेंगा तो भात अच्छा लगेंगा ! जिसम रसाला मयाय ?'

जया चुप थी।

डाली न पस उठाया—उठ पडी। कहा— अबी हम जाता,है सिस्टर ! शाम को आयेंगा दवा भी लायेंगा।' फिर जया कुछ कहे इसके पहले ही वह चली गयी थी।

देर तक जया खामोश बठी रही थी। दिवाकर समझ म कभी नही आया —यह डाली भी नहीं। पहली-पहली बार जब इस घर मे पहुची थी तो डाली को लकर क्या-क्या और कहा कहा तक सोचती चली गयी थी वह ? कुछ भी अच्छा नही—सब घिनौना।

लगता है गलत किया। सच तो यह है कि कई बार जो दिखने म जितना घिनौना होता है, उतना नही होता। उससे कही ज्यादा घिनौना होता है वह जो दिखन म कुछ भी घिनौना नही लगता।

"हा।"

इसके बाद उसने जया से बात नही की थी। सीधा दिवाकर के कमरे मे घसा चला गया था। वह थोडी देर मालूम नही क्या कुछ फुसफुसाता-बडबडाता रहा था, इसके बाद जिस तेजी स आया था उसी तेजी स लौटा। जया उसे द्वार तक छोडने गयी थी। द्वार स निकलते निकलते एक अजब सी अथभरी नजर जया पर दौडाकर मुसकरा पडा था वह। कहन लगा था—' ठीक तो हो ना ?"

जया न सहज भाव से जवाब दिया था—"हा।

वह होठ काटता हुआ थोडी देर उस दखता रहा फिर एक गहरी सास लेकर कहा था— अब मैंने लाइन चेंज कर ली है।'

दख रही हू।'

देखा, लाइन चेंज किये बिना इस शहर म रहा नही जा सकता।" सुरेश जोशी न जस दौडत लफ्जो म कहना जारी रखा था— आदमी न भी लाइन चेज करे तो एक दिन यह शहर करवा देता है। "

जया ने सिफ उसे देखा था—समझ नही सकी।

उसने नमस्त किया। बाला था—"अभी जल्दी म हू, फिर किसी दिन आऊगा। और चल पडा।

जया का मन हुआ था कह दे— 'तुम आओ, न आओ मुझे कोइ फक नही पडता।" पर न वह कह सकती थी, न सुरेश न कहन का अवसर दिया था।

कुछ देर खाली दरवाजे पर खडी रही फिर तजी स दरवाजा ब द करके चल पटी थी।

दिवाकर की आवाज आयी थी— जया। "

वह पहुची। दिवाकर का पानी चाहिए था। कुछ दिनों से सोडा लना ब द कर दिया था उसन। दिल के दौरे के बाद सबके बहुत कहन पर भी जिद करके वह फिर से शराब लेन लगा था। जया उस यथाशक्ति रोकती, पर एक स्थिति आती जब वह बात करन के काबिल भी न रहता। जया चुपचाप अपने कमरे म चली जाया करती।

जया ने उसके लिए पानी ला दिया था। उसन पग बनाया, सिप

करने लगा। जया उसे एक पल चिढ और गुस्से से देखती रही, फिर किचिन म चली आयी थी। रह रहकर सुरेश जोशी की बात याद आती। खादी के सफेद कपडे पहनने लगा है। काफी स्मार्ट भी लग रहा था। कहा कि लाइन चेंज कर ली है किस लाइन पर चला गया? मन नही माना था। उसने दिवाकर के कमरे मे आकर सवाल कर दिया था—"यह यह सुरेश का क्या हुआ, दिवाकर?"

दिवाकर ने चौककर देखा था। जया कहने लगी थी— 'ये खादी के कपडे? सफेदी? कह रहा था कि लाइन चेंज कर ली है।"

"हा।" दिवाकर ने पग खाली कर दिया था—"बट, डाट से दिस! बोला—कि विसने सही लाइन ज्वाइन कर लिया है। जो इसी काबिल था स्साला!"

'पर ' जया कुछ कहे तभी दिवाकर ने बतलाया था—"वह दलाली करने लगा है। अबी, जिन कपडो को तुमने देखा—ओ माडर्न दल्लो का यूनिफार्म है।" उसने नया पग ढाल लिया था।

जया अबूझ। नजरें दिवाकर पर टिकी हुई। बुदबुदा उठी थी—"यह तो एक बार तुमने पहले भी बतलाया था।"

"हा। ' दिवाकर गुनगुनाया 'जब तुम्हारे को सब मालूम है, फिर काहे को पूछता है जया? ऐं? व्हाई?'

"पर ये कपडे "

"अच्छा-अच्छा—यूनिफार्म?" यू मीन टु से हिज़ यूनिफार्म? दिवाकर नशे मे बडबडाने लगा था—"देखो जया। ये जो गाधी बाबा ने डेस इन्ट्रोडयूज किया था ना—एक वखत मे अगरेज लोक से लढने के काम आता था इट वाज ए यूनिफार्म ऑफ फ्रीडम फायटर्स बट आफ्टर इनडिपेंडेस— दिस यूनिफार्म इज अलाटेड टु दोज़ पीपल्स—हू आर द वह थमा। नशे का चनझनाता हुआ माथे से उतारने की कोशिश करने लगा। फिर कहे गया— 'ब्रोकर्स! अबी तुम पूछेगा कि काहे का ब्रोकरिंग?—पूछो?" वह चुप हो गया—आखें जया पर।

जया चुप पर आखें पूछती हुई—'कैसा ब्रोकरिंग?'

"पालिटिक्स का, कान्ट्रैक्टस का, लायसेंस का दारू का, अन छोकरी

लोक का डिफरेंट टाइप आफ ब्रोकरिंग बिजनिस ! "दिवाकर बडबडाया था—" और तुम्हारा सुरेश जोशी भी इस बिजनिस मे चला गया है। नाव टोटली चेंज्ड परसन ! ' उसने अगला पैग भर लिया था।

जया का मन हुआ था, फिर सवाल कर ले--"दलाली की जितनी किस्म बतलायी है इनमे से किसकी दलाली करने लगा है सुरेश ? " पर नही पूछा। उठ खडी हुई। किचिन की ओर जाते-जाते उसने दिवाकर की बडबडाहट फिर सुनी थी —' ब्रोकरिंग डिफरेंट टाइप का है, पर ब्रोकर लोक का यूनिफाम एक ही हो गया है—य ई सुफेद खादी !

और फिर एक दिन यह भी मालूम हो गया था जया को —काह की दलाली करता है सुरश जोशी। वह फिर आया था। वही ड्रेस, वही चमचमाता जिस्म। सीधा दिवाकर के पास पहुचा था। जया ने रुचि नही ली थी, पर न चाहत हुए भी उनकी बातचीत सुनी थी उसने। वह डाली का पता पूछन आया था। कह रहा था—"अभी उसकी जरूरत है। ठीक तरह कोई मिल ही नही पा रही। सोचा कि डाली के लिए अच्छा रहगा।"

"तुमको डाली का ऐड्रेस होना था ? " दिवाकर जैसे भुनभुनाकर बोल पडा था—"देता हू आई कन गिव यू बट डाट टेल मी एब्बाउट याअर वलगेरिटी ! ' उसने पता दे दिया था डाली का। सहमा हुआ चला गया था सुरेश। उस दिन तो यह तक पता नही चला था कि किसलिए आया किसलिए गया ? बस अगर काई नयी बात थी तो सिफ यह कि जल्दी म जया को नमस्ते करना भी भूल गया था वह। ऐसे जस भाग रहा हो।

ज्यादा समझने की जरूरत नही हुई थी। जया कडवाहट स भर उठी। दिवाकर से कह गय सुरेश क शब्द काना म अथ पकात हुए खुदखुदा रह थ— अभी उसकी जरूरत है ठीक तरह काई मिल ही नही पा रही जलील कही का ! अपन ही भीतर खौल उठी थी जया। यह लायन चेंज की है उसने। मन मे ढेर गालिया उमड आयी थी "

दर तक मन खराब रहा था जया का। इसलिए ज्यादा कि उम सुरश नही—सफेद खादी का कुरता पाजामा दिख रहा था इस कुरते-पाजाम

के साथ आजादी की पूरी लडाई जडी है। पवित्रता का एक धम ग्रथ !
उसे ओढकर यह आदमी ? छि छि !

उसके बाद अस्पताल मे एक बार देखा था उसे। दिवाकर की तबीयत की खबर सुनकर आया था। दिवाकर था बेसुध। डाली और जया थी वहा। उसकी उपस्थिति असह्य हो उठती थी जया के लिए। इसके बावजूद उस समय कुछ कहा नही था। तब भी नही जब वह जया को एक ओर ले जाकर पूछने लगा था—"जया ! दिवाकर बाबू के लिए मुझसे कहना मत भूलना ' एक पल सकोच मे थमा था फिर बुदबुदाया—'कुछ पैसे वैसे की जरूरत तो नही है ?'

पैसे की बहुत जरूरत थी। उसके बाद बढती ही गयी है आज तो सवाल बन गया है कि क्या होगा ? जया कुछ कहे, इसके पूर्व ही डाली आ गयी थी। उसने कुछ घूरकर सुरेश को देखा था फिर जया को। पूछा—"क्या बात है ?

"कुछ नही। ऐसे ही। मैं पूछ रहा था कि कुछ मेरा मतलब है पसे-वैसे की जरूरत तो नही है ?"

'नही ! 'डाली ने एकदम कहा था। इस तरह जसे उसे थप्पड मारा हो। 'होएगा तो हम इदर है मिस्टर सुरेश। घाबरने का नेइ ! " फिर कुछ इस तरह सुरेश को घूरा था उसने कि वह ठहरा नही। कहा, "ऑलराइट ! चलता हू, फिर भी मेरी जरूरत हो तो तुम्हारे पास मेरा ऐड्रेस है ही डाली एम० एल० ए० रेस्ट हाउस म फोन करके तलाश भी करवा सकती हो।'

वह चला गया था। डाली ने दात भीचकर कहा था— बास्टड ! दल्ला !"

जया सहमी खडी थी। दिवाकर की बीमारी हालातो और लोगो के व्यवहार ने सिफ डरा रखा था, बल्कि हमेशा के लिए मन म एक सहम बैठ गयी थी

डाली न कहा था— सिस्टर ! इस कुत्तर मे एक भी क्वाइन लेन का नई। अबी किसी नेता स, कान्ट्रैक्टर से, बिजनिसमन से—ले-के आएगा, अन्नाइट म आके बोलेंगा—अबी रातपाली प चलने का ! हरामी वही

था।''

जया सिहर उठी थी। मन हुआ था कि रो पड़े पर रोने के लिए भी तो हालात मौका नहीं देते। कैसी अजीब बात? आदमी रोना चाहे तो रो नहीं पाता। हंसी—सिर्फ वहम!

आज भी कुछ वैसी ही स्थिति है। जया रोना चाहती है। खूब, हिचकियां भर भरकर रोना चाहती है—वह भी संभव नहीं।

पर रोना क्या चाहती है? किसके लिए? अपने लिए सुरेश जोशी के लिए? बीते समय के लिए? दिवाकर के लिए या मौजूद समय के लिए?

लगता है—किसी के लिए नहीं। जया सिर्फ अपने उस हिसाब के लिए रोना चाहती है, जो लगातार गलत होता गया है। कोई आंकड़ा सही नहीं। जितना लिखा सब गलत! सब बेतरतीब! सब बेमतलब!

कभी कहीं, कुछ भी ठीक तरह नहीं हो सका।

या शायद जया ने ही नहीं किया? या जया का किया—था ही नहीं। सिर्फ समय का किया था। और समय का जोड़ अभी नहीं हो सकता। वह उम्र के आखिर में होता है। पलक मूंदते हुए आखिरी आंकड़ा दर्ज किया जाता है जीवन-गणित का। अभी टोटल नहीं होगा।

और सचमुच ही टोटल नहीं हुआ था उस शाम डाली आयी थी। बहुत जल्दी में थी। दवाएं दी थीं दिवाकर को दूर से देखा था, फिर नकद दो सौ रुपये देते हुए बोली थी— अबी हम जाता है सिस्टर!'

अरे रुको ना डाली?

'नहीं नहीं, रुकने का नहीं। रुकने से घड़मड़ हो जायेगा!' डाली ने जवाब दिया था—चली गयी। जया ने किचिन की खिड़की से देखा था। डाली जल्दी जल्दी एक टैक्सी में जा समायी थी

सब कुछ साफ था! बेहद साफ। जया थोड़ी देर सोच विचार से खाली होकर खड़ी रही थी। और अगले दिन तो एकदम खाली हो गयी

था। मालूम हुआ था कि रात लौटते वक्त डाली का ऐक्सीडेंट हो गया। बहुत पिये हुए थी। अस्पताल में दाखिल है। खबर लेकर डाली के साथ वाले फ्लैट में रहने वाला युवक आया था। कहा था— 'आपको बुलाया है डाली ने।''

''आऊंगा।'' जया ने जैसे रोकर जवाब दिया था।

'और मैडम '' लड़का फुसफुसाया था—डाली ने बोला है कि दिवाकर साहब है वाई ?

''हां हां।'

''उनको य न बतलाइए।''

जया फिर स्तब्ध। यह डाली भी खूब है। खुद न जाने कितनी घायल, किस हाल में पड़ी होगी, पर दिवाकर को लेकर सोच रही है। डाली से जया ने घृणा करनी चाही है पर किसी बार नहीं कर सकी। यह और भी अजीब बात है। जिस्मफरोश औरत से जया नफरत नहीं कर पा रही है ?

दिवाकर इस कदर गुमसुम हो चुका था कि बातचीत के नाम पर जया उसे सिर्फ सूचनाएं दिया करती थी। वह सुनता, पलकें झपकता, खामोश रह जाता। यह भी कम अजीब था ? बेहद बोलने वाला दिवाकर अचानक इस क़दर गुमसुम ?

जया जानती थी इस खामोशी की ज़बान। सिर्फ ऊब। अपने आपसे और सबसे। दिवाकर अब कुल यही। आदमी से अधिक एक अहसास बनकर रह गया है। खुद के लिए भी, दूसरों के लिए भी।

डॉक्टर साफ कह चुके हैं— बस समझिए कि जितने दिन चल जाय— चलेगा।''

'मगर डॉक्टर ? '

डॉक्टर शंकरन ने कहा था—''देखो जया, आदमी दवाओं से उतना जिन्दा नहीं रहता, जितना जीने की इच्छा से रहता है और दिवाकर ने यह इच्छा शायद खत्म कर ली है।''

जया सुन गयी थी

डॉक्टर शंकरन ने जितना बना था, दिवाकर की दोस्ती निबाही थी।

आठ-दस दिनो मे देखने आ ही जाया करता। पर दिवाकर उसकी हर मिठास, हर तसल्ली के जवाब मे अक्सर भडक जाया करता। अपमान कर देता, कई बार गालिया बकने लगता। इसके बावजूद शकरन जितना बडा डॉक्टर, उतना बडा इसान। एक बार इसी तरह कुछ ऊल जलूल बक गया था दिवाकर। शकरन को विदा करते समय जया बोली थी—"डाक्टर ! ये अब आपे म नही हैं। इन्हे माफ कर दीजिएगा !"

'मैं समझ सकता हू मिस जया ! खूब समझता हू।" शकरन न उदास आवाज म जवाब दिया था—'यह आदमी न जिन्दगी सह पा रहा है न मौत ! इस हालत म एब्नामल हो जाना नेचुरल है।'

और जया न ही कितनी बार नही कहा था दिवाकर से। एक बार तो झुझला ही पडी थी वह— 'तुम्ह हो क्या गया है दिवाकर ? तुम—तुम इस कदर उखडे हुए हो कि दूसरो के प्यार का आदर करना भूल गये हो। बीमार हो, तो इतना परेशान होने की क्या जरूरत है ? इलाज हो रहा है—ठीक हो जाओगे, पर "

जया के होठो पर दिवाकर के एकमात्र जिन्दा हाथ की हथेली आ ठहरती थी। वह बडबडाने लगा था— नो नो जया, दिस इज इम्पासिबुल ! आई नो—आई कैन नाट सरवाइव ! अबी हम जानता है कि हम मरेंगा ! हमको मरना ही चाहिए ! फारगेट अबाउट मी ! ये डॉक्टर-वाक्टर अब स्साला कोई नही चाहिए ! नाव फिनिश ! ये खेल खतम हो गया ! आय एम रन आउट नाव !'

"पर दिवाकर ?' जया ने कुछ बोलना चाहा था। दिवाकर बुरी तरह हाफता हुआ चीख पडा था— प्लीज ! डाट टेल मी लाय ! मेरे को वठ मती बालो ! हम मर चुका है। अबी, काये को जिन्दगी इमेजिन करने का ? नई नई, इटस आल नानसेंस ! डाट टेल मी लाय ! ' वह बच्चो की तरह रोने लगा था।

और जया लाजवाब हो गयी। उठ आयी थी वहा से। इस तरह अपने कमरे म आयी थी जैसे भाग रही हो किसी भीड द्वारा फेंके जाते पत्थरो से बचाव के लिए भाग रही हो !

डाली के सन्देश पर जया ने सिर्फ सूचना दी थी दिवाकर को—"एक काम से जा रही हू दिवाकर। थोडी देर बाद लौटूगी। पानी का गिलास भरा रखा है—ले लेना !"

वह कुछ नही बोला था। अक्सर नही बोलता था। सिर्फ पलकें खोलता, देखता फिर मूद लेता।

जया अस्पताल पहुची। डाली को देखकर चीख निकल गयी थी मुह से। एक हाथ गायब हो चुका था गले पर बहुत बडा जख्म। कनपटी तक खिंचा हुआ। विद्रूप हो गयी थी डाली। पर वह रोयी नही थी। जया से कहा था—'हमको माफ करना सिस्टर ! गॉड ने मौका नही दिया कि तुम लोग की खातिर कुछ करता ! अब तो अगाडी के छह आठ महीना इधर से मूव ही नही कर सकेंगा।"

जया रो पडी थी। डाली ने कहा था—'अबी रोने का नई। हिम्मत करने का। दिवाकर का जित्ते दिन लाइफ दे सकेंगा—अच्छा काम होयेंगा। उसके लिए कुछ करना, प्रेयर है सिस्टर ! अबी गॉड का प्रेयर तो सब कोई करता है, पन मजा तो तब है जब आदमी का प्रेयर करना सीखने का। क्या ?"

जया ने आसू पोछे थे। डाली की हालत ने बहुत कुछ कह दिया था। वह सब, जो डॉली कह नही सकती थी। अस्पताल से लौटी तो 'कुछ करना होगा' के अलावा न कुछ सोच पा रही थी, न कुछ सुन पा रही थी और इस करना होगा का कारण एकमात्र दिवाकर नही था—बहुत कुछ था

दवाएं थीं, राशन था, फ्लैट के खर्चे थे, बिल्डिंग सोसायटी की देनदारी थी बहुत कुछ था।

और करेगी क्या जया ?

करने के लिए कुछ भी नही। जो है, वह पाना आसान नही। न परिचय, न सम्बन्ध, न साधन। तब ?

इस तब के जवाब में अचानक उसे सुरेश जोशी याद हो आया था। उस दिन की बात क्या वह जया के लिए कुछ कर सकेगा ? दिवाकर के लिए ? किसी के लिए भी मरे—किसी भी बहाने।

डर लगता था सुरेश से। उससे ज्यादा दिवाकर से डरती थी। सारे

जीवन भर म टहलता रहकर भी जया को लेकर नक की कल्पना नही कर पाया था। सुरेश स या ही मिली सहायता भी दिवाकर का हिला डालने के लिए काफी होगी।

पर उसके अतिरिक्त कोई चारा नही। उसी का फोन करना पडा था। खबर पाते ही आ पहुचा था वह। खादी से रगा हुआ। दरवाजा खोलत ही कुछ सहम के साथ जया ने उसे देखा था। क्या हो रहा था ऐसा? यह सुरेश अजाना तो नही है? पर उस दिन अजाना ही लगा था केवल उसी दिन क्या—हमेशा ही अजाना लगता था। अजनबी। *ऐसा क्या होता है - जया को कारण मालूम नहीं। क्या सवेदना टूट कर* किसीस परे हो जाए तो वह आदमी अजनबी लगन लगता है?

जया ने फुसफुसाकर कहा था— तुम यही रको। एक मिनट।' वह भीतर चली गयी थी। दिवाकर आखें मूदे था। पता नही लगता कि सोया हुआ है या जाग रहा है

लौटी। उसी तरह फुसफुसाकर कहा था—'मेरे कमरे म पहुच जाओ। वही बात करेंगे।

सुरेश चोरचाल मे उसके कमरे म जा पहुचा। जया ने दरवाजा हौले से बन्द किया था फिर अपने कमरे मे आ गयी। वह जया के बेडरूम मे ही नही बड पर लटा हुआ सिगरेट के कश खीच रहा था आखो म सवाल, जैसे पूछ रहा हो— 'क्या बात है?' पलको के कानो पर एक व्यग्य चस्पा। जैसे कहा जा रहा हो—' शायद तुम भी लायन बदलने वाली हो "

जया ने आखें चुराकर, बहुत दबी आवाज मे बात शुरू की थी— 'बहुत जरूरी काम था।'

समझ सकता हू।" वह भी उतनी ही दबी जबान म बोला। चुप हो रहा।

'तुम ता जानते ही हो सुरेश

' सिफ यह बतलाओ, मुझे क्या करना है?' उसने बीच मे ही कहा।

जया न थूक का घूट निगला। बाली— 'कुछ पसा चाहिए!' डाली से बहुत मदद थी, मगर

"उसका ऐक्सीडेंट हो गया है—मैं जानता हू।' सुरेश जोशी न

सिगरेट का कश लिया था। जया की तरफ देखना बन्द कर दिया।

जया न उसे देखा। बोलने की कोशिश मे सास कुछ चढ गयी थी—"मुझे कुछ रुपया चाहिए।"

"मैं इन्तजाम कर दूगा—" वह बोला—"कितना चाहिए?"

"यही कोई डेढ दो हजार।"

"हो जायगा।

जया धरती की तरफ देखने लगी थी।

कुछ देर व चुप रह। कमरे म सिफ सिगरेट का धुआ उडता रहा। जया अपनी ही सासो की आवाज सुनती रही।

"कब चाहिए?"

"आज या कल वहुत मुश्किल म हू। दिवाकर की दवाए और "

"समझ सकता हू।

वह फिर चुप हो गयी।

वह उठ पडा।

जया भी उठी।

वह जया को आर अनदेखा किए, जाने लगा।

जया उसके सामन आ गयी—"तुम "

"मैं आज रात आऊगा" सुरेश जोशी न कहा था—"यही कोई दस के करीब।"

?"

मिलोगी ना?

"हा।" जया न सिर झुका लिया। डर लगा कि रो न पडे। अपने आपको कठिनाई से थामे रखा।

"ठीक है। वह जान के लिए बढा—रुक गया।

जया ने डरते हुए उसे देखा।

वह मुसकरा दिया।

जया न आखें झुका लीं। लगा कि वदन म फोडे निकलने लगे हैं। घिन।

"सुनो?" वह फुसफुसाया।

"यह सब दिवाकर "

"नही। मैं नही चाहती "

'ठीक किया।" वह रुक गया—सोच म।

जया न घबराकर उसे देखा।

'सोच रहा हू—किस तरह करू ?'

" " जया सिफ देखती रही।

"मैं नही आऊगा।" उसन कहा।

जया डर गयी "मैं बहुत दिक्कत मे हू सुरेश "

"नही वह बात नहीं '

"तब ?"

'मैं सोच रहा हू कि ? ऐसा करो—ग्यारह बजे तुम आ जाओ।'

'कहा ?"

'नीचे—रोड पर। मैं मिलूगा।"

वह बोल नही सकी।

सुरेश आगे बढ गया—"चलता हू।"

जाने स पहले उसन याद दिला दिया था—"ग्यारह बजे। "

कार भी सफेद सुरेश जोशी भी सफेद और जहा जया गयी थी—वह जगह भी सफेद। उनके मन भी सफेद।

जया ने जैसे हलाहल पी लिया था नया नही था वह अनुभव। अन्तर केवल यह कि पहले उसे जबरदस्ती पिलाया गया था इस बार उसने खुद पिया। सुरेश जोशी ने रकम पूरी दिलवायी थी। सब ठीक तरह चलने लगा था। बहुत कुछ कज था, वह भी चुकाया जाने लगा काफी कुछ चुक भी गया था।

डेढ साल जिन्दा रहा था दिवाकर। बडी नाटकीय जिन्दगी जी कम्बख्त ने। जया मौसी बोली थी—जिस दिन मरा भी नाटक से, नाटक के साथ।

'याद करती हू ता अब भी हैरान रह जाती हू रे ! कैसा अजीब आदमी था दिवाकर ? बहुत दिना तक मैं समझती थी कि उसे कुछ मालूम ही नही है—पर सब मालूम हो गया था रे उसे ! सब !'' जया मौसी ने फिर से पग भर लिया था—कहा—''डर मत, अब कहानी मे कुछ खास नही है सोते-सोते ही सुना दूगी सब !'' उन्हाने एकदम से नीट ही गले उतार ली थी।

अजित भौचक्का सा बैठा रहा था। मन हुआ था कहे -- 'मौसी, तुम कहती हो कि दिवाकर न जी पा रहा था, न मर पा रहा था या यो कि कितनी ही बार मर मर कर जीता रहा था पर तुम भी क्या कम जी मर रही हो। पर चुप। सिर्फ सुनना होगा। एक सन्ताप भी है मन मे। आज कहानी पूरी मिल जायेगी। कितना भटका है इस कहानी को पाने के लिए ?

जया मौसी ने गिलास टेबल पर रखा। पटकने की तरह रखा। गरदन मोडकर बाह से होठ पोछ लिए। बोली—''बहुत बदमाश था दिवाकर ! कम्बख्त ने कभी कुछ बताया ही नही कि सब जान चुका है। जान चुका है कि मैं कहा कहा जाती हू ? किसलिए जाती हू ? और तो और—तुझे एक मजेदार बात बतलाऊ ? वह मरने से कुछ दिन पहले सुरेश से भी अच्छी तरह बोलने लगा था। ऐसे, जसे चाशनी गिरा रहा हो। मीठी मीठी।' उन्हाने एक गहरी सास लेकर पलकें मूद ली थी होठ फडफडाते गये थे। ऐसे, जैसे बन्द पलको के भीतर विगत का दृश्य रह हो—बयान कर रहे हो --कहा था—''एक दिन मुझसे बोला कि बोतल लाऊ मैं कभी उसे बोतल नही देती थी ना ? बस, उस दिन जिद पकड गया—नही बोतल सामने रखकर पियूगा। वायदा किया था कि ज्यादा नही पियूगा। वह चुप हो गयी।

अजित की नजर चेहरे पर

' मुझसे कहा कि बैठ जाऊ सामने। मैं बैठ गयी। उसने बोतल से पग बनाये—कहा कि पियू। मैं भी पियू। 'मौसी ने एकदम पलकें खोली '' मैं समझती थी ना कि उसे कुछ नही मालूम। मैं पीने लगी थी। खूब पीती थी। गाहको के साथ पीना ही पडता था रे ! मैंने ना-नुच की तो उसने

कहा कि मुझे मालूम है तुम पीती हो। "खूब पीती हो! " उन्होंने पलकें मूद ली थी होठ उसी तरह सब कुछ कह जा रहे थे।

जया मौसी रुआसी होकर दिवाकर को देखती ही रह गयी थी। वह बोला था— 'डान्ट वरी जया, आई विल नाट शाउट! तुम पी-आ। टक इट !"

जया ने कापते हाथो गिलास उठा लिया था।

'चियर्स !' उसने एकलौते जिन्दा हाथ को थोडा उठाया। जया न न चाहते हुए भी गिलास टकराया। दोनो कुछ पल खामोश रहे। उसके बाद दिवाकर कहा था—"अबी हमको अपने मरने म थोडा डाउट था पर अब कुछ नही। अब कोई डाउट नही। नाव आय एम टोटली फिनिश्ड। इसलिए आइ विल नॉट शॉउट—इविन आइ विल नॉट वीप! ' वह फिर से घूट लेने लगा था।

पहला घूट लेन के बाद डरी, सहमी और घबरायी हुई जया सिफ उसे देख रही थी। लग रहा था आज वह और दिनो की अपक्षा बदला हुआ है। यह बदलाव ही डर का कारण।

उसने पैग खाली किया, "अरे, तुम इसको खलास करो! बी विचक! खलास करो !"

जया ने घबराकर शराब गले उतार ली।

नाव लिसिन जया! " वह नये पैग से घूट लेता हुआ बडबडाये गया— 'तुम अक्खा साल से कालगल का काम करता है—आई नो। दिल हुआ था तुमको शाउट करने का। पर दिमाग से काम लिया। तुम गिल्टी नेही है। गिल्टी हम है। अबी हमका देखन का—जीता भी नही है, मरता भी नही है। किस माफिक का लाइफ? अन अगर य डैथ है—तो किस माफिक का? इट इज मीनिंग लेस! सब्ब स्साला मीनिंग लस! पन हम स्साला नासेंस। मीनिंग लेस मे मीनिंग ढूढता था। इस लिए मार खाया! किसी और से नही। तुमस नही, डाली से नही, एन्ड ए ड उस स्साला दल्ला सुरेश स भी नही। हम हमारे से ही मार

खाया ! देखो तो, कईसा भेजा फिरा हमेरा ! तुम्हारे का दखता था—खुश हाता था ! समयता था कि तुम्हारा मीनिंग है। हमारा मीनिंग लैस लाइफ मे एक तुम्हारा मीनिंग हैं ! 'रुककर उसन जया का पैग भर दिया—पटियाला पग। इनकार करती रही थी जया पर वह बोला "नही लेना पड़ेगा। हमारी खातिर लेना पडेगा। टेक इट !'

वह झूमने लगा था। जया के माथे मे घूम शुरू हा रही थी।

उसन कहा था— ता ये जा स्साला, मीनिंग और मीनिंग लस के लफडे मे हम स्साला फालतू डेढ साल विताया ! नाव—अबी हम बोलता है कि जिन्दगी का एक मीनिंग होना चाहिए ! हम कोई मीनिंग नही बनाया। तुम्हारा मीनिंग बनाना मागता था पन य जो हमारा डड लाइफ है ना, इसने तुम्हारे को भी मीनिंग लस किया ! तुम समझता है ना सब—ह्वाट आय वान्ट टु से ?'

जया ने स्वीकार मे सिर हिलाया।

"सो ?" वह एक पल चुप रहा। गिलास फिर खाली कर डाला—अबी कल हमको शकरन बोला कि तुम तुम मा बनेंगा !

जया के हाथ का गिलास अनायास ही छलक गया था। बहुत चाहा था उसन कि मा न बने, पर बात हाथ से निकल गयी थी। डॉक्टर शकरन ने ही जाच करके बतलाया था मैडम ! अब इस मामले म कुछ नही किया जा सकता ! 'पर डॉक्टर शकरन से कह नही सकी थी जया कि दिवाकर से यह सब छिपाया जाय।

वह भयभीत हाकर दिवाकर को देखन लगी थी। आखें भर आयी।

दिवाकर की आखो मे चमक थी। बोला— जब सुना तो जया—रेयली आय वाज वैरी ग्लैड ! आय डॉट बादर कि तुम्हारे बच्चे का बाप कौन है ? पर तुम मदर बनेंगा—इटस ऐ बिग प्यूज़र फार मी ! "

जया ने देखा कि उसकी सासा की रफ्तार बढ रही थी। पता नहीं खुशी से या झुलसाते क्रोध मे। कह गया था— नाव थिंक इन दिम व—जया ! हमारा लाइफ खुलास हो गया। हम खलास किया। किसी का दाप नहीं। हमी स्साला खतम किया बिमको ! अन तुमन भी लाइफ का मीनिंग लैस बनाया पर ग्रेट गॉड ! वह है किदर-न किदर है ! हम उमका कभी

नही माना। कभी रिक्नाइज नही किया नाव आय एम कॉन्विस्ड ! देयर इज गॉड ! देयर इज समथिंग ! तो अभी जरा समझने का—जया। तुम्हारा बच्चा एक चाम है। एक मीनिंग ! तुम्हारा मीनिंग लस लाइफ को एक मीनिंग दिया है भगवान ने ! अन्डरस्टैन्ड ? मो नेहर मिस दिस चास ! क्याअ ! इसको पढाओ, लिखाओ—खूब खूब बढाओ ! और बचाओ कि कही हम लोक की तरह उसका लाइफ मीनिंग लस न बन जाये ! वट जया, यू ना—? यू गाट समथिंग ! यू गाट मीनिंग ! "

विस्मय से जया देखती रह गयी थी उसे। यह दिवाकर के भीतर बैठा हुआ एक और दिवाकर ? वह दिवाकर जो शायद सारे जीवन अथ ढूढने के लिए भी भटका, छला गया या दूसरा को छलता रहा !

दिवाकर ने खाली गिलास रखा—आखो की कोरा पर झलक आय आसू पोछ लिए

जया कुछ बोल नही सकी थी—सिफ श्रद्धा से उसे दखती ही रह गयी थी। कितना बडा दिवाकर ? कितना ऊचा ? कितना जीवत ? लगता है अपगता के बावजूद उस सारे वातावरण पर फैला हुआ है। एक सूरज की राशनी जसा। उजला साफ—चमचमाता हुआ।

'अम तुमको एक एनवलप दिया था जया ?' सहसा उसने सवाल किया था और जया को याद आ गया था लिफाफा। कहा—हा !

'उसको लाने का !'

जया लिफाफा लिकाल लायी थी।

दिवाकर न उसे खोला था। भीतर के कागजात निकालने स पहल उसन एक पग और भर लिया था। जया ने टोका था उसे। उसने कहा था— नो, जया ! आज हमको टोकने का नही—हम खुश है ! "

जया किचिन मे चली गयी थी। दिवाकर ने उसे देखा फिर कागज खोलकर उन्ह पढता रहा। महसा एक सतोष भरा मुसकान चेहरे पर उग आयी थी। उसन पूरा गिलास शराब से भर लिया था खाली किया। तीखी जला देने वाली झुलसन पूरे जिस्म मे बिखर गयी। मुह सिकोडते बनाते दिवाकर ने फिर से दूसरा गिलास गले गले भरा और

एक ही वार म ढाल गया सहसा चीखन लगा था वह— जया ! "

जया दौडी आयी थी किचिन से।

दिवाकर की आखें कुछ अस्वाभाविक रूप से फली हुई थी। उनकी सुर्खी गहराई हुई। सासें तज। डरी हुई जया उसक सिराहन आ बठी थी— क्या बात है ? क्या हुआ दिवाकर ?

हा हा ! हा-अ ! ' वह कुछ कुछ हाफ्ता हुआ बालन लगा था— 'देखो ! यह—यह डाक्यूमटस ! नाव यू आर द आनर आफ दिस फर्नेट ! '

'प्यार ?'

'यू शट्अप् ! टोकने का नही। मरे को बोलन दा सिफ ! आइ वाट टु टॉक ऍ ? वह जबडे कसने लगा था। शायद उसे तक्लीफ हो रही थी। बहुत तक्लीफ आवाज घरघराती हुई। जया काप उठी थी डर क मारे पर वह जम जया की कलाई अपन इकलौत हाथ म जकडे रह गया था— 'तुम लाइफ की मीनिंग दागी—डाट फारगेट जया—यू गाट मीनिंग ! यू गॉट 'उसकी आवाज अचानक गिर गयी थी। इसके साथ ही जकड ढीली हो गयी। उसका चेहरा विकृत होने लगा। बदन पसीन स नहा गया।

जया चीख पडना चाहती थी। निश्चित ही दौरा झल रहा था वह ! पर चीख सिफ सिसकी बनकर रह गयी। दिवाकर एकदम शात हा गया। आखें टगी रह गयी।

जया जार स सिसकती रह गयी थी दिवाकर खत्म हो गया था पर कहा खत्म हुआ ? जया उसकी इच्छा पूरी करने लगी थी। उसकी इच्छा — जया का शुभ।

जया मा बनी। यही—तुली की मा। तुली क लिए ही सब कुछ बचकर वह बम्बइ से दिल्ली चली आयी। तुली का होस्टल मे भेज दिया था। पिता की जगह दिवाकर का नाम।

कुछ ही दिनो बाद सुरश जोशी वीमार हो गया था। क्षय और दमा। दलाली का कारोबार ठडा पड गया। उसके बाद जया के कोठे पर ही पडा रहता। जया के सहारे।

फिर वह सहारा भी तोड बैठा था सुरेश। शराव न तुडवा दिया। इतनी ज्यादा पीने लगा था कि जया मौसी को कहना पडा था उसस— तुम यहा का माहौल खराव करते हो सुरश। किसी और जगह रहन का कर लो।'

ये सख्ती, वेरुखी और अपमान सुरेश जाशी के लिए अजान नही थे। आदी हो चुका था वह। पता नही किसी काने मे पडा रहता था बीच म वह जया मौसी के नाम से जेवर मागने ग्वालियर भी जा पहुचा था। कई कई माह गायव भी हो जाया करता। कभी किसी वेश्या के साथ। जव कही स पीने का आसरा न वनता तो जया मौसी के पास आ पहुचता।

वोलते-वोलते ही सो गयी थी जया मौसी। अजित लौट पडा था। कुछ देर पहले सच ही कहा था उन्होंने— अव कहानी मे कुछ खास नही है।" सचमुच नही था उस पल यही लगा था अजित को।

सवकी कहानी के साथ यही लगा है मिन्नी, सुनहरी, मोठे वुआ, रेशमा और वटनिया सबकी कहानिया इसी तरह खत्म हुई हैं। कुछ खास नही के साथ।

पर एसी कहानिया कितना कुछ छोड जाया करती है अपन पीछे। अजित साचता है तव भी सोचता था, आज तक सोचता है। गणित का कोई एक आकडा ही तो जीवन नही हा जाता? विभिन्न आकडे तव तव जीवन-खाते मे दज होते रहते है जव तक कि आदमी न गुम जाए। वहा भी सासो के आकडे।

उसके बाद वहुत दिना नही मिला था जया मौसी से। इच्छा होती कि मिले पर अलसा जाता। इसीलिए ना कि कहानी वीत गयी—अजित का जैसे एक आकडा पूरा हो गया। एक हिसाव, जो लगा रखा था उसन।

पढी हैं ? सब वही तो कहते है, जो व नही हैं। यही कुछ बतलाना नियम भी है, नियति भी।

उनकी सब कहानिया भी यही हागी। इसी नियति वाली। पर अपनी ही कहानियो को झूठा बनाना भी आदमी का स्वभाव है। नियति भी।

कुरते की ऊपरी जेब मे खत है। जया का खत। लगने लगा है जसे वह एक भारी वजन उठाय हुए है। मन मे झल्लाहट। पूछेगा—' क्या तुम जानती नही मौसी कि इस तरह खत भेजकर मुझे बुलाना ठीक नही है! आखिर अब मैं वह अजित नहीं हू जो कभी घर आगन और गली का अजित था ? अब मैं एक दूसरा आदमी हू। अजित स आगे एक लेखक सामाजिक जीवन जीने वाला आदमी "

पर नही। कह नही सकेगा। इतना साहस जया मौसी के सामन करना सहज न होगा। यो भी वह शायद अजित से ज्यादा ही समझती हैं जीवन को। ठीक है कि लेखक के नाते अजित ने काफी मान कमा लिया है पर जितना जीवन उन्होंने जिया है, समझा है, उतना अजित ने नही। बहुतो के पास शब्द नही होत। हो, तो बयान कर पान का सलीका नही होना इतने भर से व क्या नासमझ हो जाते हैं ? नही!

यह सब पूछने की जरूरत नही होगी। सीधा सा एक सवाल थोप देगा। "जल्दी बोलो, क्या काम है ? मुझे एक जगह जाना भी है। तुम्हारी चिट्ठी मिलन के कारण ही आ गया तुमन लिख ही इस तरह दिया था ?"

बस जल्दी ही छुट्टी मिल जायेगी

अजित आखिरी सीढी पर था। दरवाजा बन्द है। एक पल के लिए अचरज हुआ था। इतनी सुबह जब सूरज सिर चढ आया है, सडका पर जिन्दगी बेसुधी छोडकर दौडने लगी है तब दरवाजा बन्द ?

फिर लगा था कि मूख है। भला उन जया मौसी को लेकर क्या सोचता है जो इस वक्त आफिस के लिए निकलने लगती थी ? वह खडा है चन्दारानी के कोठे पर। सारी रात जागता रहा होगा य कोठा, अब निंदियाया हुआ। एसे, जसे कालिखभरी जिन्दगी सुबह ही मुह छिपा *जाय! कैसा अजीब अहसास होता है जब निलज्जता—लज्जित होने का* नाटक करे ?

खट खट-खट ।

दरवाजा खुलता है। कस्तूरी सामने। मुसकराती है। अजित के भीतर भय तेज हो जाता है। विश्वास नहीं होता कि इन योजनाबद्ध मुसकानों से लोग उलझ जाते हैं? लगता है कि ये मुसकान थूक के एक लौंदे की तरह चेहरे पर आ गिरती है।

'मौसी ?"

'भीतर है।"

वह भीतर पहुंचता है।

'आ! आ-जा!" वह कहती हैं। आश्वस्त अजित दीवान की ओर देखता है। मौसी वहां नहीं हैं। आवाज आ रही है, परदे के पीछे से। फिर वह बाहर आती हैं। आश्चर्य! नहायी धोयी उजली एकदम तरोताजा! विस्मय और अविश्वास से उनका चेहरा ही देखता रह जाता है।

"क्या देख रहा है?" वह उसके सामने आ बैठी है।

"कुछ नहीं " वह हड़बड़ाकर कहता है। फिर जैसे याद हो आता है, उसे जल्दी से जल्दी विदा होना होगा। पूछता है—"किसलिए बुलाया था मौसी!'

'बैठ—बतलाती हूं।'

"नहीं, मुझे जल्दी जाना होगा। एक जगह "

वह उदास हो जाती हैं एकदम तब तब तो शायद तू साथ नहीं चल सकेगा।"

'कहां?'

"तुली को रिसीव करने। "

"तुली? " वह एकदम से बैठ गया है कुरसी में। तुली—नैनीताल की वह बच्ची? सब कुछ भूलकर एकदम से उस नन्हें चेहरे के साथ जुड़ गया है। बरसों पहले का वह चेहरा स्वार्थ फिर से लपेट लेता है उसे। वह जायेगा। कहानी के आखीर को जरूर देखना चाहेगा

वह आयी हुई है आठ दिन रुकेगी।" जया मौसी कहे जाती हैं, 'अब एक ही साल तो बचा है होस्टल में। फिर उसे यहीं कहीं रहना होगा " उनके स्वर में चिंता घुल गयी है।

"यहा ?" वह चौककर इधर उधर देखता है, फिर बुदबुदा पडता है—'यहा "

"वही सोच रही हू बहुत परेशान हू अजित। समझ मे नही आता कि किस तरह कैसे, क्या करूगी ? "

'और अभी कहा रखोगी ?"

"अब छोटी नही है वह हायर सकेण्डरी पास कर रही है सब जानती समझती है। फिलहाल मैंने एक बन्दोबस्त किया है।" अभी कुछ और कह कि कस्तूरी उनके सामने चावी ला रखती है। वह चावी उठाकर खडी हो जाती है। चल, वहा तक न चल सके तो नीचे तक तो चलेगा ही 'वह आगे बढ गयी है। बडबडाती हुई—' तुमने बेकार ही परेशान किया अब भला मैं क्या समझू कि मेरी तरह तेरी जिन्दगी तो एक कमरे की है नही ? सोच ही नही सकी '

'नही नही कोई बात नही है। मैं चलता हू।"

"पर तेरे प्रोग्राम का क्या होगा जो पहले से तय है ?" वह सीढिया उतरते हुए पूछती जाती हैं।

उसके लिए मैं माफी माग लूगा--इतना जरूरी भी नही है "

वे फुटपाथ पर आ गये हैं अजित सहसा फिर चोर हो गया है। कोइ देख ले ! चन्दारानी को तो सारा इलाका जानता होगा अगर कोई अजित को भी पहचानता हो तो

"तू मुझसे जरा हटकर खडा हो जा टैक्सी तो कोई दीखती नही ?" वह बडबडाती है।

"क्यो ?

"अरे मेरा क्या ! पर हो सकता है कि तुझे जानने वाला कोई

"अरे नही मौसी ! " उसने एकदम कहा है। अपने आप पर आश्चयचकित है—इस कदर झूठ बोल सकता है वह ? क्या वह भी यही कुछ नही चाहता ?

वह सिर्फ मुसकराकर देखती हैं। सहसा टैक्सी रोक लेती हैं। व समा जाते है। टैक्सी नयी दिल्ली स्टेशन दौडी जा रही है। अजित कितनी ही बार उन्हे देख चुका है व एकदम बदली हुई है। कोई सोच भी नही

सकता कि वह चन्दारानी एकदम असभव !

पर यह झूठ कितने दिना निवाह सकेंगी ? अजित के भीतर एक सवाल उगा है और शायद यही सवाल उनके भीतर। वहुत गभीर बैठी-बैठी सहसा गडबडाने लगी है—" अब यहा आकर एडमीशन लेगी तो किस तरह यह सब छिपाया जा सकेगा—समझ मे नही आता ?"

अजित खुद चक्कर मे। क्या कहे ?

वह बडबडाये जाता है, "अब यह सब यह सभी कुछ छोडना होगा !" मेरा खयाल है कि दिल्ली भी छोडनी ही पडेगी "

अजित को लगता है कि ठीक है यही ठीक होगा। जया मौसी किसी और शहर म, और तरह जिन्दगी बिता सकेंगी। तुली का किसी अच्छे घर मे पहुचा सकेंगी

" पर इस सबस भी क्या होगा ? " वह बुदबुदा रही है—"क्या और शहरो म जान पहचान वाले नही मिल सकते ? नही नही, इस आइडिए म वहुत दम नही है " वह एक गहरी सास लेकर चुप हो गयी है।

अजित शान्त बैठा है। विडस्क्रीन पर आखें ठहराये। सब कुछ भाग रहा है। शहर, दुकानें मद-औरत, बच्चे, जानवर उसके भीतर एक हसी उठ आयी है। शोर करते, चीखते-चिल्लाते यह भाग दौड किस किस आकडे को लिए चल रही है—कोई नही जानता ! पर चल रही है किसके दिमाग म कौन-सा गणित है—दूसरे का जानकारी नही। पर धरती के सफेद वर्कों को काला करते हुए, हर आदमी दौडा जा रहा है सुबह का अखबार वतलायगा इन भागते-हाफन लोगो म से कितने किसी बस, कार या थ्री ह्वीलर से टकराकर शहीद हुए घायल हुए या ठोकर खाकर मर गये और कितना की लाटरिया खुल गयी ?

कोई भी ता नही जानता कि अगले पल का आकडा क्या है ? इसके बावजूद सबके पास एक पूरा अयमेटिक।

और जया मौसी भी आकडे लगाये जाती है—" वैसे नही है कि किसी और शहर मे कोई पहचानन वाला निकल बेकार का वहम ! यही रास्ता है। तुली के लिए एक रास्ता।

अजित एक गहरी सास खीचकर सहसा तुली के बारे मे सोचने लगा है। बहुत खूबसूरत बच्ची। अब तो काफी बडी हो गयी होगी। लगभग जवान। लगता है जसे जया मौसी का बचपन उतर आया होगा अक्स की तरह! कसा लगेगा जब उसे देखेगा। बिलकुल जया मौसी ही होगी शायद आवाज भी तो काफी कुछ मिलती थी। अब उम्र के साथ आवाज गाढी होकर एकदम मौसी जैसी हो चुकी होगी

'पर यही तो एक बात नही है रे! " अचानक जया मौसी जस फिर से कापती आवाज म बडबडायी हैं—" कुछ समय बाद तुली के लिए लडका खोजना होगा तब यह झूठ किस तरह टिक सकेगा? सोच कर कपकपी होती है जिस्म म "

अजित खामोश है। जया मौसी लगातार आकडे चलाये जा रही है। विडस्क्रीन के बाहर भीड दौडती जा रही है हस्पताल, रिक्शे वाले, सवारिया कारवाले, इस टक्सी का ड्राइवर और शायद खुद अजित अजित का मन होता है कि जया मौसी को याद दिलाय—' भूल गयी मौसी? तुम्ही ने तो कहा था— उन सीढियो को लेकर सोचन—माथा पटकने म क्या लाभ जिन्हें चढकर तू कोठे तक आ पहुचा था? अब तो सच यह कोठा है—सामने! ' पर बोला नही।

कौन सोच पाता है सिफ सामने को! दृश्य वतमान को। सब हिसाब लगते है आगत के। जमीन पडती है विगत से। यही जीवन यही ससार!

टैक्सी दौडी जा रही है

भीड भी

" कुछ और सोचना होगा " जया मौसी बुदबुदाती हैं टक्सी की स्पीड सहसा थम गयी है। व उतरते हैं। जया मौसी जसे अजित को भूलकर तेजी से प्लेटफाम की ओर लपक पडी हैं पीछे पीछे अजित उसक दिमाग म है सिफ तुली। कसी होगी? और उससे भी आगे—क्या घटगा तुली के जीवन म?

शोर, भीड, आपाधापी इक्वायरी पर सवाल—'बम्बई डीलक्स कब पहुचती है बम्बई? '

सब आगत

" मैंने फिलहाल तो डिफेंस-कालोनी मे एक फ्लेट ले लिया है। सारा सामान लगवा दिया है। इस तरह कि उसे लगे, मैं वही रहती हू। अभी एकाध सप्ताह उसके साथ वही रहूगी " जया मौसी कह रही है। निगाह ट्रेन चाट पर आने वाली ट्रेना का समय खोज रही है

अजित उस वदहवासी के माहौल को लगभग बदहवास होकर ही देख रहा है।

जया मौसी बुदबुदाती है—" ट्रेन तो सही वक्त पर आने वाली है। लिखा था—स्पेशल वागी है लडकियो की। जानकारी की जाय ?" और अजित के उत्तर से पहले ही इक्वायरी काउन्टर की ओर लपक पडी है। पूछती है। •

आप के लिए खबर हैमडम।" काउन्टर वाला जानकारी देता है— 'बच्चे जिस बोगी मे ह वह मथुरा म रुक गयी है। अगली ट्रेन से जुडकर आयेगी।"

जया मौसी स्तब्ध 'क्या ?"

"बच्चे घूम रह हागे मैंडम । कोई परेशानी वाली बात नही है।'

"ओह ! " जया मौसी जसे आश्वस्त हुई है। शरीर की सारी तेजी फुर्ती गायब ! एक पल व्यग्र सी खडी रहती है। कहती है—"चल अजित। उस बीच किसी रेस्तारा मे बैठेंगे।"

वे आराम से चल पडे हैं पर स्टेशन की दौड—ज्यो की-त्यो है। एक लहर अगर किनारे का थप्पड खाकर कुछ पल के लिए गति रोक दे तो जीवन-सरिता की गति तो नही रुक्ती। वह उसी तेज-तेज वह जाती है

वे प्लटफाम पार कर आये हैं अचानक जया मौसी फिर बडबडाने लगी है—'तूने कुछ सोचा अजित ?"

'क्या ?' वह चौंक गया है।

'वही, तुली के बारे मे ' वह कह रही हैं— 'मेरी तो समझ मे ही नही आता कि आगे किस तरह, क्या करना होगा ? "

अजित के पास उत्तर म चुप है।

' कुछ-न-कुछ तो सोचना ही होगा।" वह कह रही हैं।

सहसा अजित कह डालता है—' जो सोच लोगी, वही हो—यह ता जरूरी नही है मौसी ? अब तक जो कुछ सोचा था, क्या वही हुआ ? "

एक गहरी सास लेकर उन्होंने जवाब दिया है—" हा तू ठीक कहता है रे। पर यह सोचना भी तो आदमी से नहीं छूटता। " बोलते-बोलते थमी हैं—"शायद यह सोचना, गणित बिठाते रहना भी तो हमारी नियति है—क्यो ?"

अजित जवाब नही दे पाता। कौन दे सकेगा ?

रामकुमार भ्रमर

जन्म 2 फरवरी 1938 । घर में।

आधुनिक उपन्यासकारों म अग्र ी - नाक- प्रिय कथाकार भ्रमर जी को रसिक पाठकों और छिद्रान्वेषी समीक्षक न समान रूप से स्नेहादर दिया है। युग के यथार्थ की विचार पूर्ण व्याख्या रोचक शैली और सहज प्रवाह पूर्ण भाषा भ्रमरजी की रचनाओं की खास पहचान है। उनके अनेक वहदाकार उपन्यासों को मुक्तकंठ से सराहा गया है। इसी कड़ी म प्रतीक्षारत प्रेमी पाठकों को अब समर्पित है उनकी यह नवीनतम रचना - आंगन गलियां चौबारे।

भ्रमर जी 1959 से 1965 तक युगधर्म' के साहित्य सम्पादक रहे फिर कादम्बिनी' के सम्पादकीय विभाग म और आजकल स्व तंत्र लेखन म लगे हैं। दो बार अखिल भारतीय प्रेमचन्द पुरस्कार पा चुके भ्रमरजी की अनेक रचनाओं के अनुवाद देशी विदेशी भाषाओं मे हो चुके हैं। असंख्य पाठक उन्मुकता से इनकी आगामी रचनाओं की प्रतीक्षा म रहते हैं।